इस्लाम का स्वरूप

डॉ. मंगाराम

विवेक पब्लिकेशन्स, अलीगढ

प्रथम संस्करण

2001 ई.

इस्लाम का स्वरूप

(एक तार्किक विवेचन)

।। लेखक ।।

डॉ० मंगाराम

एम० ए० (इतिहास एवं अंग्रेजी), एल-एल० बी०, पी-एच०डी०

रीडर व पूर्व अध्यक्ष - इतिहास विभाग

श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़

विवेक पब्लिकेशन्स, अलीगढ़

लेखक के बारे में ....



डॉ० मंगाराम

लेखक को भारत और विश्व के इतिहास के स्नातकोत्तर शिक्षक होने के साथ-साथ प्राच्य विद्या शास्त्र और इस्लाम सहित अन्य सैमेटिक मजहबों का गहरा ज्ञान है। आप युवाकाल से ही देश के विभिन्न सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक संगठनों तथा अनेक शैक्षणिक संस्थाओं से जुड़े हुये हैं। आपकी अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। साथ ही विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में आपके अनेक लेख भी प्रकाशित हो चुके हैं। आपने इतिहास में एक दर्जन से भी अधिक शोधार्थियों को पी-एच० डी० भी कराई है।

लेखक का भारतीय संस्कृति, भारतीय राष्ट्रवाद और विश्व मानवता में अटूट विश्वास है। अपनी शैक्षणिक उपलब्धियों के कारण आपने भारत के साथ-साथ रूस, उत्तरी कोरिया आदि देशों का काफी भ्रमण भी किया है। प्रखर राष्ट्रवादी विचारों के कारण आपको अनेक बार कारावास में भी रहना पड़ा है। आप वैदिक शोध संस्थान, अलीगढ़ के निदेशक भी हैं तथा आपने वैदिक साहित्य का गहन अध्ययन किया है।

– प्रकाशक

प्रकाशक :
विवेक पब्लिकेशन्स
3/39, समद रोड, अलीगढ़ (उ० प्र०)
फोन : (0571) 505581

प्रथम संस्करण : नवम्बर '2001

मूल्य : 110/- रुपये

मुद्रण संयोजन :
क्रिएशन्स 'द प्रिण्टर्स होम'
मथुरा नगर, अलीगढ़
फोन : 506930, 503062

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

इस्लाम धर्म नहीं, अपितु मजहब है। यह एक पैगम्बर- मुहम्मद और एक किताब-कुरान पर आधारित है। यह किसी को अनुभूति करने की अनुमति प्रदान नहीं करता। इस्लाम सार्वभौमिक प्रेम और भाईचारे का दावा तो करता है, किन्तु व्यवहार में यह प्रेम और भाईचारा केवल मुसलमानों तक ही सीमित है।

धर्म प्राणीमात्र में सद्भाव स्थापित करता है। इसमें 'आत्मवत सर्वभूतेषु' की भावना विद्यमान होती है। मज़हब प्राणीमात्र तो दूर, मानव मात्र में भी विभेद करता है। इस्लाम मानवमात्र को 'मिल्लत' और 'कुफ्र' एवं भूमि को 'दारूल इस्लाम' और 'दारूल हरब' में विभक्त करता है। इसमें 'कुफ्र' को 'मिल्लत' और 'दारूल-हरब' को 'दारूल-इस्लाम' में परिवर्तित करने के लिए 'जिहाद' आवश्यक बताया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक 'इस्लाम का स्वरूप' में मुसलमानों की सामाजिक व्यवस्था, मजहबी स्वरूप और राजनैतिक स्थिति को प्रदर्शित किया गया है। इस्लाम मज़हब और राजनीति का समन्वय करता है। इसीलिए दुनिया का कोई भी इस्लामिक देश पंथनिरपेक्ष नहीं हो सकता।

इस पुस्तक के लेखन का मुख्य उद्देश्य यह है कि विश्व के सभी गैर-मुस्लिम – हिन्दू, ईसाई और यहूदी बुद्धिजीवी, राजनैतिक नेता, प्रशासनिक अधिकारी और जनता इस्लाम के वास्तविक स्वरूप को जान सकें। अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामिक आतंकवाद के परिपेक्ष में पुस्तक की उपयोगिता अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

इस पुस्तक को लिखने का मुख्य उद्देश्य सत्य को प्रकट करना है, किसी की भावनाओं को आहत करना नहीं है। पुस्तक को वस्तुपरक ढंग से लिखा गया है। पुस्तक में इस्लामिक मूल स्रोतों के साथ-साथ विश्व के विभिन्न विद्वानों के विचारों को भी प्रस्तुत किया गया है।

इस पुस्तक के लेखन में मेरे प्रेरणास्रोत प्रो० बलराज मधोक और अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में शिया थियॉलोजी के प्रोफेसर डा० इर्तिजा हुसैन रहे हैं। साथ ही मैं अपनी विदुषी पत्नी डॉ० (श्रीमती) निशा वार्ष्णेय, एम० ए० (इतिहास एवं हिन्दी), एल-एल० बी०, पी-एच० डी०, इतिहास प्रवक्ता का कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस पुस्तक के लेखन में मुझे न केवल अनेक विचार ही प्रदान किये, अपितु मेरी भाषा को भी परिमार्जित किया। इस पुस्तक के लेखन में मेरी पुत्री कु० मोनिका वार्ष्णेय का भी असीमित सहयोग रहा है।

मैं अपने परम मित्र और सर्वोच्च न्यायालय, नई दिल्ली के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गोपालकृष्ण जौहरी, एडवोकेट का भी विशेष रूप से कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस पुस्तक में निहित तथ्यों और तर्कों का गहन अध्ययन कर उन्हें यथासंभव संशोधित किया है।

अन्त में मैं मैसर्स विवेक पब्लिकेशन्स की श्रीमती बीना शर्मा और मैसर्स क्रिएशन्स 'द प्रिण्टर्स होम' के स्वामी श्री प्रभात शर्मा का भी आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके सहयोग और परिश्रम से इस पुस्तक का प्रकाशन सम्भव हो सका।

- डॉ० मंगाराम
134, प्रीमियर नगर कालोनी
अलीगढ़ - 202 001
सम्पर्क : (0571)2412983

दीपावली
कार्तिक कृ० 15, सं० 2058 वि०
दि० 14 नवम्बर, 2001

इस्लाम का स्वरूप

चीन के राष्ट्रपति माओत्सेतुंग ने कहा था कि प्रत्येक कम्युनिस्ट को चाहिये कि वह इस सच्चाई को समझ ले कि "राजनैतिक सत्ता का जन्म बन्दूक की नली से होता है।"[1] वाशिंगटन इरविन ने अपनी पुस्तक 'मुहम्मद की जीवनी' में लिखा है कि मुहम्मद ने भी मदीना पहुँचकर मुसलमानों के लिए ज़ारी किये गये अपने घोषणा-पत्र में कहा था "जो मुसलमान मेरे मज़हब का प्रचार करे, वह तर्क-वितर्क में न पड़े। तलवार ही मेरे मज़हब में जवाब है। जो आदमी मेरे मज़हब को स्वीकार न करे, तर्क या सन्देह करे, उसका शिरच्छेद किया जावे। तलवार ही स्वर्ग की कुन्जी है। जो मुसलमान मेरे मजहब को फैलाने में मरता या मारता है, उसके लिये स्वर्ग का द्वार खुला है। इस्लाम के लिये मरना और कष्ट उठाना नमाज़ और रोज़े से भी बढ़कर है। जो मुसलमान इस्लाम के निमित्त युद्ध में मारा जाता है, उसके सारे पाप क्षमा कर दिये जाते हैं। वह सदा के लिये मृगनयनी अप्सराओं के साथ आनन्द भोगता है। काफिरों को इस्लाम में लाने के लिये तलवार से बढ़कर दूसरा उपदेश नहीं है।"[2]

इस्लाम 'एक किताब-एक पैग़म्बर' पर आधारित मज़हब है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'शान्ति'। किन्तु यह भी निर्विवाद रूप से सत्य है कि इसके कारण पृथ्वी पर सर्वाधिक अशान्ति, रक्तपात और हत्यायें हुई हैं। इस्लाम के उद्भव और विकास में तलवार का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसके अनुयायी हलाल के खन्जर को अपना क़ौमी निशान मानते हैं। इसके प्रवर्तक ने अपने अनुयायियों के एक हाथ में अपनी मजहबी किताब और दूसरे हाथ में तलवार दे दी, जिसका वे अभी तक भरपूर प्रयोग करते रहे हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार गिबन के अनुसार- "मुसलमानों ने एक हाथ में तलवार तथा दूसरे हाथ में क़ुरान ग्रहण करके ईसाई तथा रोमन साम्राज्य के ऊपर अपना राजसिंहासन स्थापित किया था।"[3] वस्तुतः इस्लाम खड्ग प्रधान मज़हब है। गिरिलाल जैन लिखते हैं - "मुसलमान क़ौम शुरु से ही ताकत में बहुत विश्वास रखती है। इस्लाम तलवार की मदद से ही फैला है। उनको सैन्य शक्ति के महत्व का बहुत अहसास है। इसलिये इस्लाम तलवार की ही भाषा समझता है।"[4]

---

1. माओत्सेतुंग, लाल किताब, युद्ध और रणनीति की समस्यायें, ग्रन्थ 2, पृष्ठ 224, 1938
2. वाशिंगटन इरविन, मोहम्मद की जीवनी, पृष्ठ 17
3. गिबन, दी डिक्लायन एण्ड फॉल ऑफ दी रोमन एम्पायर, खण्ड तृतीय, पृष्ठ 56
4. गिरिलाल जैन, नकली सैक्यूलरिज्म बनाम राष्ट्रीयता, पृष्ठ 74

इस्लाम का आधार मुहम्मद और कुरान है। इसके अनुयायियों को मुसलमान कहा जाता है। सच्चा मुसलमान वह है जो लोक और परलोक को मुहम्मद की आंखों से देखे। इस्लाम में मुहम्मद के कथनों और कार्यों का विशेष महत्व है। मुहम्मद की कथनी कुरान कहलाती है जो आयतों के रूप में इल्हाम मानी जाती है। इनकी करनी का संकलन विभिन्न हदीसों में किया गया है। कुरान और हदीस इस्लाम के स्रोत हैं। मुसलमानों की मान्यता है कि कुरान सिद्धात पेश करता है और हदीस इसका व्यवहारिक रूप है। कुरान के रूप में मुहम्मद के द्वारा अल्लाह बोलता है और हदीस के द्वारा अमल करता है।[5]

मुसलमानों की धारणा है कि कुरान खुदाबंद अल्लाह ताला की नसीहत और उनके अल्फाज हैं जिन्हें प्रारम्भ में खजूर के वृक्ष की छाल, चमड़े के टुकड़ों, ऊटों की हड्डियों और पत्थरों पर लिखा गया। इसे जिब्राइल फरिश्ते द्वारा मुहम्मद साहब को सातवीं सदी में तेइस वर्षों तक खुद बयान किये गये अल्लाह के शब्दों का एक मुकद्दस दस्तावेज माना जाता है। प्रायः यह समझा जाता है कि कुरान अरबी भाषा में है, किन्तु इसमें चौहत्तर भाषाओं के शब्द पाये जाते हैं। इसमें 114 सूरा और 6660 आयतें हैं। इसकी आयतों में परस्पर मतभेद भी देखने को मिलता है। साथ ही कुरान में ऐसी अनेक आयतें हैं जो मुस्लिमों को गैर-मुस्लिमों से झगड़ा करने के लिये प्रेरित करती हैं। बगँला देश की प्रसिद्ध लेखिका डॉ० तस्लीमा नसरीन कहती हैं, "मैं कुरान पर नजरशानी नहीं चाहती, बल्कि यह कहती हूँ कि अब कुरान की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि अब यह बेअमल और बेमौका हो चुकी है।"[6]

✓ इस्लाम धर्म नहीं अपितु एक मज़हब है। धर्म समाज को मर्यादा प्रदान करता है। इसमें प्राणिमात्र के कल्याण की कामना की जाती है। यह मनुष्य को दूसरों से वही व्यवहार करना सिखाता है जिसकी अपेक्षा वह दूसरों से करता है। मत, सम्प्रदाय या मज़हब धर्म के पर्यायवाची नहीं हो सकते। धर्म मानवता के उदात्त सिद्धान्तों एवं शाश्वत मूल्यों पर आधारित होता है। मज़हब का आधार संकीर्ण होता है, जबकि धर्म का आधार सार्वभौमिक होता है। मज़हब एक पैगम्बर और एक किताब पर आधारित होता है। धर्म प्राणिमात्र में सद्भाव उत्पन्न करता है, जबकि मज़हब अपने पैगम्बर और उसके द्वारा दी गई किताब में आस्था रखने वालों तक ही बन्धुत्व की भावना रखता है तथा

---

5. बलराज मधोक, मुस्लिम समस्या–पुनरोदय, पृष्ठ 18

6 तस्लीमा नैसरीन का 'द स्टेट्समैन' में प्रकाशित साक्षात्कार जिसका कुछ अंश 'अमर उजाला', आगरा दि० 3.6.94 म प्रकाशित हुआ

अन्यों के प्रति कटुता और वैमनस्य सिखाता है।

इस्लाम "एकं सत्, विप्रा बहुनाम् बदन्ति' अथवा "सर्वपंथ समभाव" की उदात्त वैदिक विचारधारा के पूर्णतः प्रतिकूल है। 19 वीं सदी में ईरान में बहाउल्लाह द्वारा बहाई मत स्थापित करने का यही प्रमुख कारण था कि उन्होंने ईश्वर की एकता और मानवता की एकता पर ज़ोर दिया। इस्लाम में अल्लाह को एक तो माना जाता है किन्तु उसे केवल पैगम्बर मुहम्मद के बताये मार्ग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये अल्लाह मानवमात्र का न होकर केवल इस्लाम के अनुयायियों का ही है।

इस्लाम मानवमात्र को कम से कम दो भागों में बाँटता है – प्रथम विश्वास रखने वाले तथा दूसरे अविश्वास रखने वाले। यह विभाजन सामाजिक, जातीय अथवा सांस्कृतिक नहीं, अपितु आध्यात्मिक है। इस्लाम कोई "जियोग्राफिकल' कौम नहीं है।[7] इसलिये मित्रता, सहचारिता अथवा एक देशवासिता – ये सभी सम्बन्ध इस्लाम के सम्बन्ध से गौण माने जाते हैं।[8] प्रो० बलराज मधोक के शब्दों में, "इस्लाम का धर्म में निहित नैतिक मूल्यों और उदात्त भावना से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। इसकी अपनी कोई आध्यात्मिक परम्परा भी नहीं है। यह एक विस्तारवादी राजनैतिक विचारधारा है जिसे इसके प्रवर्तक ने अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिये अपनाया, मज़हब का नाम दिया और कुरान के रूप में अपने अनुयायियों को दिया।"[9]

इस्लाम एक मज़हबी राजनैतिक आन्दोलन के रूप में विकसित हुआ जिसमें मज़हब राज्य और समाज से अभिन्न था।[10] इस्लाम के प्रारम्भिक चरण में मदीना में मुहम्मद साहब द्वारा स्थापित "मस्जिद-ए-नबवी' मज़हब के साथ-साथ सामरिक योजना का केन्द्र थी। इस प्रकार यह तथा अन्य सभी मस्जिदें इस्लामिक देशों में राजनैतिक उद्देश्यों के लिये प्रयोग की जाती रही हैं।[11] अतः यह कहना सर्वथा उचित है कि इस्लाम अध्यात्मविहीन मज़हब के बारीक पारदर्शक बुरके में लिपटा साम्राज्यवाद ही है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, "सारे संसार में किसी भी धर्मपंथ ने इतना अधिक रक्तपात नहीं किया तथा दूसरों के प्रति इतनी क्रूरता नहीं बरती जितनी अरब के पैगम्बर द्वारा संस्थापित मज़हब इस्लाम ने। कुरान में यह सिद्धान्त है कि जो इसकी शिक्षाओं को नहीं मानता उसे मार

---

7. गुरुदत्त, देश की हत्या, पृष्ठ 45
8. वही, पृष्ठ 53
9. प्रो० बलराज मधोक, उपरोक्त, पृष्ठ 63
10. जॉन एल० एस्पोजिटो, इस्लाम एवं राजनीति, पृष्ठ 11
11. ओनेजा इफ्तिखार, 'प्लेसेज फॉर पॉलिटिक्स' लेख से, फ्रन्टलाइन पत्रिका, 19.11.93, पृ० 21

डालना चाहिये। उसे कत्ल कर देना ही उस पर रहम करना है तथा बहिश्त जहाँ सुन्दर हूरें तथा सभी प्रकार के भोग-विलास मिलते हैं, उसे प्राप्त करने का पक्का रास्ता है, काफिरों को कत्ल करना। मनुष्य जितना अधिक स्वार्थी होता है, उतना ही अधिक अनैतिक बन जाता है। यही बात इस जाति के विषय में भी सच है।" [12]

इस्लाम में तर्क का कोई स्थान नहीं है। इसके प्रवर्तक ने यह कहकर कि वह अल्लाह का अन्तिम दूत है और कुरान उस अल्लाह का अन्तिम ज्ञान है, किसी प्रकार के तर्क-वितर्क और पुनर्विचार का रास्ता सदैव के लिये बन्द कर दिया।

ईश्वरीय ज्ञान बुद्धि और तर्कसंगत होता है। वह जितना प्राचीन होगा, उतना ही स्वीकार करने योग्य होगा। ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि-निर्माण के समय मानव को प्राप्त होना आवश्यक है। तभी इसका मार्गदर्शन हर व्यक्ति को प्राप्त होगा। कुरान तो सृष्टि उत्पत्ति के करोड़ों वर्ष बाद आई। अतः उसे ईश्वरीय ज्ञान नहीं माना जा सकता। यदि प्रत्येक कथित ईश्वरीय ज्ञान केवल काल विशेष का ही मार्गदर्शन करता है तो प्रत्येक पश्चात्वर्ती कथित ईश्वरीय ज्ञान भी केवल तत्कालीन समय की आवश्यकतायें पूरी करेगा। साथ ही कुछ समय पश्चात् उसके निरस्त होने की सम्भावना बनी रहेगी। यह इस्लाम में निहित विरोधाभास ही है कि वह अपने पूर्ववर्ती ईश्वरीय ज्ञान को तो मन्सूख करता है, किन्तु स्वयं मन्सूख होने की प्रक्रिया के प्रभाव से बचता है।

इस्लाम में मुहम्मद साहब को अल्लाह का पुत्र नहीं, अपितु दूत माना जाता है, जबकि ईसाइयत में ईसा महोदय को ईश्वर का पुत्र मानते हैं। वैदिक धर्म में परमात्मा को परमपिता माना जाता है, जबकि इस्लाम में अल्लाह को पिता नहीं कहा जा सकता। मुसलमान अल्लाह को अपना मालिक और अपने को उसका बन्दा मानते हैं। अल्लाह को पिता मानना एक शिर्क (पाप) है, जिसके लिये जहन्नम ही सजा है।

इस्लाम मूर्तिपूजा से घृणा करता है, किन्तु इस्लाम में भी फकीर-पूजा व उनकी कब्र-पूजा के रूप में इस्लामिक मूर्तिपूजा प्रारम्भ हो गई। [13] स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में, "यह एक विचित्र बात है कि इस संसार में इतने अधिक विरोधाभासों के साथ ऐसा कोई अन्य मज़हब प्रारम्भ नहीं हुआ जैसा कि इस्लाम। मुसलमानों को न चित्रकला से प्रेम होता है और न ही मूर्तिकला अथवा संगीत से। इससे बाह्य आकृतियों को बढ़ावा मिलता है।..... किन्तु पैगम्बर की मृत्यु को दो सौ वर्ष भी व्यतीत नहीं हुए होंगे कि

---

12. स्वामी विवेकानन्द, ग्रन्थावली, भाग 2, पृष्ठ 352-53, लंदन में दिये एक भाषण का अंश
13. अरुण शौरी, ए सैक्यूलर एजेन्डा, पृष्ठ 355-56

इस्लाम में फकीर-पूजा प्रारम्भ हो गई।" [14]

इस्लाम में कितनी सहिष्णुता है, इसे स्पष्ट करते हुये स्वामी विवेकानन्द कहते हैं, "इस्लाम मुसलमानों को उन सभी को मारने की अनुमति देता है जो उनके मज़हब को नहीं मानते। कुरान में यह स्पष्ट कहा गया है, "गैर-मुस्लिम को मार दो यदि वे मुस्लिम नहीं बनते हैं तो।' उन्हें अग्नि और तलवार को समर्पित कर दो। अब यदि हम किसी मुसलमान को कहें कि यह तो गलत है, तो वह स्वाभाविक रूप से पूछेगा, "आप यह कैसे जानते हैं ? आप कैसे जानते हैं कि यह सही नहीं है ? मेरी किताब कहती है कि यह सही है।'[15] इसी प्रकार स्वामी जी का कथन है कि इस्लाम में यह मान्यता है कि कल्मा "ला इलाह इल्लल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" के परे जो भी चीज है, वह न केवल बुरी ही है अपितु उसे अविलम्ब नष्ट भी कर दिया जाना चाहिये, प्रत्येक स्त्री या पुरुष जो इसमें पूर्ण रूप से विश्वास नहीं करते उसे मार दिया जाना चाहिये, प्रत्येक चीज जो इस पूजा से सम्बन्धित नहीं है, उसे तुरन्त तोड़ दिया जाना चाहिये तथा प्रत्येक पुस्तक जो कुछ अन्य शिक्षा देती है, को जला देना चाहिये। पैसिफिक से लेकर अटलांटिक महासागर तक 500 वर्षों तक सारे विश्व में जिसके कारण रक्त बहा, वही इस्लाम है। [16] असगर अली इन्जीनीयर लिखते हैं कि कुछ लोगों का मत है कि इस्लाम ऐसे विचारहीन उग्रपंथियों का मज़हब है जो इसे सर्वाधिक आक्रमक ढंग से प्रचारित करते हैं, यहाँ तक कि यदि आवश्यक हो तो मानव-जीवन के मूल्य पर भी। [17]

इस्लाम मुसलमानों को गैर-मुसलमानों के साथ, चाहे वे इनके सगे सम्बन्धी ही क्यों न हों, भाई-चारे और बराबरी के आधार पर सह-अस्तित्व की अनुमति प्रदान नहीं करता। यह कहना नितान्त भ्रामक है कि "मजहब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना', क्योंकि इस्लाम का आधार ही गैर-मुसलमानों के साथ बैर रखना और उन्हें समाप्त करना है।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश भी अपने ऐतिहासिक शाहबानो निर्णय में इस्लाम के बारे में कोई अच्छी राय नहीं रखते।

14. दी कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द, वो० VI, पृष्ठ 60
15. वही, वो० II, पृष्ठ 335
16. वही, वो० IV, पृष्ठ 126
17. असगर अली इन्जीनियर, जस्टिस, वीमैन एण्ड कम्यूनल हारमॉनी इन इस्लाम, प्रीफेस पृष्ठ 3

मुहम्मद का प्रारम्भिक जीवन

मुहम्मद साहब का जन्म अरब के मक्का नामक नगर में 20 अप्रैल, 570 ई० में हुआ। वे उस कुरैश कबीले से सम्बद्ध थे जिसे मक्का स्थित काबा के देवालय के प्रबन्ध का अधिकार प्राप्त था।[1] उनके पिता का नाम अब्दुल्ला और माता का नाम आमिना था। जन्म से पूर्व ही मुहम्मद के पिता का देहान्त हो गया। पति की मृत्यु के दुःख से आमिना के स्तनों का दूध सूख गया जिससे मुहम्मद अपनी माँ का दूध केवल सात दिन तक ही पी सके।

जन्म के सातवें दिन मुहम्मद का खतना कर दिया गया। खतने में उनकी मूत्रेन्दिय के अग्रिम भाग की चमड़ी को काट दिया गया। यह प्रथा यहूदियों में प्रचलित थी, जो सम्भवतः हजरत इब्राहीम के समय से शुरु हुई। कुरान में इसका कोई उल्लेख नहीं है।

माँ के स्तनों में दूध न रहने और खतना हो जाने के पश्चात् कुरैश वंश की परम्परा के अनुसार मुहम्मद को लालन-पालन हेतु हलीमा नामक एक वेतनभोगी दाई को दे दिया गया। इसी दाई के दूध को पीकर मुहम्मद बड़े हुए। 6 वर्ष का हो जाने के पश्चात् हलीमा ने बालक को उसकी माँ को वापिस कर दिया। इसके कुछ दिन बाद ही आमिना की मृत्यु हो गई। अब मुहम्मद का पालन-पोषण उनके दादा अब्दुल मुतालिब ने किया। किन्तु दो वर्ष पश्चात् दादा की भी मृत्यु हो गई। अब वे आठ वर्ष की आयु में अपने व्यवसायी चाचा अबूतालिब के संरक्षण में आये। अशिक्षित रह जाने के कारण मुहम्मद अपने चाचा की भेड़ और ऊंटनियों को चराने का कार्य करने लगे। उन्हें कविता, संगीत और चित्रकला से सख्त घृणा थी।[2]

बारह वर्ष की आयु में मुहम्मद अपने चाचा के साथ व्यापार के लिये सीरिया गये। सीरिया उस समय एक ईसाई देश था। वहाँ वे नेस्टर मत के एक ईसाई पादरी बहीरा के सम्पर्क में आये जिसने उनके मन में मूर्तिपूजा के विरूद्ध घृणा उत्पन्न की।[3] पच्चीस वर्ष की आयु में मुहम्मद एक अत्यन्त सम्पन्न सौदागरनी खदीजा के यहाँ नौकर हो

1. मैक्सिम रोडिन्सन, मुहम्मद, पृष्ठ 38
2. डी० एस० मारगोलिओथ, मुहम्मद एण्ड दी राइज आँफ इस्लाम, पृष्ठ 59
3. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, भारत में इस्लाम, पृष्ठ 7

गये। खदीजा की आयु इस समय 40 वर्ष से ऊपर थी। वह विधवा थी। दो विवाह कर चुकी थी। उसके दो लड़के और एक लड़की थी।[4] आयु वैषम्य के बावजूद भी खदीजा और मुहम्मद में एक दूसरे के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो गया और 594 ई० में वे दोनों विवाह-सूत्र में बँध गये। दोनों से छः सन्तानें हुई, किन्तु इनमें से केवल उनकी पुत्री फातिमा ही जीवित रही। जब मुहम्मद साहब लगभग 38 वर्ष के हुये, अकेले रहना अधिक पसंद करने लगे। 15 वर्ष तक खदीजा के साथ वैवाहिक जीवन व्यतीत करने के पश्चात् एक बार 610 ई० में वे बेहोश हो गये। इसे "इल्हाम' माना जाने लगा। यह कहा गया कि ऐसी अवस्था में अल्लाह जिब्राइल नामक फरिश्ते के माध्यम से मुहम्मद में कुरान की आयतें उतारते हैं। ऐसे समय में उनका चेहरा पीला पड़ जाता था, बदन काँपने लगता था तथा हाथ-पैर ऐंठने लगते थे। मुँह से गुड-गुड की आवाज होती थी। तब खदीजा उन्हें कम्बल उढ़ाती थी तथा होश में लाने के लिये मुँह पर पानी के छींटे मारती थी। इतिहासकार गोल्डसैक अपनी पुस्तक "मुहम्मद इन इस्लाम' में उनकी इस अवस्था को मिर्गी का दौरा मानते हुए लिखते हैं कि मुहम्मद साहब अपने मिर्गी के दौरों को जिब्राइल फरिश्ते से भेंट बताते थे।[5]

ऐसे समय में जबकि मुहम्मद साहव को कुछ लोग पागल कहते और कुछ उनकी जान तक लेने को तैयार हो जाते, खदीजा ही उन्हें ढाढस बँधाती थीं। उसी ने सबसे पहले मुहम्मद साहब को अल्लाह का पैगम्बर माना और वह ही कल्मा-'ला इलाह इल्लल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' पढ़कर सबसे पहले स्वयं मुसलमान बनी। इसके बाद उनके चचेरे भाई अली, उनके मित्र अबूबकर, उनके दत्तक पुत्र जैद, अली के बड़े भाई जाफर तथा कुछ अन्य लोग थे।[6] 613 ई० में मुहम्मद साहब ने अपने सम्बन्धियों को खाने पर आमन्त्रित किया और खाने के पश्चात् उन्होंने अपने को अल्लाह का दूत और एक नये मज़हब का प्रवर्तक होने की घोषणा की। उन्होंने यह भी कहा कि अली उनका भाई, सहायक और उतराधिकारी है।[7]

मुहम्मद साहब ने अपने चाचा अबूतालिब को भी कल्मा पढ़कर इस्लाम स्वीकार करने को कहा, किन्तु उसने ऐसा करने से स्पष्ट मना कर दिया। इस चाचा की मृत्यु पर मुहम्मद साहब ने उनके लिये अल्लाह से दुआ माँगी, किन्तु बाद में उन्होंने मुसलमानों

---

4. कुरआन मजीद, मुहम्मद का जीवन परिचय, पृष्ठ 20
5. गोल्डसैक, मुहम्मद इन इस्लाम, पृष्ठ 22
6. डा० एस० इर्तिजा हुसैन, इस्लाम का उदय और लक्ष्य, पृष्ठ 94
7. वही, पृष्ठ 95

को अपने पूर्वजों के लिये दुआ माँगने के लिये इन्कार कर दिया। यहाँ तक कि उन्होंने अपनी माँ की कब्र पर भी दुआ माँगने से मना कर दिया।

अपने सम्बन्धियों में पैगम्बर होने की घोषणा के कुछ दिनों पश्चात् मुहम्मद साहब एक दिन मक्का की सफा नामक पहाड़ी से उच्च स्वर में अपने पैगम्बर होने तथा नये मज़हब का प्रवर्तक होने की घोषणा करने लगे, जिसका वहाँ उपस्थित लोगों ने उनका उपहास किया।

मुहम्मद साहब द्वारा एक अल्लाह के सिद्धान्त को तो कुरैश लोगों ने शान्तभाव से सहन कर लिया, किन्तु उनके द्वारा जब मूर्ति-पूजा का विरोध और मूर्तियों का अपमान किया जाने लगा तो कुरैश अत्यन्त दुःखी हुए। वे इस बात पर क्रुद्ध हुये कि जिस मुहम्मद के न केवल पूर्वज ही मूर्तिपूजक थे, अपितु वे स्वयं शिव और गणेश की मूर्तियाँ बेचते थे और शिव लिंग की पूजा करते थे, वे मूर्तियों का अपमान क्यों करने लगे ? उन्हें आश्चर्य हुआ कि अपने को मूसा आदि पैगम्बरों का उत्तराधिकारी कहने वाले मुहम्मद कभी भी न कोई प्रमाण दे सके और न कोई चमत्कार दिखा सके। उनके एक अनुयायी साद ने उन्हें अल्लाह का दूत न मानने वाले एक कुरैश की हत्या कर दी। इस्लाम में काफिर की यह पहली हत्या थी। मुहम्मद साहब ने साद को बहुत सम्मान दिया। इससे उनका मक्का में विरोध बहुत बढ़ गया। उनका सामाजिक और आर्थिक बहिष्कार भी किया गया। परिणामतः उन्हें न केवल खाद्य सामग्री दुर्लभ हो गयी, अपितु सुरक्षा के लाले पड़ गये।[8]

एक बार मक्का में हज के अवसर पर मूर्ति-पूजा की निंदा करने पर मुहम्मद साहब को कुरैशों द्वारा पत्थर मारे गये। अपने जीवन को असुरक्षित देखकर उन्हें तीन वर्ष तक अपने परिवारजनों के साथ एक पहाड़ की घाटी में सामाजिक दृष्टि से बहिष्कृत जीवन व्यतीत करना पड़ा। उन्होंने विचार किया कि यदि उन्होंने अपने विचारों को मक्का के लोगों पर थोपने का प्रयत्न किया तो उनका जीवन खतरे में पड़ सकता है। अतः उन्होंने घोषणा की कि उन्हें इल्हाम हुआ है कि किसी को उसका मज़हब बदलने के लिये बाध्य न करो। मुहम्मद साहब की इस घोषणा को उनकी रणनीति का अंग मानते हुये प्रो० बलराज मधोक लिखते हैं, "इस्लाम के कई पोषक इस आयत को इस्लाम में मज़हबी सहिष्णुता के प्रमाण के रूप में पेश करते हैं, परन्तु वे भूलते हैं कि यह रणनीति थी। जब स्थिति में अनुकूल बदलाव आया और मदीना और मक्का पर मोहम्मद का

8 वही, पृष्ठ 96

एकछत्र वर्चस्व कायम हो गया तब जो नई आयतें कुरान का अंग बनी, वे इस आयत के बिल्कुल उलट हैं।" [9]

तीन वर्ष तक बहिष्कृत जीवन व्यतीत करने के पश्चात् जब मुहम्मद साहब घाटी से निकल कर मक्का में अपने घर वापिस आ गये, तो दो महीने पश्चात् ही 619 ई० मे उनके चाचा अबूतालिब की मृत्यु हो गई। अबूतालिब की मृत्यु के लगभग 1 माह पश्चात् उनकी पत्नी खदीजा की भी मृत्यु हो गई। ऐसी विषम परिस्थितियों में मुहम्मद साहब ने मक्का को छोड़ देना ही उचित समझा। उसी समय मदीना के कुछ लोग जो काबा की यात्रा करने के लिये आये थे,मुहम्मद साहब से मिले तथा उन्हें मदीना आने का निमन्त्रण भी दिया। मुहम्मद साहब को यह निमन्त्रण डूबते को तिनके का सहारा प्रतीत हुआ।

जब कुरैशों को यह पता लगा कि मुहम्मद साहब मक्का छोड़कर मदीना जाने वाले हैं तो उन्होंने उन पर 15 सशस्त्र व्यक्तियों का पहरा बैठा दिया। किन्तु अली को अपनी जगह सुला कर मुहम्मद साहब अली के भेष में अबूबकर के साथ रात के अंधेरे में भाग निकले। सशस्त्र कुरैशों के कारण वे मक्का से मदीना की विपरीत दिशा में सौर नामक एक पहाड़ी की गुफा में छिपे रहे। मुहम्मद साहब और उनके साथी अबूबकर तीन दिन के पश्चात् सौर की गुफा से निकलकर ऊँट द्वारा मदीना पहुँच गये।

622 ई० में मक्का से मदीना पहुंचने के इसी पलायन को हिजरत कहा जाता है। मुसलमानों का हिजरी सम्वत् इसी घटना से प्रारम्भ होता है।

मदीना पहुँचने पर मुहम्मद साहब का भारी स्वागत हुआ। अबूबकर, उमर, उस्मान और अली तथा मुक्त हुये दास जैद मदीना में उनके सानिध्य में रहने लगे। यहाँ उन्हें अपने मज़हब के प्रचार-प्रसार में भारी सफलता मिली। कुछ ही समय में उन्होंने सम्पूर्ण मदीना के लोगों को अपने मज़हब में दीक्षित कर लिया।

प्रारम्भ में मदीना के धनी यहूदियों को मुसलमान बनाने के लिये मुहम्मद साहब ने आदेश दिया कि यहूदियों का पूज्य स्थान "बैतुल मकदिस'- यरूसलम ही मुसलमानों का किबला होगा और उसकी ओर ही मुँह करके नमाज पढ़ी जायेगी। मक्का-निवास के अन्त तक अर्थात् तेरह वर्ष इसी प्रकार नमाज पढ़ी जाती रही। मुहम्मद साहब के मदीना आने पर भी काफी समय तक यरूसलम की ओर मुँह करके नमाज पढ़ी जाती रही किन्तु जब यहूदियों पर इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ तो "मस्जिदे हराम'- काबा

को ही किबला कह दिया गया तथा उस की ही ओर मुँह करके नमाज पढ़ने का आदेश दिया गया। किन्तु कुरान के ही अनुसार, "पूर्व और पश्चिम अल्लाह ही के हैं, तो जिस ओर भी रूख करो, उसी ओर अल्लाह का रूख है।"[10] यदि यह बात सत्य है तो मुसलमानों द्वारा नमाज के समय 'किबल' की ओर मुँह करने का कोई औचित्य नहीं रह जाता।

मक्का स्थित काबा के देवालय में पत्थर, काष्ठ और चूर्ण की 360 मूर्तियाँ विराजमान थीं जो एक वर्ष के दिनों की प्रतीक थी उन्हें मुहम्मद के आदेश से अली द्वारा तोड़ दिया गया। काबा के अतिरिक्त भी अनेक स्थानों पर मूर्तियाँ थीं। इनमें तीन-उज्जा, लात और मनात प्रमुख थीं। इन देवियों की पूजा समूचे अरब में होती थी। डॉ० इर्तिजा हुसैन लिखते हैं, "ये देवियाँ थीं जिन्हें बहुधा ईश्वर- पुत्रियों की संज्ञा दी जाती थी। इन देवियों के प्रति अंधश्रद्धा ही उनका धर्म था। भारत के विपरीत अरब के मूर्तिपूजकों के पास न कोई धर्म-ग्रन्थ थे न कोई धर्म दर्शन।"[11]

काबा में एक काला पत्थर (संगे अस्वद) भी था, जो आज भी विद्यमान है। यह उल्कोद्भव माना जाता है।[12] यह काला पत्थर अरब राष्ट्र की एकता का प्रतीक था। इसकी धूमधाम से पूजा की जाती थी। वहाँ पर प्रत्येक वर्ष एक बड़ा मेला लगता था, जिसमें दूर-दूर से लोग आकर शामिल होते थे। मुहम्मद साहब के जन्म से सैकड़ों वर्ष पूर्व काबा के इस देवालय की इतनी प्रसिद्धि थी कि सीरिया, ईराक आदि देशों से हजारों यात्री प्रतिवर्ष दर्शन हेतु यहाँ आया करते थे। राहुल सांकृत्यायन लिखते हैं, "पुराणों में भी शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगों में मक्का के महादेव का नाम आता है। कृष्ण पाषाण इन सब विचारों का केन्द्र प्रतीत होता है, यह काबा की दीवार में लगा हुआ है। आज भी उस पर चुम्बन देना प्रत्येक हाजी का कर्तव्य है। यद्यपि कुरान में इसका विधान नहीं, किन्तु पुराण के समान माननीय 'हदीस' ग्रन्थों में उसे भूमक नर भगवान का दाहिना हाथ कहा गया है। यही मक्केश्वरनाथ हैं जो काबा की सभी मूर्तियों के तोड़े जाने पर भी स्वयं ज्यों के त्यों विद्यमान हैं। इतना ही नहीं, बल्कि इनका जादू मुसलमानों पर भी चले विना नहीं रहा और वह पत्थर को बोसा देना अपना धार्मिक कर्तव्य समझते हैं, यद्यपि अन्य स्थानों पर मूर्तिपूजा के घोर विरोधी हैं।"[13] अतः मूर्तिभंजक मुहम्मद

10. कुरआन मजीद, सूरा 2, आयत 115
11. डा० एस० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 5
12. चतुरसेन शास्त्री, उपरोक्त, पृष्ठ 6
13. राहुल सांकृत्यायन, इस्लाम धर्म की रूप रेखा, पृष्ठ 56

ने भी इसे नष्ट नहीं कराया तथा स्वयं इसकी सात परिक्रमा की। आज भी मुसलमान हज्ज के अवसर पर इसका चुम्बन लेते हैं तथा हिन्दू परम्परा के अनुसार इसकी सात परिक्रमा भी करते हैं। फनी पार्क्स लिखती हैं "हिन्दुओं का दावा है कि काबा की दीवार में फँसा पवित्र मक्का के मंदिर का काला पत्थर महादेव ही है। मुहम्मद ने वहाँ उसकी स्थापना तिरस्कारवश की तथापि अपने प्राचीन धर्म से बिछड़कर नये-नये बनाये गये मुसलमान उस देवता के प्रतिश्रद्धा भाव को छोड़ न सके और कुछ बुरे शकुन भी दिखाई देने के कारण नये मज़हब के नेताओं को उस श्रद्धाभाव के प्रति उपेक्षा करनी पड़ी।" [14] विक्रम की प्रथम शताब्दी के प्रारम्भ में रोमन इतिहास-लेखक द्यौद्रस सलस भी लिखता है कि काबा अरब का प्राचीन मंदिर है जो अरबों का अत्यन्त पूज्यनीय है।

इस संदर्भ में प्रो० बलराज मधोक अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुये कहते हैं कि इस बात का कोई तर्कसंगत उत्तर नहीं है कि जब पत्थर की अन्य सब मूर्तियाँ तोड़ दी गई और उनकी पूजा करना सबसे बड़ा पाप और 'कुफ्र' घोषित किया गया तब गोल पत्थर वाले काबा के मन्दिर को, जिसे जानकार लोग शिव मन्दिर मानते हैं, क्यों मुसलमानों का सबसे पवित्र स्थान मान लिया गया ? स्पष्ट है कि यह इस्लाम के प्रसार की रणनीति का अंग था। [15] खलीफा उमर ने काबा स्थित कृष्ण पत्थर के बारे में कहा था, "निसन्देह मैं जानता हूँ कि तू पत्थर है। संसार में तू भला-बुरा कुछ नहीं कर सकता। यदि नबी (मुहम्मद) को तुझे चूमते देखा न होता तो मैं भी तुझे न चूमता।" [16] मूर्तिपूजा के प्रश्न पर इस्लाम में अन्तर्निहित विरोधाभास के बारे में महर्षि दयानन्द लिखते हैं, "मुहम्मद साहब ने छोटे बुत् को मुसलमानों के मत से निकाला, परन्तु बड़ा बुत् जो कि पहाड़ सदृश्य मक्के की मस्जिद है, वह मुसलमानों के मत में प्रविष्ट करा दी। क्या यह छोटी बुतपरस्ती है ?" [17]

622 ई० में मुहम्मद साहब ने मदीना में एक बड़ी मस्जिद का निर्माण कराया जोकि आज भी है। इसे 'मस्जिद-ए-नबवी' अर्थात् पैगम्बर की मस्जिद कहा जाता है।

मदीना में मुहम्मद ने मज़हब के साथ राजनीति को समन्वित किया। अब वे पैगम्बर थे, राज्याध्यक्ष थे, सेनापति थे एवं मुख्य न्यायाधीश और कानून निर्माता थे। [18]

14. फनी पार्क्स, वान्डरिंग्स ऑफ ए पिलग्रिम इन सर्च ऑफ दी पिक्चरस्क ग्रन्थ 1, पृष्ठ 44
15. बलराज मधोक, उपरोक्त, पृष्ठ 15
16. राहुल सौंकृत्यायन, उपरोक्त, पृष्ठ 58
17. महर्षि दयानन्द, सत्यार्थ प्रकाश, पृष्ठ 369
18. जॉन० एल० एस्पोजिटो, उपरोक्त, पृष्ठ 4

मुहम्मद द्वारा किये गये युद्ध

मदीना में अपना प्रभुत्व स्थापित करने के पश्चात् मुहम्मद और उनके अनुयायियों ने शक्ति के बल पर अपने मज़हब का प्रसार करना प्रारम्भ कर दिया। इस्लाम स्वीकार न करने के कारण उन्हें यहूदियों से बेहद घृणा हो गई। यहूदियों से उनका संघर्ष जीवन-पर्यन्त चलता रहा और उन्होंने उनसे अनेक युद्ध किये। यहूदियों के सामने केवल एक ही विकल्प था कि या तो वे इस्लाम स्वीकार करें या फिर मरने के लिये तैयार रहें। अन्त में मुहम्मद ने निश्चय किया कि यहूदी पुरुषों को मार दिया जाय, उनकी धन सम्पत्ति लूट ली जाय तथा स्त्रियों और बच्चों को गुलाम बना लिया जाय।[1] डॉ० इर्तिजा हुसैन लिखते है, "मदीने में यहूदियों के तीन शक्तिशाली कबीले रहते थे- बनी कैनुका, बनी नजीर और बनी कुरैजा। प्रथम दो (कैनुका और नजीर) मदीने से निर्वासित किये गये और तीसरा (कुरैजा) तलवार के घाट उतारा गया।"[2]

इसके पश्चात् मुहम्मद साहब ने मदीना के चारों ओर बसे अरब कबीलों और मक्का के कुरैश कबीले की गतिविधियों पर कड़ी दृष्टि रखने के लिये मदीना के चारों ओर अपने गश्ती और जासूस दल भेजे।[3] साथ ही उन्होंने कुरैशों के उन व्यापारिक काफ़िलों, जो मक्का से उत्तर के बाजारों में प्रायः आते जाते थे, को अपने आक्रान्ता दस्तों को भेजकर लूटना प्रारम्भ कर दिया।[4]

मुहम्मद साहब ने अपने जीवन में 70 से अधिक युद्ध लड़े जिनमें से अधिकांश में उन्होंने स्वयं भाग लिया। उनके द्वारा किये गये कुछ युद्ध इस प्रकार हैं:-

(1) बद्र का युद्ध :- मक्का से सीरिया को व्यापार का जो रास्ता लाल सागर के किनारे-किनारे जाता था, वह मदीना के निकट से गुजरता था। 623 ई० में कुरैशों का एक बहुत बड़ा काफ़िला, जिसके पास लगभग 50 हजार अशर्फी का माल था, सीरिया से लौट रहा था। काफ़िले के साथ लगभग 30 रक्षक थे। इसलिये काफ़िले के सरदार अबू सूफ़यान को यह डर हुआ कि कहीं मदीना के निकट पहुँचने पर मुसलमान हमला कर उनके माल को न लूट लें।

---

1. डी० एस० मारगोलिओथ, उपरोक्त, पृष्ठ 332
2. डॉ० एस० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 107
3. वही, पृष्ठ 108
4. चाँदमल चोपड़ा, दी कलकत्ता कुरान पिटीशन, पृष्ठ 43

अतः उसने इस खतरे को देखते हुये एक व्यक्ति को मक्का दौड़ा दिया कि वह वहाँ से लोगों को सहायता के लिये बुला लाये। मक्का का हाकिम लगभग 1000 योद्धाओं को लेकर लुटेरों को नष्ट करने निकला। हालाँकि कुरैश व्यापारियों का काफ़िला दूसरे रास्ते से मक्का सकुशल पहुँच गया, किन्तु कुरैशों का दल मुसलमानों को उचित पाठ पढ़ाने के लिये चल दिया। दूसरी और मुहम्मद के नेतृत्व में 313 मुसलमान भी युद्ध के लिये तैयार थे। मदीना से 80 मील दक्षिण-पश्चिम की ओर 'बद्र' नामक स्थान पर दोनों की भिड़न्त हुई।

युद्ध के समय मुसलमान ऊँचे स्थान पर थे, जबकि कुरैश निचले स्थान पर। मुसलमानों के सौभाग्य से उस समय वर्षा भी हो गई, जिससे उन्हें कई लाभ हुये। उन्हें नहाने-धोने और पीने के लिये अधिक मात्रा में पानी मिल गया। रेत भी जम गया जिसके कारण भूमि पर चलने-फिरने में उन्हें आसानी हो गई। कुरैशों की निचली भूमि पर वर्षा के कारण कीचड़ हो गई, जिससे उनके पैर धँसने लगे।[5] अतः संख्या में अधिक होते हुये भी कुरैश पराजित हो गये। इस युद्ध में मुहम्मद साहब ने लूट का पाँचवा भाग स्वयं रख लिया तथा शेष 4/5 भाग अपने अनुयायी सैनिकों में बाँट दिया। यह युद्ध 16 रमजान 2 हिज़री, तदनुसार 623 ई० शुक्रवार को हुआ। इस युद्ध में 14 मुसलमान और 70 कुरैश-कबीले के लोग मारे गये।

बद्र के युद्ध का दिन इस्लाम के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कुरान की सूरा 8 में मुसलमानों को बताया गया है कि इस युद्ध में जो कुछ उनके हाथ आया है, उसे वे अपना धन न समझें बल्कि उसे अल्लाह का माल और दिया हुआ एक पुरस्कार समझें।[6] कुरान में स्त्रियों और बच्चों सहित प्राप्त लूट को 'मालेगनीमत' कहा गया है। "मालेगनीमत' युद्ध में मुसलमानों द्वारा लूटे गये माल को कहते हैं और इसका सम्बन्ध अल्लाह और उसके दूत मुहम्मद से होता है।[7] इस गनीमत के माल का 1/5 भाग पैगम्बर मुहम्मद और उनके बाद खलीफ़ा या मुस्लिम सुल्तान को देने का विधान है। शेष 4/5 भाग को युद्ध में भाग लेने वाले मुसलमानों को आपस में बाँट लेना चाहिये।

बद्र के युद्ध के पश्चात् जब मुहम्मद लूट के माल को लेकर मदीना आये तो उनकी विभिन्न वर्गों और व्यक्तिओं द्वारा काफी आलोचना हुई। कहा गया कि यह कैसा पैगम्बर है जो लोगों से लड़ता है और उन्हें कत्ल करता है तथा लूट के माल को 'गनीमत'

5. कुरआन मजीद, पृष्ठ 350
6. वही, पृष्ठ 347
7. वही, सूरा 8, आयत 1

का माल कहकर हलाल ठहराता है ?

(2) उहुद का युद्ध :- बद्र के युद्ध में कुरैश सरदार अबू सूफ़यान घायल हो गया था। दो-तीन महीने बाद घाव ठीक हो जाने पर 3 हिजरी अर्थात् 624 ई० में तीन हजार योद्धाओं के साथ यह कुरैश सरदार मुहम्मद से बदला लेने के लिये मदीना से लगभग 4 मील दूर उहुद नामक स्थान पर आ पहुँचा। यह सूचना प्राप्त होते ही मुहम्मद भी अपने साथियों से राय लेने के बाद कुरैशों से टक्कर लेने के लिये एक हजार मुसलमानों को लेकर निकल पड़े। युद्ध प्रारम्भ होने पर अधिकांश मुसलमान कुरैशों का माल लूटने लगे किन्तु कुछ समय बाद ही कुरैशों से भयभीत होकर इधर-उधर भागने लगे। मुहम्मद भी तलवार के झटके से घायल होकर एक गड्डे में गिर गये, किन्तु दस-बारह मुसलमानों ने उन्हें अपने घेरे में लेकर बचा लिया और उन्हें लेकर एक पहाड़ी पर पहुँच गये। किसी तरह यह समाचार फैल गया कि हजरत मुहम्मद भी शहीद हो गये हैं। इस सूचना से कितने ही मुसलमानों ने साहस छोड़ दिया।[8]

उहुद के युद्ध में मुसलमानों की जो पराजय हुई, उसके कारण उनकी प्रसिद्धि, जो बद्र के युद्ध के पश्चात् विभिन्न कबीलों में फैली थी, कम हो गई। बहुत से कबीले जो मुहम्मद साहब का साथ देने लगे थे, वे अब कुरैश सरदार अबू सूफ़यान की ओर झुकने लगे। इसका यह प्रभाव भी हुआ कि मुसलमानों की जो छोटी-छोटी टोलियाँ मज़हब के प्रचार के लिये इधर-उधर गई हुई थीं, लोगों ने उन्हें भी कत्ल करना प्रारम्भ कर दिया।

(3) खन्दक का युद्ध :- उहुद के युद्ध के 2 वर्ष पश्चात् 5 हिजरी अर्थात् 626 ई० में अरब के विभिन्न कबीलों, जिनमें मक्का के कुरैश और मदीना के यहूदी प्रमुख थे, ने मदीना पर आक्रमण करने की योजना बनाई। मुहम्मद ने अपने 3000 मुसलमानों के साथ मदीना के बाहर एक खन्दक (खाई) खोद दी। उस समय मौसम बहुत ठंडा था तथा मुसलमानों के भाग्य से कड़ा तूफान भी आ गया जिससे कुरैशों और यहूदियों की सेना तितर-बितर हो गई। कुरैश वापिस मक्का चले गये। मुहम्मद साहब ने कुरैजा कबीले के यहूदियों के दुर्ग की घेराबन्दी कर दी, जो एक माह तक चली। बाद में कुरैजा के सारे पुरुषों की हत्या कर दी गई, स्त्रियों को गुलाम बना लिया गया तथा उनकी सारी सम्पत्ति मुसलमानों में बाँट दी गई।[9] इस कबीले के कत्ल किये यहूदियों की संख्या लगभग 400 थी।

---

8. वही, पृष्ठ 33
9. डा० एस० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 111

(4) बनी मुश्तलक का युद्ध :- बनी मुश्तलक के कबीले पर मुहम्मद साहब ने 6 हिजरी अर्थात् 627 ई० में आक्रमण कर दिया। इस कबीले में यहूदी लोग थे। युद्ध में उनका सरदार मारा गया तथा उसकी सुन्दर पुत्री जौएरिया मुसलमानों के हाथ पड़ी। मुहम्मद ने उससे निकाह कर लिया। वह उनकी आठवीं पत्नी थी।

युद्ध में सैकड़ों यहूदी पुरुष, स्त्री और बच्चे पकड़े गये। इन पकड़े गये यहूदियों के बारे में एक घायल मुस्लिम सरदार साद से पूछा गया तो उसने निर्णय सुनाया – "पुरुषों को मार दो, स्त्री-बच्चों को गुलाम बना लो तथा लूट का माल बाँट लो।" इस पर मुहम्मद ने कहा कि "साद का फैसला सातवें आसमान पर बैठे हुये खुदा का फैसला है।" तब लगभग 600 यहूदियों को कत्ल कर दिया गया।

(5) हुदैबिया का समझौता :- 6 हिजरी अर्थात् 628 ई० में मुहम्मद ने मक्का के दर्शन करने और काबा की परिक्रमा करने की कामना की। अतः वे 1400 मुसलमानों के साथ मक्का रवाना हुये। मक्का के कुरैशों ने मुसलमानों को हुदैबिया नामक स्थान पर रोक दिया। जब मुहम्मद साहब ने मक्का वालों को कहा कि वे तो केवल काबा की परिक्रमा करने हेतु आये हैं तो कुरैश न माने। अन्त में मुहम्मद और उनके अनुयायियों को कुछ दबकर इन शर्तों पर समझौता करना पड़ा कि वे इस वर्ष लौट जायें और अगले वर्ष आयें। जब अली द्वारा यह समझौता लिखा जा रहा था तो उसमें मुहम्मद का परिचय अल्लाह के रसूल के रूप में देने के स्थान पर मुहम्मद बिन अब्दुला अर्थात् अब्दुला का पुत्र मुहम्मद देने की जिद पर कुरैश अड़ गये। अली नहीं मान रहा था तो स्वयं मुहम्मद ने 'रसूलल्लाह' शब्द काट दिया।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि मुहम्मद अल्लाह के रसूल थे तो उन्होंने अपना यह परिचय स्वयं क्यों काटा ? उन्हें किसका भय था ? इस संधि में दोनों पक्षों ने दस वर्ष तक एक दूसरे से युद्ध न करने की वचनबद्धता भी की।

(6) खैबर का युद्ध :-कुरैशों से समझौता करने तथा मदीना में यहूदियों को पूर्ण रूप से समाप्त करने के पश्चात् मुहम्मद ने उनकी शक्ति को खैबर में भी नष्ट करने की योजना बनाई। यह स्थान मदीना से लगभग 200 मील उत्तर-पश्चिम में यहूदियों का नगर था जिसमें उनकी लगभग 20000 जनसंख्या रहती थी। आक्रमण की कोई पूर्व सूचना अथवा आशंका न होने के कारण यहूदी लोग मुहम्मद के नेतृत्व में लगभग 2000 सशस्त्र मुस्लिम सैनिकों को देखकर अत्यन्त आश्चर्यचकित और दुःखी हुये।[10] फिर

10. वही पृष्ठ 112

भी यहूदी आक्रान्ताओं से बड़ी वीरता से लड़े, किन्तु 20 दिन के युद्ध के पश्चात अन्ततोगत्वा उनकी पराजय हो गई। डी० एस० मारगोलिओथ लिखते हैं कि खैबर के इस युद्ध में मुहम्मद ने हजारों यहूदियों के सिर स्वयं काटे। इस युद्ध के पश्चात् बलात् दासी बनाई गई एक यहूदी लड़की ने मुहम्मद को खाने में जहर दे दिया। एक मेहमान उसे खाकर उसी समय मर गया। यह देखकर मुहम्मद ने खाना थूक दिया, किन्तु जहर का प्रभाव बना रहा और तीन वर्ष पश्चात् मुहम्मद की इसी जहर के कारण मृत्यु हुई।[11]

यहूदियों को पराजित करने के पश्चात् उनकी सारी भूमि मुस्लिम सैनिकों में बाँट दी गई। इस प्रकार सम्पूर्ण अरब प्रायद्वीप से यहूदियों का प्रभुत्व समाप्त कर दिया गया।

यह युद्ध 6 हिजरी अर्थात 628 ई० में हुआ।

(7) मक्का की विजय :- 630 ई० में हुदैबिया के समझौते को तोड़कर मुहम्मद ने लगभग 10000 मुसलमानों की सेना लेकर मक्का पर चढ़ाई की। इस बात का ध्यान रखा गया कि मक्का के लोगों को इसकी पूर्व सूचना न मिलने पाये। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि मुहम्मद अपनी विशाल सेना के साथ मक्का के निकट आ गये हैं तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ।[12] इस भारी सेना का सामना करने के लिये वे तैयार न थे। प्राण रक्षा की दृष्टि से मक्का के कुरैश सरदार अबू सूफ़ियान ने कलमा पढ़ लिया। कुरआन मजीद में मुहम्मद फारुक खाँ लिखते हैं, "हजरत मुहम्मद जब मक्के में दाखिल हुये और काबे में गये तो सबसे पहले आपने हुक्म दिया कि तमाम मूर्तियाँ निकाल कर फेंक दी जायें और दीवारों पर जो देवी-देवताओं के चित्र बने हुये थे, वे मिटा दिये जायें।.. .... उस समय काबे में 360 मूर्तियाँ रखी थीं जो निकाल कर फेंकी गईं।"[13]

विजय के पश्चात् मुहम्मद साहब ने एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक भाषण भी दिया।

(8) हुनैन का युद्ध :- मक्का और काबे के मन्दिर पर अधिकार होने के बावजूद भी अरब के कुछ कबीलों ने इस्लाम स्वीकार नहीं किया। ये कबीले बनी, हवाज़िन, सक़ीफ, जसर और साद वंश के थे। कुछ पहाड़ी जातियाँ भी इनके साथ मिल गई। अतः 8 हिजरी अर्थात् 630 ई०. में 12 हजार मुसलमानों को लेकर मुहम्मद साहब हुनैन नामक स्थान पर अपने विरोधियों से युद्ध करने आ धमके। इस युद्ध में मुसलमान सैनिकों की संख्या विरोधियों से तीन गुनी थी।[14] इस युद्ध में अनेक मुसलमान मारे गये।

11. डी०एस० मारगोलिओथ, उपरोक्त, पृष्ठ 361
12. डा० एस० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 119
13. मुहम्मद फारूक खाँ, कुरआन मजीद, मुहम्मद का जीवन-परिचय, पृष्ठ 39
14. कुरआन मजीद, पृष्ठ 362

डॉ० एस० इर्तिजा हुसैन लिखते हैं, "हवाजिन के भीषण आक्रमण के सामने मुसलमानों के पैर उखड़ गये और वे इधर-उधर भागने लगे। किन्तु पैगम्बर के ललकारने और प्रोत्साहित करने पर वे फिर एकत्र हुये और हवाजिन पर आक्रमण किया। अब हवाजिन की सेना परास्त हुई और मुसलमानों को विजय प्राप्त हुई।" [15]

इस युद्ध में एक आश्चर्यजनक घटना घटी। जब लूट का सामान एकत्रित किया जा रहा था, तब एक डोली जाती हुई देखी गई। रविया नामक एक मुस्लिम सैनिक ने उसके पीछे अपना घोड़ा दौड़ाया। डोली में एक बूढ़ा व्यक्ति बैठा हुआ था। रविया ने तुरन्त उस बूढ़े पर तलवार से प्रहार किया। किन्तु उसकी तलवार टूट गई। बूढ़े ने हँस कर कहा कि बेटे, खेद है कि तेरे माँ-बाप ने तुझे अच्छी तलवार नहीं दी। अतः मेरी काठी में से तलवार ले आ। रविया ने तलवार निकाल कर बूढ़े पर प्रहार किये। बूढ़े ने कहा कि वह अपनी माँ से अवश्य कह दे कि उसने दुरैव इब्ने सुम्मा को मार दिया है। इसके बाद रविया उस बूढ़े का सिर काट कर घर गया और उसने अपनी माँ को यह समाचार बताया। उसकी माँ ने क्रोधित होते हुये दुःख भरे स्वर में कहा कि अरे दुष्ट, तूने यह क्या किया ? जिसे तूने मारा है उसने तीन बार मेरी और तेरी दादी की इज्जत बचाई थी। इस पर रविया ने मुँह फेरते हुये कहा कि इस्लाम काफिर के अहसान और गुण नहीं मानता। [16]

मक्का-विजय के पश्चात् मुहम्मद साहब ने यह घोषणा कराई कि जिन लोगों ने अरब में अभी तक इस्लाम स्वीकार नहीं किया है उन्हें चाहिये कि चार माह के अन्दर-अन्दर या तो कल्मा पढ़ ले या अरब छोड़कर चले जायें। चार महीने के पश्चात् यदि कोई काफिर अरब में दिखाई देगा तो उसका सिर काट लिया जायेगा। इसमें मुसलमानों के मित्रों, रिश्तेदारों और भाइयों का भी लिहाज नहीं किया जायेगा।

यमन के लोग अभी मुसलमान नहीं बने थे। मुहम्मद साहब ने वहाँ अली को सेना लेकर भेजा। उन्होंने अली से कुछ प्रश्न पूछे तो उसने तलवार निकाल कर कहा इस्लाम का उत्तर यह तलवार है- और कई विद्वानों के सिर काट लिये। इससे भयभीत होकर समूचा यमन मुसलमान हो गया। [17] मुहम्मद साहब ने अबीसीनिया, मिस्र, रोम और ईरान के तत्कालीन शासकों को पत्र लिखकर अपने को अल्लाह का दूत होने और इस्लाम

---

15. डा० एस० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 120
16. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, उपरोक्त, पृष्ठ 9
17. वही, पृष्ठ 10

को स्वीकार करने का आदेश दिया। ईरान के शासक किस्रा के नाम लिखे अपने पत्र में उन्होंने लिखा - "अल्लाह के नाम से जो कृपालु और दयालु है। अल्लाह के दूत मुहम्मद की ओर से फारस के शासक किस्रा के नाम। वह शान्ति का भागी है। जो सन्मार्ग का अनुसरण करना स्वीकार कर ले और अल्लाह ही आराध्य है अन्य कोई नहीं और मैं मनुष्य मात्र के लिये उसका दूत हूँ ताकि प्रत्येक जीवित व्यक्ति को डराऊँ। यदि तू इस्लाम स्वीकार कर ले तो सुरक्षित रहेगा किन्तु यदि इससे मुँह मोड़ ले तो सम्पूर्ण मजूसी (पारसी) सम्प्रदाय के पाप का बोझ तेरे ऊपर होगा।"

इस पत्र की भाषा से मुहम्मद साहब द्वारा ईरान के तत्कालीन शासक किस्रा को दी गई यह धमकी स्पष्ट करती है कि या तो वह इस्लाम स्वीकार करे अन्यथा दुष्परिणामों के लिये तैयार रहे। ईरान के शासक ने मुहम्मद साहब के पत्र को फाड़ कर फेंक दिया।

अबीसीनिया, रोम और मिस्र के शासकों को लिखे गये पत्रों की भी भाषा ईरान के शासक को लिखे पत्र जैसी ही थी। अबीसीनिया का ईसाई राजा नीगस तो मुसलमान बन गया, किन्तु मिश्र और रोम के शासकों ने इस्लाम स्वीकार नहीं किया।

मुहम्मद साहब द्वारा विभिन्न युद्धों में भाग लिये जाने के बारे में मुहम्मद फारुक खाँ कुरान मजीद में लिखते हैं, "अपने जीवन के अन्तिम दस वर्षों में जिन लड़ाइयों में नबी सल-लल-लाहु अलैहि वसल्लम (मुहम्मद) स्वयं शरीक हुये उनकी संख्या 27 है, जिनमें से 9 में सख्त लड़ाई हुई। इसके अलावा छोटी-बड़ी 38 लड़ाइयाँ ऐसी हैं जो आपकी हिदायतों के अन्तर्गत दूसरे सरदारों की अध्यक्षता में लड़ी गई। इस पूरी मुद्‌दत में आपने हर-हर घटना की स्वयं निगरानी की। हर मामले का फैसला किया और हर बात का पूरा ध्यान दिया। इस पूरी मुद्‌दत में आपने पूरे अरब से मूर्ति-पूजा का नाम व निशान मिटा दिया।" [18]

विभिन्न अरब कबीलों में अब यह अनुभव कर लिया कि इस्लाम उनके सामने एक अजेय शक्ति के रूप में प्रकट हुआ है। सैयद मुहम्मद लतीफ लिखते हैं, "अरब की लुटेरी जातियों को मुहम्मद का लोक ओर परलोक के सुख और धन-दौलत का लालच दिलाना उनके जोश को भड़काने के लिये काफी था। इस लालच से उनकी युद्ध-शक्ति और विषय-भावना भभक उठी। मुहम्मद ने अरबियों की बुझी हुई कामना में बिजली भर दी। कुरान और तलवार को हाथ में लेकर अपने अनुयायी मुसलमानों की शक्ति से उत्साहित होकर मुहम्मद ने संसार के शिष्टाचार और धर्मशीलता के साथ युद्ध छेड़

18. मुहम्मद फारूक खाँ, मुहम्मद सल्ल० का जीवन परिचय, कुरआन मजीद, पृष्ठ 41

दिया।"[19] सम्पूर्ण अरब में इस्लाम को प्रस्थापित कर मुहम्मद साहब ने मुसलमानों को आदेश दिया कि वे इस्लाम को अरब से बाहर प्रसारित करें।

7 जून, 632 ई० को 63 वर्ष की आयु में मुहम्मद साहब की मृत्यु मदीने में हुई। मृत्यु के समय उनका सिर उनकी 18 वर्षीय पत्नी आयशा की गोद में था। मदीनें में उनकी भव्य समाधि आज भी उनकी स्मृति को चिरस्थायी बनाये हुये है।

19. सैयद मुहम्मद लतीफ, 'हिस्ट्री ऑफ दी पंजाब' आचार्य चतुरसेन शास्त्री द्वारा 'भारत में इस्लाम' से उद्धृत, पृष्ठ 50-51

मुहम्मद के निकाह

मुहम्मद साहब ने विवाह किये, हर तरह के विवाह – विधवा से, कुँवारी से, बुढ़िया से, जवान से और कुछ नवयुवतियों से भी। उनकी 11 पत्नियाँ और 2 प्रमुख रखैलें थीं। उनकी पत्नियों के नाम खदीजा, सौदा, आयशा, हफ्सा, जैनब, हिन्द, जैनब, जौएरिया, उम्मा हबीबा, सफिया, मैमूना और रखैलों के नाम मरियम और रेहाना थे।

(1) खदीजा – मुहम्मद साहब का प्रथम विवाह 25 वर्ष की अवस्था में खदीजा नामक 40 वर्ष की महिला से 595 ई० में हुआ। ये दो बार विधवा हो चुकी थीं तथा तीन बच्चों की माँ थीं। विवाह के पश्चात् खदीजा 25 वर्ष तक जीवित रहीं। इस काल-खण्ड में मुहम्मद साहब ने किसी अन्य स्त्री से विवाह नहीं किया। उनके जीवन में अनेकानेक पत्नियाँ और रखैल बाद में ही आई। खदीजा के बिना मुहम्मद साहब का जीवनवृत्त अपूर्ण ही है। इस्लाम खदीजा का बेहद ऋणी है क्योंकि सबसे पहले इस्लाम इन्होंने ही स्वीकार किया था।

(2) सौदा – खदीजा की मृत्यु के पश्चात लगभग 51 वर्ष की अवस्था में मुहम्मद साहब ने मक्का में एक यहूदी विधवा सौदा से, जिसने अपने पति सुकरान के साथ इस्लाम स्वीकार किया था, अपना दूसरा विवाह किया।

(3) आयशा – मुहम्मद साहब ने अपना तीसरा विवाह अपने साथी अबूबकर की अल्पायु पुत्री आयशा से मदीना में किया। वह विवाह के समय सात वर्ष की थी, जबकि मुहम्मद साहब की अवस्था लगभग 52 वर्ष थी।[1] 9 वर्ष की अवस्था में मुहम्मद साहब ने उससे सम्भोग किया। उनकी पत्नियों में विवाह के समय केवल यही कुमारी थी। शेष पत्नियाँ विवाह के समय या तो विधवा थीं या फिर तलाकशुदा।

अबूबकर अपनी पुत्री का विवाह मुहम्मद साहब से करने को तैयार न था। उसने तीन कारणों से इस विवाह का विरोध किया था। पहला, आयशा की आयु अत्यन्त अल्प थी, जबकि मुहम्मद साहब वृद्ध थे। दूसरा, वह उसकी मंगनी दूसरे से कर चुका था, तथा तीसरा रिश्ते में आयशा मुहम्मद की भतीजी थी। किन्तु मुहम्मद साहब ने इनमें से किसी भी कारण को न मानते हुये कहा कि 'मुझे इल्हाम हुआ है कि अल्लाह ने तेरी पुत्री को आसमान पर मेरी जोरू बना दिया है, तू जमीन पर इसे मेरी जोरू बना।'

1. डी० एस० मारगोलिओथ, उपरोक्त, पृष्ठ 207

खैर, मुहम्मद साहब और आयशा का विवाह हुआ और आयशा मृत्यु-पर्यन्त उनके दिल और जान की मालिक बनी रही।

किन्तु बनी मुश्तलक के युद्ध में आयशा के चरित्र पर आक्षेप लगाया गया।[2] हुआ यह कि भूल से युद्ध में अकेली रह जाने के कारण 12 वर्षीया आयशा सुफ़वान नामक एक जवान सैनिक के साथ वापिस लौटी। यही आक्षेप का कारण बना। जब मुहम्मद साहब ने अली से इस सम्बन्ध में राय माँगी तो अली ने कहा, "हे अल्लाह के रसूल ! अल्लाह ने आप पर तंगी नहीं की है, स्त्रियाँ और बहुत हैं। और जाँच करनी चाहें तो आप अपनी लौंडी को बुला कर पूछें, वह सच-सच बयान कर देगी।"[3] आयशा को यह बुरा लगा और वह जीवन भर के लिये अली की शत्रु बन गई। इस घटना के पश्चात मुहम्मद साहब एक महीने तक आयशा से नहीं बोले और वह भी अपने मायके में आकर रहने लगी। एक दिन मुहम्मद साहब आयशा के पास आये और बोले कि उन्हें इल्हाम हुआ है, "हे आयशा ! प्रसन्न हो जाओ, अल्लाह ने तुम्हारे बेगुनाह होने को जाहिर कर दिया।"[4] अब आक्षेप लगाने वालों की शामत आ गई और उन्हें 80-80 कोड़े लगाये गये।

(4) हफ्सा - मुहम्मद साहब ने अपना चौथा विवाह अपने साथी उमर की विधवा पुत्री हफ्सा से किया। उस समय हफ्सा की अवस्था लगभग 20 वर्ष और मुहम्मद साहब की अवस्था लगभग 55 वर्ष थी।

(5) जैनब - जैनब मुहम्मद साहब की पाँचवीं पत्नी थी। वह भी विधवा थी। इसका पति उहुद के युद्ध में मुहम्मद साहब की ओर से लड़ते हुये मारा गया था। किन्तु विवाह के कुछ महीने बाद ही उसकी मृत्यु हो गयी। मुहम्मद साहब की दो पत्नियों - खदीजा और जैनब, की मृत्यु उनके जीवन काल में ही हो गयी। शेष 9 पत्नियाँ उनकी मृत्यु के पश्चात विधवा होकर मरीं।

(6) हिन्द - मुहम्मद साहब की छठवीं पत्नी चार बच्चों की विधवा माँ हिन्द थी। उसका पति अबू सलमा बनी साद के युद्ध में मुहम्मद साहब की ओर से लड़ता हुआ शहीद हो गया था।

(7) जैनब - मुहम्मद साहब ने सातवाँ विवाह अपने दत्तक पुत्र जैद की पत्नी जैनब से 57 वर्ष की आयु में किया। हुआ यह कि एक बार मुहम्मद साहब ने जैनब को ऐसे कपड़ों में स्नान करते हुये देख लिया कि वे उसकी सुन्दरता पर आसक्त हो गये। उन्होंने

---

2. कुरआन मजीद, पृष्ठ 36
3. वही, पृष्ठ 617
4. वही

जैनब से भोग करना चाहा और कहा कि उन्हें इल्हाम हुआ है कि वह उनके लिये है। जैनब ने यह बात जैद से कही तो उसने उसे तलाक दे दिया और मुहम्मद साहब ने जैनब से विवाह कर लिया। जैनब मुहम्मद साहब की फुफेरी बहिन भी थी। उन्होंने विवाह के उपलक्ष्य में एक शानदार दावत भी दी।[5]

मुहम्मद साहब के द्वारा अपने दत्तक पुत्र की पत्नी से विवाह करने के कारण उनकी काफी आलोचना हुई क्योंकि अरब लोग मुँह-बोले बेटे अर्थात् मुतबन्ना को बिल्कुल सगे बेटे की तरह समझते थे। उन पर यह आरोप लगाया गया कि वे अपनी बहू को देखकर उस पर आसक्त हो गये तथा बेटे को जब इसका पता लगा तो उसने अपनी पत्नी को तलाक दे दिया और इसके पश्चात् बाप ने बहू से विवाह रचा लिया।[6] कुरान में मुहम्मद साहब द्वारा जैनब से किये गये निकाह को उचित बताते हुये कहा गया है, "फिर जब जैद को उससे कोई सरोकार न रहा, तो हमने तुझसे उस स्त्री का विवाह कर दिया, ताकि ईमानवालों पर अपने मुँहबोले बेटों की पत्नियों के मामले में कोई तंगी न रहे।"[7] मुहम्मद साहब द्वारा अपने दत्तक पुत्र की पत्नी से निकाह करने पर स्वामी दयानन्द लिखते हैं "इससे यह भी सिद्ध हुआ कि मुहम्मद साहब बड़े विषयी थे। यदि न होते तो (लेपालक) बेटे की स्त्री को जो पुत्र की स्त्री थी, अपनी स्त्री क्यों कर लेते ?... .... मनुष्यों में जो जंगली भी होगा वह भी बेटे की स्त्री छोड़ता है और यह कितनी बड़ी अन्याय की बात है कि नबी को विषयासक्ति की लीला करने में कुछ भी अटकाब नहीं होना। यदि नबी किसी का बाप न था तो जैद (लेपालक) बेटा किसका था ? और क्यों लिखा ? यह उसी मतलब की बात है कि जिससे बेटे की स्त्री को भी घर में डालने से पैगम्बर साहब न बचे, अन्य से क्यों कर बचे होंगे ?"[8]

हिन्दू समाज में दत्तक पुत्र की पत्नी भी पुत्रीवत होती है, जिससे कोई भी व्यक्ति स्वप्न में भी विवाह करने की कल्पना नहीं कर सकता। यह आश्चर्य की बात है कि इस्लाम में मुहम्मद साहब को किसी मुसलमान का तो दूर दत्तक पुत्र जैद का भी पिता नहीं माना गया, किन्तु उनकी पत्नियों को मुसलमानों की माता मान कर उनके घर में मोमिनों का प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया ताकि कोई मुसलमान उनकी किसी पत्नी से विवाह न कर ले।

---

5. डी० एस० मारगोलिओथ, उपरोक्त, पृष्ठ 320
6. कुरआन मजीद, पृष्ठ 742
7. वही, सूरा 33, आयत 37
8. स्वामी दयानन्द, सत्यार्थ प्रकाश, पृष्ठ 391-92

(8) जुबैरिया – मुहम्मद साहब ने 57 वर्ष की अवस्था में जुबैरिया नामक 20 वर्षीय यहूदी विधवा से आठवाँ विवाह किया। इसका पिता हारिस बनी मुश्तलक नामक यहूदी कबीले का सरदार था तथा इसका पति युद्ध में लड़ते हुये मारा गया था।

(9) उम्मा हबीबा – मुहम्मद साहब ने मक्का के कुरैश सरदार अबू सूफ़यान की पुत्री अबैदुल्लाह की तलाकशुदा पत्नी उम्मा हबीबा से लगभग 59 वर्ष की अवस्था में नवाँ विवाह किया।

(10) सफिया – सफिया नामक 17 वर्षीय यहूदी नवयुवती से मुहम्मद साहब ने 59 वर्ष की आयु में दसवाँ विवाह किया।

उसके दो विवाह पहले ही हो चुके थे। उसका पितां बनी नजीर नामक यहूदी कबीले का सरदार था। खैबर के युद्ध में सफ़िया के पिता और पति मुसलमानों से युद्ध करते हुये मारे गये थे।

(11) मैमूना – मैमूना से मुहम्मद साहब ने लगभग 60 वर्ष की अवस्था में ग्यारहवाँ विवाह किया। इससे पूर्व उसके भी दो विवाह हो चुके थे।

ग्यारह पत्नियों के अतिरिक्त मुहम्मद साहब की दो प्रमुख रखैलें भी थीं जिनके नाम थे मरियम और रेहाना। ये उन्हें 'माले गनीमत' के रूप में प्राप्त हुई थीं। मरियम से उन्हें इब्राहीम नामक एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ, किन्तु वह अल्पायु में ही मर गया।

कुछ अन्य लेखक जिनमें आचार्य चतुरसेन शास्त्री प्रमुख हैं, मुहम्मद साहब की पत्नियों की संख्या 18 मानते हैं।[9] उनकी पत्नियों में आपस में कलह भी होती थी। जरा एक पत्नी से अधिक वार्तालाप होते देखा नहीं कि दूसरी जलने लगती थी। एक बार आयशा और हफ्सा ने ऐसा ही विवाद उठाया और वह यहाँ तक बढ़ा कि अन्त में कुरान को इसके बारे में उपदेश देना पड़ा।[10]

मुसलमानों के लिये एक साथ 4 से अधिक पत्नी रखने की अनुमति नहीं है, किन्तु उनके लिये यह आसानी है कि यदि उन्हें तलाक देना पड़े तो उनके लिये तंगी नहीं, वे तलाक दे सकते हैं और दूसरा विवाह कर सकते हैं। किन्तु मुहम्मद साहब के लिये 'तलाक' हराम था क्योंकि उनकी पत्नियाँ दूसरों के लिये माता के समान थीं। अतः उन्हें तलाक नहीं दी जा सकती थी।[11] कुरान के अनुसार, "हे लोगो, जो ईमान लाये हो ! नबी के घरों में मत जाया करो। .... और जब उन (नबी की पत्नियों)

9. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, उपरोक्त, पृष्ठ 10
10. राहुल सांकृत्यायन, उपरोक्त, पृष्ठ 28
11. कुरआन मजीद, पृष्ठ 755

से कोई चीज माँगों, तो परदे के पीछे से माँगो। यह तुम्हारे दिलों और उनके दिलों के लिये बहुत सुथराई है। तुम्हारे लिये यह कदापि जायज़ नहीं कि अल्लाह के रसूल को तकलीफ दो, और न यह जायज़ है कि उनके बाद उनकी पत्नियों से विवाह करो।[12] .... नबी की पत्नियाँ उनकी मातायें हैं।"[13]

विश्व में ऐसे अनेक इतिहासकार, समाज सुधारक और धर्मवेत्ता हैं जो मुहम्मद साहब द्वारा की गई अनेक पत्नियों और रखैलों की आलोचना करते हैं। ऐसे आलोचकों को उत्तर देते हुये सैयद अमीर अली कहते हैं कि अरब में कोई स्त्री पत्नी के अतिरिक्त किसी अन्य रिश्ते से किसी पुरुष के साथ नहीं रह सकती थी। मुहम्मद साहब अपनी राजनैतिक आवश्यकताओं से विवश थे कि लगातार विवाह करें।

किन्तु भारतीय सामाजिक व्यवस्था में 'माले गनीमत' के रूप में प्राप्त स्त्रियों से विवाह किया जाना निन्दनीय कृत्य है। इस संदर्भ में शिवाजी महाराज का उदाहरण दिया जा सकता है जिन्होंने 'मातृवत् परदारेषु......' के उच्च भारतीय आदर्श का अनुसरण करते हुये लूट के माल के साथ मिली परम रूपवती नवाबजादी गौहर बानू को उसके घर यह कह कर ससम्मान वापिस भिजवा दिया कि यदि उनकी माता को यह रूप प्राप्त हुआ होता तो सम्भव है कि उन्हें भी इसका कुछ अंश प्राप्त होता।

✓ मुहम्मद साहब ने 'मुताअ' को भी मान्यता दी। इसके अनुसार कोई भी मुसलमान किसी भी स्त्री के साथ कुछ समय के लिये निकाह करके उससे भोग कर सकता है। उनके अनुसार यह व्यभिचार नहीं, अपितु नियत समय के लिये निकाह है।

सभी पत्नियों और रखैलों में मुहम्मद साहब को आयशा सबसे अधिक प्रिय थी। 18 वर्ष की अवस्था में वह विधवा हो गयी। आयशा के अनुसार मुहम्मद साहब को स्त्रियों और खुशबू से बेहद प्यार था।

---

12. वही, सूरा 33, आयत 53, पृष्ठ 745
13. वही, सूरा 33, आयत, पृष्ठ 745

अध्याय – 5

मुहम्मद के उत्तराधिकारी

(1) अबूबकर – मुहम्मद साहब ने अपने जीवन में कोई उत्तराधिकारी नहीं चुना था। अतः उनकी मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकारी की समस्या उत्पन्न हो गयी। उसामा इब्ने जैद ने इस्लाम का झण्डा आयशा के दरवाजे पर लगा दिया और हथियारबन्द पहरेदार खड़े कर दिये। अब यह विचार किया गया कि उत्तराधिकारी किसे बनाया जाये। योग्यता और खानदान की दृष्टि से अली का अधिकार था, किन्तु बनी मुश्तलक के युद्ध में अली द्वारा आयशा के चरित्र पर लगाये गये आक्षेप के कारण उसे अली से शत्रुता निकालने का स्वर्ण अवसर प्राप्त हो गया। उत्तराधिकार के लिये अबूबकर, उमर, उस्मान भी प्रत्याशी थे। अतः पंचायत आमन्त्रित की गई जिसने निर्णय किया कि खलीफा मक्का के कुरैशों में से बनाया जाये और मंत्री मदीना के अंसारी बनाये जाया करें। इस निश्चय के अनुसार अबूबकर और उमर में से कोई भी खलीफा बन सकता था। किन्तु जब फिर भी संघर्ष जारी रहा तो उमर ने आगे बढ़कर अबूबकर को सलाम किया और उनका हाथ चूमकर कहा, क्योंकि आप हम सबसे बड़े, योग्य और अनुभवी हैं, इसलिये आपको ही खलीफा बनाया जाना चाहिये। इस प्रकार अबूबकर (632–34) इस्लाम के प्रथम खलीफा बने।

मृत्यु के समय मुहम्मद साहब का विचार सीरिया और ईरान की विजय करना था। अतः खलीफा बनते ही अबूबकर ने राजाज्ञा द्वारा सेनापति खालिद के नेतृत्व में मुस्लिम सेना सीरिया जीतने के लिए भेजी। युद्ध में मुसलमानों की विजय हुई। विजय प्राप्त करते ही सेनापति खालिद ने सीरिया के ईसाइयों को इस्लाम स्वीकार के लिये बाध्य कर दिया। उसने आज्ञा प्रसारित की कि जो ईसाई बाहर जाना चाहें, वे जा सकते हैं, किन्तु जो सीरिया में रहेंगे, उन्हें जजिया देना पड़ेगा। साथ ही ईसाइयों की पूजा के लिये सात गिरजाघरों को छोड़ कर शेष गिरा दिये जायेंगे।

अबूबकर के काल में विश्व में इस्लाम के प्रसार हेतु निम्न नियम बनाये गये :–

1) मुहम्मद साहब से पूर्व अल्लाह ने जितने पैगम्बर और किताबें भेजी थीं, उन्हें अब उसने रद्द कर दिया है। मुहम्मद साहब अल्लाह के अन्तिम दूत हैं और कुरान मजहब की अन्तिम किताब है। अब भविष्य में अल्लाह न कोई दूसरा दूत भेजेगा और न कोई दूसरी किताब।

2) जो व्यक्ति मुहम्मद साहब और कुरान पर ईमान न लावें, वह काफिर है। काफिर

को कल्मा या कटार से मुसलमान बना लेना पुण्य है। यही जिहाद कहलाता है। जिहाद प्रत्येक मुसलमान का मज़हबी कर्तव्य है।

3) जो काफिर को मारे वह गाजी और जो मुसलमान मारा जाये, वह शहीद कहलाता है। दोनों को ही इस पुण्य कार्य के बदले में जन्नत मिलती है।

4) जिहाद में काफिरों का जो माल और स्त्री-बच्चे प्राप्त हों, वह माले गनीमत है। इसका पाँचवा हिस्सा खलीफा का तथा शेष लूटने वाले मुसलमानों का है।

5) जो व्यक्ति ऊपर से इस्लाम को माने, लेकिन अन्दर से नहीं, वह 'मुनाफिक' कहलाता है तथा मुसलमान बनकर उसके सिद्धान्तों से फिर जाने वाला 'मुरतिद' कहलाता है। दोनों ही सर-कलम किये जाने योग्य हैं।

6) कयामत के दिन जब अल्लाह निर्णय देगा तो मुहम्मद साहब की सिफारिश पर मुसलमानों को जन्नत और गैर-मुसलमानों को दोजख प्राप्त होगा।

अबूबकर की मृत्यु लगभग 63 वर्ष की अवस्था में विष दिये जाने से हुई।

(2) उमर - अबूबकर ने अपना उत्तराधिकारी उमर को चुना। वह भी मुहम्मद साहब का ससुर था। उसकी विधवा पुत्री हफ्सा मुहम्मद साहब को ब्याही थी। खलीफा बनने के समय उमर की आयु 53 वर्ष की थी। वह जब पच्चीस वर्ष का युवक था, तब मुहम्मद साहब का सिर काटने को घर से निकला था। किन्तु अपनी बहिन के समझाने से वह कट्टर मुसलमान बन गया। वह दायें हाथ से जितना कार्य कर सकता था, उतना ही बायें हाथ से भी कर सकता था। धार्मिक तर्कों का उत्तर वह तलवार की धार से देता था और तर्क करने वाले का उसी समय सिर काट डालता था। उसका डीलडौल भारी था। वह बैठा हुआ भी खड़े पुरुष की बराबर माप का था। उसका शरीर काला था तथा आँखे सदैव लाल रहती थीं। उसका सिर सफाचट था। वह सदैव एक चमड़े का चाबुक हाथ में रखता था और बदमाशों और मुहम्मद साहब के निदंक कवियों को उससे पिटवाता था।[1]

उमर के काल में सीरिया, मिस्र, पैलेस्टाइन और ईरान मुसलमानों के हाथ में आ चुके थे। छत्तीस हजार नगर और किले छीने गये, चालीस हजार मंदिर और गिरजें तोड़े गये तथा कई लाख गैर-मुस्लिम कत्ल किये गये। उसी की आज्ञा से यरूसलेम के विश्व विख्यात सुलेमान के मंदिर को तोड़ कर उसके सम्मुख खलीफा उमर की एक मस्जिद बना दी गई। उसी के आदेश से मिस्र के सिकन्दरिया नगर के विश्वविख्यात पुस्तकालय,

---

1. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, उपरोक्त, पृष्ठ 16

जिसमें दुनियाँ भर के विद्वानों की हस्तलिखित 10 लाख पुस्तकें थीं, कुरान की विचार धारा के अनुकूल न होने के कारण, जला दी गई।

उमर की हत्या फिरोज नामक एक पारसी गुलाम ने गर्दन में छुरी भोंक कर उस समय कर दी जब खलीफा गर्दन झुकाये नमाज पढ़ रहा था।

(3) उस्मान – उमर की हत्या के पश्चात् नये खलीफा के चयन के लिये 6 व्यक्तियों की एक निर्वाचन समिति बनाई गयी। तीसरा खलीफा बनाने के लिये इस समिति की यह शर्त थी कि कुरान और हदीस को कानून मान कर अबूबकर और उमर के मार्ग पर चलना होगा। इस पर अली का कहना था कि वह कुरान और हदीस को तो मानेगा, किन्तु अबूबकर तथा उमर के मार्ग पर चलने के लिये पाबन्द नहीं हो सकता। जब यही बात उस्मान से कही गई, तो वह उसके पालन के लिये तैयार हो गया। अतः उस्मान (644–655) को तीसरा खलीफा बनाया गया। इस समय उसकी अवस्था 70 वर्ष की थी। उसे मुहम्मद साहब की दो लड़कियाँ रूकैया तथा उम्मेकुल्सूम ब्याही थीं। वह अबू सूफ़यान की उमय्या शाखा से सम्बद्ध था।

खलीफा उस्मान से मुहम्मद साहब की वह चाँदी की अँगूठी खो गई, जिसे अनपढ़ होने के कारण मुहम्मद साहब प्रयोग करते थे। इस अँगूठी पर 'मुहम्मद रसूलल्लाह' खुदा हुआ था तथा इसका प्रयोग अबूबकर और उमर ने भी किया था।

उस्मान के समय में उमर की पुत्री और मुहम्मद साहब की चौथी पत्नी हफ्सा के पास की कुरान को छोड़कर अन्य प्रतियों को पाठ–भेद के कारण जलवा दिया गया। हफ्सा वाली प्रति की कई नकलें कराकर सीरिया, मिस्र, ईरान आदि देशों में भेजी गईं। वर्तमान कुरान यही है। इतिहासकार डेवनपोर्ट का कथन है कि वर्तमान कुरान की रचना मुहम्मद साहब की मृत्यु के कइ वर्ष बाद हुई।[2] कुरान के किसी शब्द को बदलने का किसी को भी कोई अधिकार नहीं है। न इस पर कोई वाद-विवाद ही किया जा सकता है।

लगभग 11 वर्ष के शासन के बाद 82 वर्ष की अवस्था में उस्मान को मुसलमानों के ही एक वर्ग द्वारा उसके निवास में घुस कर कत्ल कर दिया गया। हत्या के तीन दिन बाद उसकी सड़ती हुई लाश को बिना नहलाये ही दफना दिया गया।

(4) अली – उस्मान की हत्या के पश्चात अली (655–60) खलीफा बना। आयशा उसकी शत्रु थी। उधर तलहा, जुवैर, जवीर और मुआविया भी खिलाफत के प्रत्याशी

2. डेवनपोर्ट, एन एपोलौजी फॉर मुहम्मद एण्ड कुरान, पृष्ठ 68

थे। इन लोगों ने यह प्रचारित किया कि उस्मान की हत्या में अली का हाथ है। अली और आयशा की सेनाओं में जमकर युद्ध हुआ, जिसमें आयशा के हजारों लोग मारे गये। वह बन्दी बना ली गई, किन्तु अली ने उसे ससम्मान चालीस दासियों सहित मदीना भेज दिया।

किन्तु अली का एक शत्रु मुआविया अभी भी बचा हुआ था। वह सीरिया का राज्यपाल था तथा उमैय्या वंश के नेता अबू सूफ़यान का पुत्र था। उससे अली के कई युद्ध हुये जिसमें दोनों पक्षों के लगभग 1 लाख मुसलमान मारे गये। 660 ई० में 5 वर्ष के शासन के पश्चात् कूफा (ईराक) में अली पर अब्दुल रहमान नामक एक व्यक्ति ने नमाज पढ़ते हुये बार किया जिससे उसका सिर फट गया और वह तीन दिन बाद 63 वर्ष की आयु में मर गया। उसके 15 पुत्र और 16 पुत्रियाँ थीं।

अली के पश्चात् उसका पुत्र हसन पाँचवा खलीफा बना, किन्तु शीघ्र ही मुआविया ने उससे खलीफा पद छीन लिया। मुआविया (660–680) ने मदीना के स्थान पर सीरिया के नगर दमिश्क को अपने साम्राज्य की राजधानी बनाया। सीरिया अब एक शक्तिशाली इस्लामिक साम्राज्य के प्रसार का केन्द्र बन गया। हसन की एक पत्नी ने उसे जहर देकर मार दिया क्योंकि मुआविया के पुत्र यजीद ने उसे प्रलोभन दिया कि वह उससे विवाह कर लेगा। किन्तु बाद में यजीद ने उसे कत्ल कर दिया।

मुआविया के पश्चात् उसका पुत्र यजीद सातवाँ खलीफा बना। यजीद ने अली के दूसरे लड़के हुसैन को कर्बला के युद्ध में 72 साथियों सहित 680 ई० में मरवा दिया। हुसैन के सिर को कलम कर उस पर थूका गया और उसे ठोकर मारी गई।

✓ अली का जन्म काबा में हुआ था। वह आयशा से शत्रुता के कारण ही प्रथम खलीफा न बन सका। उसके समर्थक 'शिया' कहलाते हैं और वे उससे पूर्व के तीनों खलीफाओं को मान्यता न देकर मुहम्मद के बाद अली को ही खलीफा मानते हैं, जबकि मुहम्मद साहब और अली के मध्य अबूबकर, उमर और उस्मान को खलीफा मानने वाले 'सुन्नी' कहलाते हैं। डॉ० इर्तिजा हुसैन लिखते हैं, "सुन्नी समुदाय के अनुसार पैगम्बर के उत्तराधिकारी खलीफा हैं जिनमें प्रथम चार, जिन्हें 'खुलफा-इ-राशिदीन' कहते हैं, प्रमुख तथा सबसे अधिक सम्मानित हैं। शिया समुदाय के अनुसार पैगम्बर के उत्तराधिकारी 12 इमाम हैं।"[3]

✓ सुन्नी ओर शिया मुसलमानों में एक मौलिक राजनैतिक और कानूनी अन्तर यह

3. डा० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 19

है कि सुन्नी खिलाफत (खलीफाओं में आस्था) और शिया इमामत (इमामों में आस्था) को महत्व देते हैं। सुन्नियों के लिए खलीफा हजरत मुहम्मद का चयनित उत्तराधिकारी है। उसे सर्वोच्च राजनैतिक और सैनिक अधिकार प्राप्त होते थे, जबकि उसका मज़हबी स्तर सीमित होता था। शियाओं के लिए नेतृत्व इमाम में निहित हैं जिसे हजरत मुहम्मद और अली का सीधा वंशज होना चाहिये। वह शियाओं का न केवल राजनैतिक नेता ही होता है, अपितु वह इस्लामिक कानून का अन्तिम आधिकारिक व्याख्याता भी होता है।[4]

जबकि सुन्नी कल्मा - 'ला इलाह इल्ललाह, मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' में विश्वास करते हैं, शिया इसमें 'अली युनवली अल्लाह' भी जोड़ते हैं। सुन्नी मुहम्मद साहब को अल्लाह का रसूल मानते हैं तथा उमर को नायब रसूल मानते हैं। शिया मुहम्मद साहब को रसूल तो मानते हैं, किन्तु उमर को नायब रसूल न मान कर अली को नायब रसूल मानते हैं। शिया मुआविया और यजीद को भी खलीफा नहीं मानते हैं। ये कर्बला में हुसैन की हत्या को हर वर्ष दस दिन मुहर्रम के रूप में शोक भी मनाते हैं। शिया समुदाय के लोग काबा पर अपना विशेषाधिकार मानते हैं तथा इसके बाद कर्बला को अपना पवित्र स्थान मानते हैं।

मुहर्रम के अवसर पर बहुत से शिया 'तवर्रा' करते हैं जिसमें वे इस्लाम के प्रथम तीन खलीफाओं - अबूबकर, उमर और उस्मान को सत्ता का अपहरणकर्त्ता मानते हुये उनके प्रति अपशब्द प्रयोग करते हैं। सुन्नी 'तवर्रा' की प्रतिक्रिया में 'मदहे सहाबा' करते हैं जिससे उन स्थानों पर जहाँ शिया बहुमत में हैं या सुन्नियों के बराबर हैं, शिया-सुन्नी दंगे हो जाते हैं। इमाम अयतुल्ता खोमैनी के काल में आठ वर्ष तक हुआ ईरान-ईराक युद्ध जिसमें लगभग 15 लाख मुसलमान मारे गये, इसी शिया-सुन्नी वैचारिक विरोध का परिणाम था, जबकि खोमैनी को ईराक के तत्कालीन राष्ट्राध्यक्ष सद्दाम हुसैन (सुन्नी) ने उस समय अपने देश में शरण दी थी जब उसे ईरान के शाह रजा पहलवी के कारण स्वदेश छोड़ना पड़ा था। इसी प्रकार लख्नऊ और कानपुर में भी आये दिन होने वाले शिया-सुन्नी दंगे इसी वैचारिक विरोध के परिणाम हैं।

शिया मुताअ में आस्था रखते हैं, जो कि एक निश्चित अवधि के लिए विवाह है। अवधि समाप्त हो जाने के पश्चात् यह पति-पत्नी सम्बन्ध स्वतः ही टूट जाता है। ईरान में मुताअ अभी भी प्रचलित हैं। सुन्नी मुताअ में आस्था नहीं रखते, किन्तु शियाओं

4. जॉन एल० एस्पोजिटो, उपरोक्त, पृष्ठ 11

का कहना है कि मुताअ निकाह का लघु रूप ही है क्योंकि दोनों ही पति-पत्नी के मध्य समझौता हैं।

शिया लोगों पर यह दोषारोपण किया जाता है कि उनके परिवार का मुखिया अतिथि को भोजन देने से पूर्व परोसी हुई थाली में थूकता है।

कालान्तर में इस्लाम में एक तीसरा मत भी उत्पन्न हुआ जिसे उन्नीसवीं सदी में पंजाब में मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी ने प्रारम्भ किया था। इनके अनुयायी कादियानी अथवा अहमदिया कहलाते हैं। कादियानी मुहम्मद साहब को रसूल तो मानते हैं किन्तु अन्तिम नहीं। वे मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी को अन्तिम रसूल मानते हैं। इस्लाम में मुहम्मद साहब के पश्चात कोई पैगम्बर नहीं हो सकता, किन्तु अहमदियों का कहना है कि पैगम्बर तो हर युग में हो सकता है। पाकिस्तान में उन्हें जुल्फिकार अली भुट्टो के प्रधानमन्त्रित्व काल में मताधिकार से वंचित कर दिया गया तथा राष्ट्रपति जिया उल हक के शासन काल में उन्हें गैर-मुस्लिम घोषित कर दिया गया था। अहमदियों को सऊदी अरब में हज यात्रा करना भी निषिद्ध है।

खिलाफत का अन्त

मुहम्मद साहब की मृत्यु के पश्चात् प्रथम चार खलीफाओं–अबूबकर, उमर, उस्मान और अली के शासन काल में इस्लाम विश्व के अनेक भागों में फैल गया। खलीफा हसन के सत्ताच्युत होने के पश्चात् उमैया राजवंश के 14 शासकों ने 661 ई० से 750 ई० तक लगभग 90 वर्ष शासन किया। इनकी राजधानी दमिश्क थी। इन शासकों ने सम्पूर्ण सीरिया, ईरान, मेसोपोटेमिया, मिस्र आदि पर विजय प्राप्त कर ली। एशिया माइनर को इस्लामिक रणबांकुरों द्वारा रौंद डाला गया। ख़लीफा वलीद ने दमिश्क में मस्जिद बनवाने के लिये ईसाइयों के प्राचीन, सुन्दर एवं प्रसिद्ध गिरजाघर सेन्टजान को शक्ति के बल पर गिरवा दिया। ईसाइयत के पाँच बड़े राज्य नगर जिनमें दमिश्क, यरूसलम और सिकन्दरिया भी थे, जला दिये गये। इसके पश्चात् शीघ्र ही कुस्तुन्तुनिया का भी पतन हो गया। इतिहासकार सर बुल्जले हेग का कहना है कि इस्लाम का उदय इतिहास के चमत्कारों में से एक है। 622 ई० में मुहम्मद साहब ने मक्का को छोड़कर मदीना में शरण ली थी। एक शताब्दी के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी एक इतने विशाल साम्राज्य पर राज्य करने लगे जो अटलांटिक महासागर से सिन्धु और कैस्पियन सागर से नील नदी तक फैला हुआ था।

इस्लामिक तलवार का कहर यूरोप को भी देखना पड़ा। सर्वाधिक अत्याचार तो स्पेन के ईसाइयों पर हुआ, जहाँ कल्मा न पढ़ने पर हजारों ईसाइयों को एक खाई में फिकवा कर उन्हें मिट्टी से दबा दिया गया। 632 ई० में खलीफा सुलेमान के समय उसके सेनापति अब्दुल रहमान ने फ्रांस पर आक्रमण किया। उसके गिरजाघरों और नगरों को लूट लिया गया, किन्तु फ्रॉसिसियों ने रात-दिन के कड़े संघर्ष के पश्चात् अब्दुल रहमान को मार दिया तथा मुस्लिम सेना को भगा दिया। फिर भी हिजरत की प्रथम शताब्दी के अन्त में खलीफे पृथ्वी के अत्यन्त निरंकुश और शक्तिशाली शासक थे। उमैया वंश के खलीफाओं का साम्राज्य इतना विशाल हो गया कि इन्हें अपनी राजधानी मदीना के स्थान पर दमिश्क परिवर्तित करनी पड़ी। 717 ई० में मक्का और मदीना का मज़हबी स्वरूप नष्ट हो गया तथा वे संगीत, सुरा और अन्य विलासताओं के केन्द्र बन गये।[1]

1. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लाम, 1970

750 ई० में अब्दुल अब्बास ने खलीफाओं के अब्बासी वंश की स्थापना की। डॉ० इर्तिजा हुसैन लिखते हैं। "तदन्तर एक रक्तिम क्रान्ति के द्वारा अब्बासी राजवंश सत्ता में आया जिसके 37 शासकों ने 750 ई० से 1258 ई० अर्थात् लगभग 5 शताब्दियों तक बगदाद (ईराक) को अपनी राजधानी बना कर शासन किया।" [2]

अब्दुल अब्बास ने अपना शासन कार्य प्रत्येक उमैया वंशी को कारावास में डाल कर प्रारम्भ किया। उसने उनकी हत्या के आदेश दिये। उनके शवों को संचित कर उन्हें चमड़े के गलीचे से ढका गया तथा उनसे निर्मित घृणाजनक मंच पर बैठ कर अब्बास और उसके साथियों ने उत्सव मनाया। इसके अतिरिक्त उमैया खलीफाओं के मकबरों को उखाड़कर उनकी अस्थियों को जलाया गया और उन्हें चारों दिशाओं में फेंका गया।

उमैया खलीफाओं के ध्वज का रंग सफेद था, जबकि अब्बासी खलीफ़ाओं के ध्वज का रंग काला। अब्बासियों ने बगदाद को शिक्षा और कला का महत्वपूर्ण केन्द्र बना दिया। अल मंसूर और हारूल-उर-रशीद अब्बासी खलीफ़ाओं में अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

846 ई० में मुसलमानों ने रोम के सेण्टपीटर और सेण्टपोल समाधि स्मारकों को ध्वस्त कर लूट लिया। सेण्टपीटर के चर्च की चाँदी की वेदी जो कि रोमन ईसाइयों के मत का मुख्य चिन्ह थी, तोड़ दी गई और उसकी चाँदी को लूट कर अफ्रीका भेज दिया गया। इस प्रकार रोम का घोर अपमान किया गया।

1258 ई० में हलाकू ने बगदाद पर आक्रमण कर अब्बासी राज्य को बुरी तरह से लूटा और उनके शासन का अन्त कर दिया। उसने तत्कालीन अब्बासी खलीफा और उसके परिवारजनों की हत्या कर दी। लगभग दो वर्ष इस्लामिक जगत में कोई खलीफा नहीं रहा। 2 वर्ष के बाद इसी वंश के एक व्यक्ति को काहिरा में खलीफा के पद पर प्रतिष्ठित कर दिया गया।

अब्बासी राजवंश मिस्र में लगभग 250 वर्षों तक खलीफा पद को सुशोभित करता रहा। इनका शासन 1261 ई० से 1517 ई० तक रहा, जिसमें खिलाफत का प्रादेशिक अधिकार बहुत कुछ जाता रहा। मिस्र के अब्बासी खलीफाओं की संख्या 17 रही।

1517 ई० में तुर्की के सुल्तान सलीम ने मिस्र पर आक्रमण कर उस पर अधिकार कर लिया। उसने खलीफाओं के अन्तिम वंशज से खलीफा की उपाधि प्राप्त की। तब से अन्त तक उसी वंश के खलीफा होते आये हैं। इस वंश के 28 खलीफ़ा

2. डॉ० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 20

हुये। इनकी राजधानी कुस्तुन्तुनिया थी। सुल्तान सलीम कई कारणों से इस्लाम का संरक्षक कहा जाने लगा। अपने समय में सर्वाधिक सशक्त शासक होने के कारण ही उसे खलीफ़ा की उपाधि दी गई थी। जिस समय उसने खलीफा की उपाधि प्राप्त की, उस समय मुल्ला-मौलवियों में भारी विवाद उत्पन्न हो गया। अन्त में मक्का में सुल्तान सलीम को खलीफा स्वीकार कर लिया गया। किन्तु, फिर भी शियाओं ने उसे खलीफ़ा स्वीकार नहीं किया।

प्रथम विश्व युद्ध में तुर्की ने इंग्लैण्ड, फ्रॉस आदि देशों के विरूद्ध जर्मनी का साथ दिया। इससे विश्व भर के मुसलमानों में बेचैनी फैल गयी। किन्तु तभी इंग्लैण्ड ने घोषणा की कि वह मुसलमानों के धार्मिक चिन्हों तथा काबा को कोई भी क्षति नहीं पहुँचने देगा। किन्तु जैसे ही मित्र राष्ट्रों की विजय हुई, उन्होंने न केवल तुर्की के विशाल साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया, अपितु खलीफा को ही पदच्युत कर उसे उसके महल में नजरबन्द कर दिया। विश्व युद्ध से पहले तुर्क साम्राज्य का क्षेत्रफल लगभग 18 लाख वर्ग मील था, जो विघटन के पश्चात् लगभग 1000 वर्गमील ही रह गया। सीवर की संधि के आधार पर तुर्की से अफ्रीकी प्रदेश छीन लिये गये और मक्का, मदीना, कर्बला, येरूसलम आदि तीर्थ स्थानों पर भी खलीफ़ा का कोई अधिकार नहीं रहा, क्योंकि अरब, ईराक, फिलिस्तीन आदि क्षेत्र उसके अधिकार से निकल गये।

बाद में तुर्की का राष्ट्राध्यक्ष अतातुर्क कमाल पाशा बना। आधुनिकतावादी होने तथा ब्रिटिश संसदीय लोकतन्त्र में आस्था रखने के कारण उसने खलीफा को तुर्की से निष्कासित कर दिया। अन्तिम खलीफा मुहम्मद षष्ठम के समय में मार्च, 1924 में तुर्की की राष्ट्रीय संसद ने खिलाफत की समाप्ति की विधिवत घोषणा कर दी। इस प्रकार खिलाफत का सदैव के लिये अन्त हो गया। आज किसी भी इस्लामिक देश में किसी भी रूप में खिलाफत का अस्तित्व नहीं रहा।

इस्लामी राज्य और गैर-मुस्लिम

इस्लाम मानव जाति को दो भागों में विभक्त करता है–मिल्लत और कुफ्र। वे लोग जो मुहम्मद साहब को अन्तिम पैगम्बर और कुरान को ज्ञान की अन्तिम पुस्तक मानते हैं, मिल्लत हैं तथा जो लोग मुहम्मद और कुरान पर विश्वास नहीं लाते हैं, वे कुफ्र (काफ़िर) हैं। कुरान के अनुसार प्रत्येक मुसलमान का यह मज़हबी कर्त्तव्य है कि वह काफ़िर को मुसलमान बनाकर मिल्लत में शामिल करे। ऐसा करना उसके लिये सबाब (पुण्य) का कार्य है तथा जन्नत प्राप्त करने का सबसे सरल मार्ग है।

इस्लाम देशों को भी दो भागों में बाँटता है- 'दारुल-इस्लाम' और 'दारुल-हरब'। जिस देश में मुस्लिम बहुमत में होते हैं तथा शरीयत के अनुसार वहाँ राज्य चलता है, वह देश या भूखण्ड दारूल-इस्लाम (इस्लाम की भूमि) कहलाता है, किन्तु जहाँ गैर-मुस्लिमों का प्रभुत्व हो, उसे दारूल-हरब (युद्ध-भूमि) कहते हैं। इस्लाम की अन्तर्निमित दारूल-इस्लाम और दारूल-हरब की अवधारणा ने अन्ततः 1947 में भारत का मज़हब के आधार पर विभाजन करने में सफलता प्राप्त की। पाकिस्तान के निर्माण के पश्चात् इस्लाम की दृष्टि में शेष हिन्दुस्तान दारूल-हरब हैं। कश्मीर घाटी और कुछ पूर्वोतर राज्यों को दारूल-इस्लाम में परिवर्तित करने के लिये आज भी संघर्ष जारी है।

इस्लामी राजनीति की दिशा निश्चित है। उसका राष्ट्रवाद केवल इस्लाम पर आधारित है। इस्लाम प्रादेशिक राष्ट्रीयता और धार्मिक सहिष्णुता को नहीं मानता। कुरान के अनुसार चीन का मुसलमान, ईराक का मुसलमान तथा भारत का मुसलमान सभी इस्लामिक राष्ट्रवाद के घटक हैं। इस दृष्टि से भारत में रहने वाले एक मुसलमान के लिये पड़ौसी हिन्दू के स्थान पर विदेश में रहने वाला एक मुसलमान भावनात्मक दृष्टि से अधिक निकट है। डॉ० भीमराव अम्बेडकर का मत है कि जहाँ कहीं भी इस्लाम का शासन है, कोई भी मुसलमान उसे अपना ही देश समझता है। दूसरे शब्दों में, इस्लाम किसी भी सच्चे मुसलमान को भारत को अपनी मातृभूमि और हिन्दू को अपना सम्वन्धी मानने की अनुमति कभी भी नहीं दे सकता। सम्भवतय यही कारण है कि मौलाना मुहम्मद अली जैसे भारतीय मुस्लिम नेता ने भारत के स्थान पर यरूसलम में अपने को दफवाना चाहा।[1]

1. डा० भीमराव अम्बेडकर, पाकिस्तान एण्ड दी पार्टीशन ऑफ इण्डिया, पृष्ठ 330-31

मुसलमान गैर-मुस्लिमों के साथ एक नस्ल, एक भाषा और एक देश होने के बावजूद भी न तो शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के साथ रह सकते हैं और न एक राष्ट्र की भावना से। उदाहरण के लिये, भारत में अधिकांश मुसलमान धर्म परिवर्तित हिन्दुओं की सन्तान हैं। उनके पूर्वज हिन्दू ही थे जिन्हें प्रलोभन या भय से हिन्दू धर्म छोड़ कर इस्लाम स्वीकार करना पड़ा। भारत के प्रत्येक प्रान्त में मुसलमान वही भाषा बोलते हैं जो हिन्दू बोलते हैं। उनके आर्थिक हित भी हिन्दुओं से सम्बद्ध हैं। किन्तु फिर भी भारत के लगभग शत-प्रतिशत मुसलमानों ने मुस्लिम लीग के द्विराष्ट्रवाद के सिद्धान्त को मान कर पाकिस्तान की माँग की थी। साथ ही जो मुसलमान खण्डित भारत में रह गये, वे अभी तक राष्ट्र-जीवन के साथ समरस नहीं हो सके हैं। मुसलमानों में पृथकतावाद की विचारधारा के पीछे उनका मज़हब है जो उस किसी भी व्यक्ति या समाज को सहन नहीं करता जो मुहम्मद को अल्लाह का अन्तिम रसूल और कुरान को अल्लाह की अन्तिम पुस्तक नहीं मानते। इसीलिए डॉ० अम्बेडकर हिन्दुस्तान को एक रूप समाज का राष्ट्र बनाने के लिए हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के मध्य जनसंख्या का मज़हब के आधार पर आदान-प्रदान अत्यावश्यक मानते थे, ठीक वैसे ही जैसे तुर्की, यूनान और बल्गारिया में हुआ। [2]

कुरान के आदर्शों पर जो देश आधारित नहीं हैं, इस्लाम उनकी सार्वभौमिकता को नहीं मानता। यह मुसलमानों का कर्त्तव्य है कि वे गैर-इस्लामिक देशों को अपने अधीन करके उन्हें दारूल-इस्लाम में बदल दें, जहाँ गैर-मुस्लिम नागरिक न होकर गुलाम माने जाते हैं। दारूल-हरब में पहले किसी भी प्रकार वहाँ के शासक को मुसलमान बनाकर इस्लामिक राज-सत्ता स्थापित कर लेना चाहिए ताकि वहां इस्लाम का शान्ति के साथ प्रचार किया जा सके। ऐसी स्थिति में दारूल-हरब दारूल-अमन (शान्ति की भूमि) बन जाता है। फिर शासक के साथ मिलकर वहाँ के समस्त निवासियों को मुसलमान बना लिया जाये तो वह देश दारूल-इस्लाम बन जाता है। प्रसिद्ध इतिहासकार जदुनाथ सरकार लिखते हैं, "कुरान में कानून के अनुसार मुस्लिम राज्य और उसके पड़ौसी गैर-मुस्लिम राज्यों में संधि नहीं हो सकती, क्योंकि गैर-मुस्लिम देश तो दारूल-हरब हैं अर्थात् इस्लाम के लिये युद्ध क्षेत्र हैं और मुस्लिम शासक का यह कर्त्तव्य है कि वह उसमें कत्ल और लूटमार करता रहे- उस समय तक जब तक कि इस्लाम स्वीकार न कर लें और दारूल-इस्लाम न बन जायें। ऐसा करने के पश्चात् ही वे देश उसके द्वारा रक्षित हो

2. वही, पृष्ठ 116-17

सकते हैं।"[3]

कुफ्र को मिल्लत और दारूल-हरब को दारूल-इस्लाम में परिवर्तित करने के लिये जो संघर्ष किया जाये, वह इस्लाम में जिहाद (पवित्र युद्ध) कहा जाता है। इस्लाम के प्रसार के लिए जिहाद को सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।

जिहाद तीन प्रकार का होता है :-

1. जिहाद बिडल-लिसान (जिह्वा द्वारा जिहाद),
2. जिहाद बिडल-कलम (लेखनी द्वारा जिहाद) तथा
3 जिहाद बिडल-सैफ (तलवार द्वारा जिहाद)।

दारूल इस्लाम के तीन भाग हैं :-

1 हरमैन शरीफैन
2 हिजाज तथा
3. शेष भूखण्ड

हरमैन शरीफैन मक्का और मदीना की भूमि को कहा जाता है। गैर-मुस्लिम का इनमें वसना तो दूर वे इनमें से गुजर भी नहीं सकते। इमाम अबू हनीफा केवल किताबियों (यहूदियों और ईसाइयों) को इनमें से गुजर जाने की अनुमति देते हैं, हिन्दू जैसे मूर्तिपूजक काफिरों को छूट देने को तो वे भी तैयार नहीं। कुरान में कहा गया है, "हे ईमान लाने वालो ! मुश्रिक तो नापाक हैं। तो इस वर्ष के पश्चात् ये मस्जिदे हराम (काबा) के पास न फटकने पायें,"[4] क्योंकि "ये वे लोग हैं जिनका किया धरा सब अकारथ हुआ और आग (जहन्नम) में वे सदा रहेंगे।"[5]

हिजाज से गैर-मुस्लिम गुजर तो सकते हैं, किन्तु उसमें बस नहीं सकते।

अन्य इस्लामिक राज्य, जहाँ जिम्मी सहन कर लिये जाते हैं, में भी मुहम्मद साहब का आदेश है कि उनकी बस्ती इतनी दूर होनी चाहिए कि मुसलमानों को उनके घरों का प्रकाश तक नहीं दिखाई दे।[6]

इस्लामी राज्य एक मज़हबी राज्य होता है जिसमें कुरान और हदीस के ज्ञाता उलेमाओं को सुल्तान को शासन-सम्बन्धी सभी कार्यों में परामर्श हेतु नियुक्त किया जाता है। डॉ० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव के शब्दों में, "इस्लामी राज्य में वास्तविक शासक खुदा के

3. जदुनाथ सरकार, शिवाजी, पृष्ठ 479-80
4. कुरआन मजीद, सूरा 9, आयत 28, पृष्ठ 371
5. वही, सूरा 9, आयत 17, पृष्ठ 369
6. डा० हर्षवर्धन, जजिया एण्ड दी स्प्रैड ऑफ इस्लाम, पृष्ठ 10-11

प्रतिनिधि समझे जाते हैं, जिसका कि मुख्य कर्त्तव्य यह होता है कि वे कुरान के सिद्धान्तों का पालन करायें और उनका प्रसार करें।" [7]

इस्लामी राज्य में केवल मुसलमानों को ही नागरिक माना जाता है तथा केवल उन्हें ही नागरिक अधिकार प्राप्त होते हैं। गैर-मुस्लिमों को शासित अथवा निम्न श्रेणी के लोगों के रूप में रखा जाता है। उनको इस्लामी जनतन्त्र से सदैव ही बाहर समझा गया और मुस्लिम शासन में उनके प्रति हमेशा ही भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया गया।

कुरान के सिद्धान्त गैर-मुस्लिमों को दो वर्गों में बाँटते हैं। पहले वर्ग में यहूदी और ईसाई आते हैं जिनके पास मुसलमानों की तरह ही अपनी-अपनी आसमानी पुस्तकें हैं। मुस्लिम राज्य में यहूदी और ईसाइयों को जजिया कर देने पर द्वितीय श्रेणी के नागरिक के रूप में रहने दिया जा सकता है तथा उन्हें जिम्मी (घटिया नागरिक) मानकर आंशिक धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान की जा सकती है। कुरान के अनुसार, "किताब वाले जो न अल्लाह पर ईमान लाते हैं और न अन्तिम दिन पर, और न उसे हराम करते हैं जिसे अल्लाह और उसके रसूल ने हराम ठहराया है, और न सच्चे 'दीन' को अपना दीन बनाते हैं, उनसे लड़ो यहाँ तक कि वे अप्रतिष्ठित होकर अपने हाथ से जजिया देने लगें।" [8]

जजिया एक प्रकार का 'कैपीटेशन टैक्स' या 'पोल टैक्स' था जिसके भुगतान से गैर-मुस्लिमों की स्थिति हीनतापूर्ण होती थी। [9] इसका स्वरूप मूलतः जिहादिक रहा है। यह इस बात का द्योतक है कि पृथ्वी मुसलमानों की है जिसमें गैर-मुस्लिमों को अन्ततोगत्वा कोई स्थान नहीं रह सकता। यह गैर-मुस्लिमों के लिये हत्या, लूट, गुलामी और बलात मज़हब-परिवर्तन का विकल्प है। यह आर्थिक जिहाद है। [10]

काफिरों पर जजिया लगाने का मुख्य उद्देश्य उनका अपमान करना रहा है। जजिया के डर के कारण वे न तो अच्छे कपड़े पहिन सकते थे और न ही सम्मान का जीवन जी सकते थे। जजिया वसूल करने के तरीके कभी-कभी इतने भयावह होते थे कि जिम्मी को धर्म-परिवर्तन, निष्क्रमण अथवा मृत्यु में से एक चुनने को विवश होना पड़ता था।

भारत में धनी हिन्दू को 48, मध्यम को 24 और निम्न वर्ग के हिन्दू को 12 चाँदी के सिक्के वार्षिक जजिया कर के रूप में देने पड़ते थे। बाद में इस नियम को

7. डा० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 1
8. कुरआन मजीद, सूरा 9, आयत 29, पृष्ठ 372
9. डा० हर्षवर्धन, उपरोक्त, पृष्ठ 7
10. वही, पृष्ठ 11

संशोधित कर दिया गया और यह निश्चय किया गया कि जीवन-निर्वाह के पश्चात् काफिरों से बचे हुये धन को छीन लिया जाय। फरिश्ता के अनुसार मृत्युतुल्य दण्ड देना ही जजिया का मुख्य उद्देश्य था क्योंकि इस दण्ड को देकर काफिर लोग मृत्यु से बच सकते थे। इस्लामिक कानून के चारों नेता–मलिक इब्न अंस, अंश शफी, अहमद बिन हनबल और हबू हनीफा– इस बात से सहमत है कि किसी भी इस्लामिक देश में जिम्मियों को नगरों और बड़े कस्बों में अपने पूजा गृह बनाने का अधिकार नहीं है। अबू हनीफा के अतिरिक्त अन्य तीन इस्लामिक विधिवेत्ता उन्हें कहीं भी पूजा गृह निर्माण का अधिकार नहीं देते। इस प्रकार यह कहना अनुचित न होगा कि जिम्मी न प्रथम श्रेणी के नागरिक थे और न ही द्वितीय श्रेणी के, बल्कि वे इस्लामिक राज्य की दुखी प्रजाजन थे जिन्हें न कोई राजनैतिक अधिकार प्राप्त थे और न ही कोई मौलिक अधिकार। मौलाना मौदूदी लिखते हैं, "पैगम्बर या कानूनी खलीफाओं के समय ऐसा कोई उदाहरण नहीं प्राप्त होता जहाँ जिम्मी को किसी सलाहकार परिषद (मजलिस-ए-शूरा) का सदस्य बनाया गया हो, या किसी क्षेत्र का राज्यपाल, किसी स्थान का जज, किसी विभाग का मन्त्री या प्रशासक अथवा किसी सेना का सेनापति बनाया गया है।" [11] यहूदी और ईसाइयों की तरह एक पुस्तक 'अवेस्ता' में आस्था रखने के कारण बाद में पारसियों को भी इस्लामिक राज्य में जजिया लेकर रहने देने की अनुमति प्रदान कर दी गई। किन्तु किसी भी इस्लामिक राज्य में मूर्तिपूजकों या एक अल्लाह में अन्य देवी-देवताओं को शामिल करने वालों को किसी भी प्रकार की सहनशीलता के उपयुक्त नहीं समझा जाता। डॉ० ए०एल० श्रीवास्तव का मत है कि इस्लामिक कानून के चारों प्रारम्भिक नेताओं में से "तीन मलिक इब्न अन्स (715-795), अंश शफी (767-820) और अहमद बिन हनबल (780-855) बहुत ही स्पष्ट रूप से यह मत व्यक्त करते हैं कि मूर्तिपूजकों को मुस्लिम देश में रहने का कोई अधिकार ही नहीं है। एक मुस्लिम देश वह है जिसमें मुसलमानी शासन हो या जिसमें मुसलमान रहते हों। उनके अनुसार मूर्तिपूजकों को मुस्लिम राज्य में या तो इस्लाम स्वीकार कर लेना चाहिये और नहीं तो मौत अंगीकार करनी चाहिये।" [12] इस विषय में कुरान का मुसलमानों को बिल्कुल स्पष्ट आदेश है, "फिर, जब हराम महीने बीत जायें, तो मुश्रिकों (मूर्तिपूजकों) को जहाँ-कहीं पाओ, कत्ल करो, और उन्हें पकड़ो और उन्हें घेरो, और हर घात की जगह उनकी ताक में बैठो। फिर यदि वे तौबा कर लें

---

11. मौलाना मौदूदी, इस्लामी रियासत, पृष्ठ 353
12. डा० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, उपरोक्त, पृष्ठ 3-4

और 'नमाज' कायम करें और 'जकात' दें, तो उनका मार्ग छोड़ दो।" [13]

किन्तु अबू हनीफा (669-766) का दृष्टिकोंण मूर्तिपूजकों के प्रति अपेक्षा कृत उदार रहा। उसके अनुसार मूर्तिपूजकों को इस्लाम और मृत्यु में से एक का चयन करने के साथ ही उनके सामने एक अन्य शर्त यह भी रखी जा सकती है कि वे जजिया देकर जिम्मियों की तरह निम्न श्रेणी स्वीकार कर लें।

711-12 ई० में सिंध और मुल्तान में हिन्दुओं को बहुसंख्य और सशक्त देखकर मुहम्मद बिन कासिम को भी अबू हनीफा के इस सिद्धान्त की पहलकदमी करनी पड़ी। भारत में परवर्ती मुस्लिम सुल्तान और बादशाहों ने भी मुहम्मद बिन कासिम के ही मार्ग का अनुसरण किया। मुस्लिम शासकों के इस व्यवहार से हिन्दुओं को ऐसी निम्न स्थिति में डाल दिया जिससे वे खुले रूप में न तो अपने धर्म का परिपालन कर सकते थे और न ही धर्म प्रचार कर सकते थे ! वे न नये मंदिर बनवा सकते थे और न ही पुराने मंदिरों की मरम्मत करा सकते थे।

इस्लामी राज्य का मुख्य आधार मज़हबी एकता है। इसमें काफिरों को समाप्त करना राज्य का मुख्य कर्त्तव्य होता है। कुरान के अनुसार, ""काफिरों से कहो कि अगर वे कुफ्र छोड़ देंगे तो जो कुछ हुआ है, माफ कर दिया जायेगा। लेकिन अगर वे कुफ्र पर ईमान रखें तब उनसे अन्त तक लड़ो और सबको मुसलमान बना लो।" [14]

गैर-मुस्लिमों के साथ भेदभाव पूर्ण तथा दमनकारी व्यवहार के लिये न केवल कुरान आदेश ही देती है, अपितु उसका व्यवहार में परिपालन भी अत्यावश्यक है। जब मुहम्मद साहब मदीना के शासक बन गये तो उन्होंने उन यहूदियों और ईसाइयों को जिन्हें उन्होंने परिस्थितिवश आंशिक मजहबी स्वतन्त्रता दे दी थी, नगर में पूर्ण मज़हबी एकता स्थापित करने की दृष्टि से मदीना से निष्कासित कर दिया। इस प्रकार इस्लामिक इतिहास में मदीना सबसे पहला इस्लामिक राज्य बना जिसमें एक भी गैर-मुस्लिम नहीं रहने दिया गया। उदार समझे जाने वाले द्वितीय खलीफा उमर ने भी बाद में सम्पूर्ण अरब को इस्लामिक राज्य घोषित करते हुये यहूदियों और ईसाइयों को उसमें से पूर्णरूपेण निष्कासित कर दिया। शेख हमदानी कृत जसीरात-ए-उल-मुल्क के अनुसार खलीफा उमर ने इस्लामी देशों में गैर-मुस्लिमों को जीवित रहने के लिये निम्नांकित शर्तें लागू कीं :-

13. कुरआन मजीद, सूरा 9, आयत 5, पृष्ठ 368
14. वही

1. वे नये मंदिर या पूजागृह नहीं बनायेंगे।

2. वे पुराने पूजागृहों की मरम्मत नहीं करेंगे।

3. उनके पूजागृहों में मुस्लिमों को ठहरने पर कोई रोक नहीं होगी।

4. वे अपने पूजागृहों में घण्टे नहीं बजायेंगे।

5. वे तीन दिन तक किसी भी मुसलमान को अपने घर में रहने देंगे तथा इस काल में उसके द्वारा किये गये किसी भी कार्य को पाप नहीं माना जायेगा।

6. वे अपने धर्म का प्रचार न करें।

7. वे अपने बच्चों को कुरान न पढ़ायें।

8. वे अपने किसी भाई को मुस्लिम बनने से न रोकें।

9. वे मुसलमानों जैसे नाम न रखें और न उन जैसे कपड़े पहनें।

10. वे काठी और लगाम वाले घोड़ों पर न चढ़े।

11. वे अस्त्र-शस्त्र न रखें।

12. वे शराब न बेचें।

13. वे अगूँठी न पहनें।

14. वे अपने घर मुसलमानों के घरों के निकट न बनाये।

15. वे अपने मृतकों के शव मुसलमानों के कब्रिस्तानों के निकट न लायें।

16. वे मुसलमानों के आने पर सम्मान के साथ खड़े हो जायें और जब तक बैठने की आज्ञा न मिले, खड़े रहें।

17. वे किसी मुसलमान को नौकर न रखें।

18. वे अपना पुराना लिबास न छोड़े।

19. वे अपने मृतकों के लिये ऊँची आवाज में शोक न करें।

20. वे गुप्तचर का कार्य न करें।

21. वे अपनी सभाओं में मुसलमानों को आने से न रोकें।

22. वे अरबी भाषा बोलें।

यदि गैर-मुस्लिम इनमें से किसी भी शर्त को तोड़ेंगे तो उनकी जान और माल पर मुसलमानों का वैसे ही अधिकार होगा जैसे कि युद्ध के समय काफिरों के जान व माल पर मुसलमानों का अधिकार होता है।

निकाह और तलाक

इस्लाम में विवाह हिन्दू समाज की तरह एक संस्कार नहीं, अपितु एक अनुबन्ध है जिसे पति अपनी पत्नी को तीन बार 'तलाक' कहकर तथा विवाह के अवसर पर निश्चित की गई मेहर की राशि को देकर तोड़ सकता है। भारतीय परम्परा में विवाह अनुबन्ध नहीं, अपितु जन्म-जन्मान्तरों का स्थायी बन्धन है। इसमें अर्धनारीश्वर की कल्पना कर स्त्री-पुरुष को एक इकाई माना गया है क्योंकि स्त्री के बिना पुरुष और पुरुष के बिना स्त्री अपूर्ण है। अतः पूर्णांग बनने के लिये वैवाहिक जीवन आवश्यक है। इसलिये पत्नी को अर्द्धांगिनी भी कहा गया है। हिन्दू विवाह को पणिग्रहण संस्कार भी कहते हैं। एक बार पत्नी का हाथ थाम लिया तो वह सदैव के लिये होता है। 1956 में 'हिन्दू विवाह एवं तलाक अधिनियम' पारित होने से पूर्व हिन्दुओं में तलाक दिया जाना सम्भव न था। वस्तुतः यह अधिनियम भारतीय परम्परा के पूर्ण प्रतिकूल है। इसीलिये "हिन्दू कोड बिल' में तलाक के प्रावधानों को सम्मिलित किये जाने का हिन्दू समाज द्वारा व्यापक विरोध किया गया। वैसे भी संस्कृत या इससे निकली समस्त भारतीय भाषाओं में 'तलाक' या Divorce का पर्यायवाची शब्द भी नहीं मिलता।

इस्लाम में विवाह को निकाह कहा जाता है। यह औपचारिकता व आर्थिक अनुबन्ध पर आधारित होता है। एक मुसलमान एक बार में चार पत्नी और अनगिनत रखैलें रख सकता है। कुरान के अनुसार, "स्त्रियों में से जो तुम्हारे लिये जायज हों दो-दो, तीन-तीन और चार-चार तक विवाह कर लो, और यदि तुम्हें इसका भय हो कि उनके साथ समता का व्यवहार न कर सकोगे तो फिर एक ही पर बस करो या वह लौंडी जो तुम्हारे कब्जे में हो उसी पर बस करो।"[1] शरीयत रखैलों को दाहिने हाथ का माल मानती है तथा उनसे यौन सम्बन्ध रखने की अनुमति प्रदान करती है। युद्ध में मारे जाने अथवा पराजित होने वाले गैर-मुस्लिमों की विवाहित स्त्रियाँ भी मुसलमानों के लिये हलाल हैं। वे स्वच्छन्द रूप से उनका भोग कर सकते हैं। इस्लाम अल्पायु की बालिकाओं से भी विवाह करने की अनुमति मुसलमानों को देता है।

हालाँकि उलेमा वर्ग ही नहीं अपितु असगर अली इन्जीनियर जैसे अपने को प्रगतिशील मानने वाले लेखक भी बड़े गर्व से कहते हैं कि इस्लाम में महिलाओं को

1. कुरआन मजीद, सूरा 4, आयत 3, पृष्ठ 220

कुरान ने समानता का अधिकार प्रदान किया है तथा निकाह भी तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक कि स्त्री अपनी स्वीकृति न दे दे।[2] किन्तु यह कहाँ की समानता है कि एक मुसलमान एक बार में चार-चार पत्नियाँ रखे, जब कि स्त्री को केवल एक ही पति की आज्ञा है और यदि पति का किसी भी स्त्री से मन भर जाय तो वह उसे तलाक देकर किसी अन्य स्त्री को अपनी पत्नी बना सकता है। हालाँकि कुरान बहुविवाह का आदेश तभी देती है जबकि पति अपनी सभी पत्नियों से समानता का व्यवहार कर सके, किन्तु क्या व्यवहार में ऐसा सम्भव है ? व्यवहार में तो ऐसा देखा गया है कि बहुविवाह करने वाला पति उस पत्नी को अधिक प्यार करता है जो सुन्दर और नवयौवना हो। बँगलादेश की प्रसिद्ध उपन्यास लेखिका डॉ० तस्लीमा नसरीन लिखती हैं कि इस्लामी कानून पुरुषों को अनेक बीबियाँ रखने की अनुमति देता है, तब महिलाओं को भी अनेक मर्दों से यौन सम्बन्ध रखने की अनुमति क्यों नहीं मिलनी चाहिये ? [3]

वास्तविकता तो यह है कि इस्लाम में स्त्रियों को पुरुषों के समकक्ष नहीं माना है। पुरुषों को उनसे निश्चय ही श्रेष्ठ माना गया है। कुरान के अनुसार, "पुरुषों को उन (स्त्रियों) पर एक दर्जा प्राप्त है।"[4] उलेमा वर्ग ही नहीं अपितु असगर अली इन्जीनियर भी पुरुष को स्त्री से इसलिये श्रेष्ठ मानते हैं क्योंकि पुरुष कमाता है तथा स्त्री उसके ऊपर आर्थिक दृष्टि से आधारित है। किन्तु आधुनिककाल में पाकिस्तान की पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो, बँगलादेश की पूर्व प्रधानमन्त्री बेगम खालिदा जिया एवं समाज के अन्य विभिन्न क्षेत्रों में अग्रणी मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को देखते हुये उक्त विचार के औचित्य पर स्वतः ही प्रश्नचिन्ह लग जाता है।

इस्लाम में स्त्रियाँ तो पुरुषों की केवल सम्पति मात्र हैं। वे केवल भोग की वस्तु हैं। कुरान के अनुसार, "तुम्हारी स्त्रियाँ तुम्हारे लिये खेती समान हैं तो अपनी खेती में जिस तरह से चाहो, जाओ और अपने लिये आगे बढ़ाओ।" [5]

इस्लाम में स्त्रियों के बारे में एक और बात खटकती है। वह है -पर्दे की जकड़बन्दी। इसके द्वारा स्त्रियाँ घोर एकान्त-कैद में डाल दी जाती हैं, वे कूप-मंडूप बना दी जाती हैं।[6] मुस्लिम महिलायें न बाहरी कमरों में जा सकती हैं और न बरामदे या बाग में।

2. असगर अली इन्जीनियर, उपरोक्त, पृष्ठ 26-27
3. अमर उजाला, आगरा दि० 12.8.94 में प्रकाशित एक लेख से
4. कुरआन मजीद, सूरा 2, आयत 228, पृष्ठ 165
5. वही, सूरा 2, आयत 223, पृष्ठ 164
6. राहुल सांकृत्यायन, उपरोक्त, पृष्ठ 66

वे पीछे के आँगन में घूम फिर लेती हैं। पर्दा के कारण मुस्लिम महिलाओं को अनेक प्रकार के रोग लग जाते हैं। वे बाहरी दुनियाँ से वंचित रहने के कारण अपने दृष्टिकोण में अत्यन्त संकीर्ण हो जाती हैं।[7]

न्यायालय में किसी तथ्य को सिद्ध करने के लिये एक पुरुष की गवाही पर्याप्त है, किन्तु कुरान के अनुसार उसी तथ्य को सिद्ध करने के लिये दो स्त्रियों की गवाही आवश्यक है। भाई-बहिनों में भाई को बहिन से उत्तराधिकार में दो गुना हिस्सा दिया जाता है। कुरान आवश्यकता पड़ने पर स्त्रियों की पिटाई का अधिकार भी देती है। डा० तस्लीमा नसरीन मानती हैं कि इस्लाम स्त्री के साथ गुलाम जैसा व्यवहार करता है तथा उसे कोई मानवीय गरिमा नहीं दी गई है क्योंकि इस्लाम की मान्यता है कि स्त्री पुरुष की पसली से उत्पन्न हुई है। कुरान के अनुसार, अल्लाह ने "तुम्हें एक ही जीव से पैदा किया और उसी से उसका जोड़ा पैदा किया और उन दोनों से बहुत से पुरुषों और स्त्रियों को फैला दिया।"[8]

शियाओं में मुताअ (अस्थायी विवाह) का प्रचलन आज भी विद्यमान है तथा वे इसे उचित मानते हैं। शियाओं की मान्यता है कि तलाक में मेहर दिया जाना मुताअ का औचित्य प्रदर्शित करता है। सुन्नी भी मानते हैं कि मुहम्मद साहब के जीवनकाल में कुछ समय तक मुताअ भी प्रचलित रहा, जिसे बाद में निषिद्ध कर दिया गया। ईरान में मुताअ आज भी प्रचलित है।

इस्लाम में विवाह निरस्त किया जा सकता है। किन्तु यह अधिकार केवल पति को ही प्राप्त है, स्त्री को नहीं। पति बिना किसी कारण अपनी पत्नी को, जब चाहे, तलाक दे सकता है। इसके लिये उसे किसी भी न्यायालय में जाने की आवश्यकता नहीं है। जबकि स्त्री को न्यायालय में यह सिद्ध करना होता है कि उसे तलाक दिया जाना आवश्यक है।

मुस्लिम लेखकों का कहना है कि अल्लाह की दृष्टि में तलाक सबसे घृणित चीज है। किन्तु प्रख्यात इस्लामविद् अरूण शौरी का कहना है कि यह एक औपचारिक स्थिति है क्योंकि कानून में बीबी को निकाल बाहर करना एक मुस्लिम पति के लिए दुनियां में सबसे आसान चीज बना दी गई है।[9]

इस्लाम में यह विषय आज भी विवादास्पद है कि एक ही समय में तीन बार 'तलाक'

7. डा० बी० आर० अम्बेडकर, उपरोक्त, पृष्ठ 230-32
8. कुरआन मजीद, सूरा 4, आयत 1, पृष्ठ 220
9. अरुण शौरी कृत लेख 'सिद्धान्त और आचरण' दैनिक जागरण दि० 27.5.94

कह कर पत्नी से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेना क्या पति के अधिकारों में है या इस शब्द के तीन उच्चारणों के मध्य अन्तर होना चाहिये। इस्लामी कानून के विद्वानों के एक वर्ग का मत है कि हालाँकि एक झटके में तीन बार 'तलाक' की घोषणा इस्लामी कानून के तहत पति का सदियों पुराना स्वीकृत अधिकार है, तो भी यह गैर-इस्लामिक और अवैध है। किन्तु इस्लाम के ज्ञाताओं के दूसरे वर्ग का मत है कि यह पूर्णतः वैध है क्योंकि पति केवल उसी अधिकार का प्रयोग करते रहे हैं, जो उन्हें अल्लाह, पैगम्बर और न्यायविदों ने प्रदान किया है।[10]

प्रबुद्ध मुस्लिम महिलायें मानती हैं कि मुस्लिम पतियों को तलाक का यह अधिकार कुरान विरूद्ध है क्योंकि इसकी सूरा 65 'अल-तलाक' के अनुसार तलाक तीन माह में ही हो सकता है। इसी प्रकार 'अहले हदीस' के मुफ्तियों का कहना है कि एक ही समय में तीन बार तलाक कह देने से तलाक वैध नहीं माना जाना चाहिये, अपितु एक समय में तीन बार तलाक कहे जाने को भी एक ही बार कहा गया मानना चाहिये।[11] वास्तव में तीन माह तक लगातार जब व्यक्ति प्रतिमाह तलाक कहे, तब उस तलाक को वैध मानना चाहिये। तीन माह तक सोचने-समझने और विचार-विमर्श करने के पश्चात् भी यदि व्यक्ति तलाक के अपने निर्णय पर दृढ़ रहता है, तो ही उसे वैधता दी जानी चाहिये।

किन्तु वास्तविकता यह है कि इस्लाम में पति कभी भी नशे या क्रोध में तीन बार 'तलाक' शब्द का उच्चारण कर पत्नी से विवाह-विच्छेद कर सकता है जिससे कि पत्नी को नारकीय जीवन जीने के लिये बाध्य हो जाना पड़ता है। जमीयत उलेमा-ए-हिन्द तथा मुस्लिम व्यक्तिगत कानून के नेताओं का कथन है कि सुन्नी परम्परा में चारोमतों-हनफी, मलकी, शफी और हनबली में तीन बार तलाक कहकर तलाक देने की परम्परा है। उनका मत है कि द्वितीय खलीफ़ा उमर के समय से तीन बार 'तलाक' कह देने से तलाक देने का तरीका प्रचलित हुआ। उनके अनुसार यह पद्धति महिलाओं के लिये अन्याय पूर्ण हो सकती है, किन्तु शरीयत के अनुसार तलाक देने की यही पद्धति वैध है। उलेमा वर्ग का यह भी कहना है कि क्रोध, नशा, लालच, मजाक या गलती में दिया गया तलाक सही है, क्योंकि यदि कोई ऐसी स्थिति में किसी का सिर काट दे तो सिर तो कट ही जाता है, उसी प्रकार तलाक भी हो जाता है, किन्तु इन उलेमाओं

10. अरुण शौरी, ए सैक्यूलर एजेन्डा, पृष्ठ 110

11. डा० महरउद्दीन खाँ कृत 'राष्ट्रीय सहारा' दि० 27.5.94 में प्रकाशित 'मौजूदा कानून कुरान सम्मत नहीं' लेख से

से पूछा तो जा ही सकता है कि यदि कोई क्रोध, नशे या मजाक में इन्हें गुलाम कह दे तो क्या ये उसके गुलाम हो जायेंगे ?

और भी आश्चर्य की बात यह है कि एक ओर तो इस्लाम शराब पीने को निषिद्ध करता है, जबकि दूसरी ओर उलेमा वर्ग नशे में दिये तलाक को वैध मानता है।

उलेमाओं के अनुसार स्त्री को अपने पति को तलाक देने का कोई अधिकार नहीं है। यहाँ तक कि देश की न्यायपालिका को भी उसे तलाक कराने का अधिकार नहीं है। न्यायालय से तलाक के पश्चात स्त्री द्वारा किया गया दूसरा विवाह भी गैर-कानूनी है, क्योंकि निकाह की गाँठ शरीयत ने पुरुष के हाथ में रखी है। अतः न्यायपालिका के माध्यम से भी स्त्री निकाह से नहीं निकल सकती जब तक कि स्वयं पति उसे तलाक न दे। इसलिये स्त्री के सिर पर पुरुष की तलवार सदैव टंगी रहती है क्योंकि वह जब चाहे, उसे तलाक दे सकता है या उसके सीने पर सौत बैठा सकता है और वह भी एक नहीं, अपितु तीन-तीन।

कुरान के अनुसार, "नबी (मुहम्मद) के लिये चार से अधिक पत्नियाँ हलाल थीं और दूसरे मुसलमान यदि एक साथ चार से अधिक पत्नियाँ नहीं रख सकते तो उनके लिये यह आरानी है कि उन्हें यदि अपनी किसी पत्नी को तलाक देनी पड़ जाये तो वे तलाक दे सकते हैं, और उसके बदले किसी दूसरी स्त्री से विवाह कर सकते हैं परन्तु नबी के लिये अपनी पत्नियों को तलाक देना हराम था।" [12]

इस्लाम में तलाक के पश्चात् स्त्री पुनः अपने पति के पास नहीं जा सकती क्योंकि फिर वह उसके लिये हलाल नहीं रहती। पति का पुनः साथ प्राप्त करने के लिये उसे हलाला करना पड़ता है। इसमें उसे किसी और से निकाह करके, उसके साथ कम से कम एक रात व्यतीत करना आवश्यक है। फिर यदि उसका दूसरा पति उसे स्वेच्छा से तलाक दे दे तो इसके पश्चात् ही वह अपने पहले पति की इच्छा होने पर दोबारा उससे निकाह कर सकती है। इस समूचे खेल में पत्नी बेचारी गुड़िया बनी रहती है क्योंकि तलाक तो पति देता है किन्तु हलाला उसे करना पड़ता है। कुरान के अनुसार- "तो यदि उसे तलाक दे दे, तो फिर उसके लिये यह स्त्री जायज नहीं है जब तक कि किसी दूसरे पति से विवाह न कर ले। फिर यदि वह उसे तलाक दे दे, तो फिर इन दोनों के लिये एक दूसरे की ओर पलट आने में कोई दोष न होगा।" [13]

12. कुरआन मजीद, पृष्ठ 743
13. वही, सूरा 2, आयत 230, पृष्ठ 165-66

असगर अली इन्जीनियर का कहना है कि यदि स्त्री अपने पति से पृथक होना चाहती है तो वह शरीयत के तहत प्राप्त "खुलआ' के अपने अधिकार के माध्यम से कर सकती है।[14] 'खुलआ' के द्वारा दिया गया तलाक पत्नी की इच्छा से दिया गया एक ऐसा तलाक है जिसमें विवाह-बन्धन से अपनी मुक्ति के लिये वह पति को कुछ प्रतिफल देती है। वस्तुतः 'खुलआ' पत्नी द्वारा पति से खरीदा गया तलाक का अधिकार है।

'खुलआ' के द्वारा पत्नी की ओर से छुटकारे का प्रस्ताव होना आवश्यक है। इस छुटकारे के बदले में उसे अपने पति को कुछ देना आवश्यक है। किन्तु सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इस प्रस्ताव को पति द्वारा स्वीकार किया जाना आवश्यक है अन्यथा पत्नी के लिये पति से मुक्ति पाने का और कोई रास्ता नहीं है।[15]

हनफी, शफी, हनबली और शिया कानूनों के अनुसार न्यायालय को पति के ऊपर 'खुलआ' लागू करने का कोई अधिकार नहीं है। पत्नी के 'खुलआ' के प्रस्ताव को स्वीकार करना या न करना पूरी तरह पति की इच्छा पर निर्भर है। यदि पति इसे अस्वीकार कर दे तो पत्नी पति से मुक्त नहीं हो सकती।

एक ओर तो उलेमावर्ग पति को यह अधिकार देते हैं कि वह बिना किसी कारण पत्नी को तीन बार 'तलाक' कहकर अपने जीवन से पृथक कर सकता है वहीं दूसरी ओर वे पत्नी को अपने पति से पृथक होने का कोई अधिकार नहीं देते। जबकि पति अपनी पत्नी को किसी भी समय किसी भी आधार या बिना किसी आधार के पृथक कर सकता है, ऐसा कोई आधार नहीं जिससे पत्नी पति के अत्याचारी होने के बाबजूद भी उससे पृथक हो सके।[16] यदि किसी स्त्री का पति लापता हो जाये, तब भी उलेमा वर्ग उसे दूसरा निकाह करने का अधिकार नहीं देते। इस सम्बन्ध में हनफी मुस्लिम विधि विशेषज्ञ मौलाना अशरफ अली का कहना है, "जिसका शौहर बिल्कुल लापता हो जाये, मालूम नहीं कि जिन्दा है या मर गया, तो वह औरत दूसरा निकाह नहीं कर सकती। बल्कि इन्तजार करती रहे कि शायद शौहर आ जाये। जब इन्तजार करते-करते इतनी उम्र मुद्दत गुजर जाये कि शौहर की उम्र नब्बे बरस की हो जाये तो अब हुक्म लगा दे कि वह मर गया होगा। सो अगर वह औरत अभी जवान हो और निकाह करना चाहे तो शौहर की उम्र नब्बे बरस की होने के बाद इद्दत पूरी करके निकाह कर सकती

14. असगर अली इन्जनीयर उपरोक्त, पृष्ठ 34
15. मरियम बीबी बनाम मीर मुहम्मद वाद, 1952 लाहौर उच्च न्यायालय
16. अरूण शौरी, उपरोक्त, पृष्ठ 104

है। मगर शर्त यह है कि इस लापता मर्द के मरने का हुक्म किसी शरई हाकिम ने लगाया हो।"[17]

उलेमा वर्ग यह मानता है कि शरीयत अल्लाह के द्वारा नियत होने के कारण परिवर्तित नहीं की जा सकती। किन्तु मुस्लिम विधि विशेषज्ञ प्रो० ताहिर महमूद शरीयत के बारे में कहते हैं, "सच्चे इस्लामी तलाक कानून को समुचित रूप से नियमबद्ध या संहिताबद्ध करना उन लोगों की तालीम के लिये अनिवार्य है जो इससे जुड़े हैं, इस पर तर्क-वितर्क करते, इसे लागू करते, या पढ़ाते हैं। जबकि अभी तलाक सम्बन्धी कानून खुद ही नियमबद्ध नहीं है, और संहिताबद्ध होने की तमाम विपदाओं से ग्रस्त हैं तब, औरतों के तलाक के बाद के अधिकारों को नियमबद्ध करना, न तो इस कानून का पालन करने वालों की समझदारी का सबूत है, न ही इसके शिक्षकों, पैरवीकारों और प्रशासकों की समझदारी है।"[18]

इसी प्रकार मुजफ्फर हुसैन का कहना है, "मुस्लिम पर्सनल लॉ सम्बन्धी जितने भी कानून हैं, वे पुरुष-प्रधान समाज के लिये बनाये गये हैं। पर्सनल लॉ में इस बात का कहीं भी प्रावधान नहीं है कि अपराधी पुरुष को दण्डित किया जाय। समानता का सिद्धान्त पर्सनल लॉ के तहत मेल नहीं खाता। विरासत में मुस्लिम महिला को पर्सनल लॉ बराबरी का अधिकार नहीं देता।"[19]

अतः यह कहना अनुचित नहीं होगा कि इस्लाम में स्त्रियों के लिये कोई विशेष आकर्षण नहीं है। उन्हें न इस लोक में और न जन्नत में कोई विशेष लाभ है। तलाक से भी वे ही घाटे में रहती हैं। इसीलिये इस्लाम में किसी महान नारी का विकास नहीं हो पाया है।

क्योंकि इस्लाम में स्त्री का जन्म पुरुष से माना गया है, इसलिये उसका स्थान पुरुष से कमतर है। साथ ही यह भी माना जाता है कि उसमें दिमाग भी कम है, इसलिये शैतान ने माँ-हौआ को बहकाने में सफलता पा ली और हौआ ने आदम को भी वह फल खिला दिया, गुनाह में फाँस दिया और जन्नत से भी निकलवा दिया। ऐसी मान्यताओं के कारण ही मुस्लिम महिलाओं को मस्जिद, मय्यत आदि सामाजिक स्थानों से वंचित रखना तथा न्यायालयों, गवाहियों और उत्तराधिकार आदि के अधिकारों में उन्हें निम्न

---

17. मौलाना अशरफ अली, बेहिश्ती जेवर, पृष्ठ 231
18. इस्लामिक एण्ड कम्पैरेटिव लॉ कार्टरली, IX 1989, पृष्ठ 70
19. मुजफ्फर हुसैन कृत लेख 'पर्सनल लॉ बोर्ड को मुस्लिम संराद बनाने की साजिश', अमर उजाला दि० 27.12.93 में प्रकाशित

स्थिति में रखना भी मुस्लिम समाज में स्त्री को पुरुष से कमतर प्रदर्शित करता है।

कुछ ऐसे भी मुसलमान हैं जो इस्लाम में निहित बहु विवाह और तलाक की प्रथा को न्यायसंगत नहीं मानते। इस्लाम में 'अल इलाई' सम्प्रदाय उत्पन्न हुआ जिसने बहुपत्नी प्रथा और तलाक को गैर-कानूनी करार दिया।[20]

मोरक्को, अल्जीरिया, ट्यूनिशिया, मिस्र, सूडान, जोर्डन, सीरिया, इराक, टर्की, बाँग्लादेश और पाकिस्तान जैसे मुस्लिम देशों में तीन बार तलाक के उच्चारण से विवाह-विच्छेद को समाप्त कर दिया गया है। पाकिस्तान में 1961 के मुस्लिम परिवार कानून अध्यादेश संख्या 8 के तहत यदि कोई पति अपनी पत्नी को तलाक देना चाहता है तो उसे तलाक देने की इच्छा के विषय में एक मनोनीत अधिकारी के सामने एक लिखित सूचना देनी पड़ती है और इस सूचना की एक प्रति उसे अपनी पत्नी को देनी पड़ती है। वह अधिकारी फिर दोनों पक्षों में समझौता कराने के लिये एक पंच परिषद का गठन करता है। इन प्रयासों के असफल होने पर ही तलाक हो पाता है। किसी अन्य पद्धति को अपनाकर तलाक देना न केवल निषिद्ध ही है, अपितु दण्डनीय अपराध भी है जिसके लिये पति को कारावास और अर्थदण्ड दोनों ही हो सकते हैं। किन्तु भारत में तीन बार 'तलाक' शब्द का उच्चारण न केवल आज तक कानून बना हुआ है अपितु उसमें संशोधन की बात कहने मात्र से 'इस्लाम खतरे में है' के नारे लगने लगते हैं। तीन बार तलाक के उच्चारण से विवाह-विच्छेद स्त्रियों के लिये अत्यन्त अनिष्टकारी है। प्रायः यह देखा गया है कि जब कोई पति अपनी पत्नी को तीन बार तलाक कह कर अपने से पृथक कर देता है तो उसका दृष्टिकोंण एक प्रकार का होता है, किन्तु यदि उसकी जवान बहिन या बेटी को इसी प्रकार तलाक दे दिया जाये तो उसका दृष्टिकोण बिल्कुल विपरीत होता है।

निकाह-समझौता में प्रवेश करते समय स्त्री को यह अधिकार है कि वह मेहर की कोई भी राशि तय करे। मेहर उसका होता है न कि उसके पिता या पति का, तथा मेहर को वह अपनी इच्छानुसार कैसे भी प्रयोग कर सकती है। यदि पति ने पत्नी को मेहर की राशि का कोई भी भाग नहीं दिया है तो वह अपने भत्ते के अधिकार को खोये बिना पति के साथ ठहरने के लिये मना कर सकती है। सभी सुन्नी और शिया न्याय शास्त्री यह मानते हैं कि तलाक के पश्चात् इद्दत-काल अर्थात् तीन मासिक धर्म और यदि पत्नी गर्भवती है तो बच्चा होने तक प्रत्येक पति को भरण-पोषण भत्ता देना चाहिये।

---

20. आचार्य चतुरसेन शास्त्री, उपरोक्त, पृष्ठ 47

यदि निकाह समझौता है और दोनों पक्षों को बराबर के अधिकार हैं तो पति द्वारा पत्नी को मध्यस्थता का अवसर दिये बिना समझौता को इतनी सरलता से रद्द नहीं किया जा सकता। यदि वह स्वेच्छा से निकाह रूपी समझौते को भंग कर पत्नी को बाहर निकाल फेंकता है तो मानवीय आधार पर उसे इद्दत-काल के पश्चात् भी भरण-पोषण-भत्ता दिये जाने के लिये उत्तरदायी माना जाना चाहिये।

पति द्वारा बहुपत्नी और रखैल रखने से जो पीड़ा एक मुस्लिम स्त्री को होती है, उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। स्त्री विवाह-बन्धन से भी नहीं बच सकती, चाहे वह उसके लिये कितना ही कष्टकारक क्यों न हो। इसलिये संसार में मुस्लिम स्त्री सर्वाधिक असहाय प्राणी है।[21] कुछ मुसलमान लगातार अपनी पत्नियों को बदलते रहते हैं। मुस्लिम व्यक्तिगत कानून का पूर्णतया पालन करते हुये कोई भी मुसलमान अपने जीवन-काल में कितनी ही स्त्रियों से विवाह कर सकता है।

बहु विवाह और तलाक से उत्पन्न पीड़ा को देखते हुये भारत में मुस्लिम स्त्रियों के लिये समान सिविल कानून बनना चाहिये। भारतीय संविधान की धारा 44 भी समान सिविल कानून की पक्षधर है। विवाह और तलाक के मामले में सार्वभौमिक कानूनों को मानने से ही मुस्लिम स्त्रियों की दशा सुधर सकती है। आखिर मुस्लिम महिलाओं के लिये वैसे ही कानून क्यों नहीं बनाये जाने चाहिये जो हिन्दू अथवा ईसाई महिलाओं की सामाजिक दशा सुधारने के लिये बनाये गये हैं ताकि मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पुरुषों के समकक्ष हो सके।

---

21. डा० बी०आर० अम्बेडकर, उपरोक्त, पृष्ठ 226

इस्लाम और मानवता

इस्लाम मानव मात्र की एकता और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की विचारधारा का प्रतिपादन नहीं करता। न तो कुरान और न ही मुहम्मद साहब ने मुसलमानों और गैर-मुसलमानों में सह-अस्तित्व का पक्ष लिया है। अरूण शौरी लिखते हैं कि इस्लाम सार्वभौमिक भ्रातृत्वभाव का दावा करता है, किन्तु उसका भ्रातृत्वभाव केवल मुसलमानों तक ही सीमित है। वह विश्व को विश्वास करने और विश्वास न करने वालों में विभक्त करता है। इस्लाम में विश्वास न करने वालों के लिए न केवल अनन्त नरक यातना है अपितु मुसलमानों को वह गैर-मुस्लिमों को सम्पूर्ण रूप से नष्ट करने का आदेश भी देता है।[1] इसी प्रकार जमायत-ए-इस्लामी के संस्थापक मौलाना मौदूदी के अनुसार, "इस्लाम समस्त मानवता को दो भागों में बाँटता है- प्रथम, हिज्बे अल्लाह (अल्लाह की पार्टी) तथा द्वितीय हिज्बुल शैतान (शैतान की पार्टी)। मुसलमान अल्लाह की पार्टी में है, जबकि गैर-मुस्लिम शैतान की पार्टी में।[2] इस संदर्भ में डॉ० बी०आर० अम्बेडकर लिखते हैं, "मुसलमानों के लिये मजहब सर्वोपरि होने के कारण जनतन्त्र की कल्पना उनकी समझ में नहीं आ सकती। उनकी राजनीति भी मज़हब प्रधान होती है। वे समाज सुधार के भी विरोधी है। प्रतिगामी विचार ही उनकी पहचान है। मुसलमान अपने मज़हब को ही विश्व का मज़हब मानता है, जबकि इस्लाम का बन्धुत्व सर्वव्यापी एवं सार्वत्रिक नहीं है। उनका बन्धुत्व केवल मुसलमानों तक सीमित है। जिस भूमि पर मुस्लिम राज्य नहीं होता उसे वह 'शत्रुभूमि' मानता है। वे अपने मज़हब के लोगों से भिन्न मज़हब वालों से घृणा करते हैं तथा उन्हें अपना शत्रु मानते हैं।"[3]

कुरान मुसलमानों को विश्व की सर्वश्रेष्ठ जाति मानती है, जिसे पृथ्वी पर मनुष्यों को मार्गदर्शन करने और उन पर शासन करने के लिए बनाया गया है।[4] कुरान यह भी मानती है कि पृथ्वी अल्लाह की है जिसका तर्क संगत फलितार्थ यह हुआ कि यह मुसलमानों की है। सर मुहम्मद इकबाल की निम्नांकित पंक्तियाँ भी यही भाव इंगित करती हैं :–

1. अरूण शौरी, ए सैक्यूलर एजेन्डा, पृष्ठ 354
2. मौलाना मौदूदी, मुस्लिम कौमियत, पृष्ठ 102
3. डा० बी० आर० अम्बेडकर, उपरोक्त, पृष्ठ 233-34
4. कुरआन मजीद, सूरा 3, आयत 110

"चीनो, अरब हमारा, हिन्दुस्ताँ हमारा, मुस्लिम हैं हम, वतन है सारा जहाँ हमारा।
तौहीद की अमानत सीने में है हमारे, खन्जर हलाल का है, कौमी निशाँ हमारा।"

जब सेनापति तारिक के नेतृत्व में अरब की एक सैन्य टुकड़ी स्पेन के समुद्री किनारे पर उतरी तो उसने उन जहाजों को जला डाला जिनसे वे स्पेन पहुँचे थे। जब उसके सैनिकों ने विरोध किया कि अब ये अरब वापिस कैसे जायेंगे तो उसने उत्तर दिया कि सारी भूमि हमारी है क्योंकि यह हमारे अल्लाह की है।

इस्लाम एक गैर-मुस्लिम के शरीर के प्रत्येक अवयव को गंदा मानता है।[5] इसलिये यह गैर-मुस्लिमों के साथ कहीं भी सह-अस्तित्व को प्रोत्साहित नहीं करता। मुहम्मद साहब ने कुफ्र को कुचलने में पर्याप्त शक्ति के अभाव में इस्लाम के प्रारम्भिक चरण में गैर-मुस्लिमों को बेमन सहन किया। कुरान की आयतें- "तुम्हें तुम्हारा दीन और मुझे मेरा दीन"[6] तथा "दीन के बारे में कोई जबरदस्ती नहीं"[7] आदि यही इंगित करती हैं। किन्तु मुस्लिम विद्वानों का कहना है कि कुरान की ये तथा अन्य ऐसी आयतें जिहाद की आयत[8] के द्वारा खण्डित हैं। अबू बक्र इब्न अल-अरबी नामक महत्वपूर्ण भाष्यकार का मत है कि जिहाद की इस आयत ने उन 124 आयतों को खण्डित कर दिया है जो काफिरों के साथ सहनशीलता सिखाती है।[9] इसीलिये मुसलमान किसी भी देश में गैर-मुस्लिमों के साथ स्थायी रूप से शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के साथ नहीं रह सकते।

इस्लाम गैर-मुस्लिमों से मित्रता रखने का ही विरोधी नहीं है अपितु उनके प्रति घृणा और शत्रुभाव रखना सिखाता है। कुरान के अनुसार, "ओ ईमान लाने वालों ! तुम यहूदियों और ईसाइयों को मित्र न बनाओ। ये आपस में एक-दूसरे के मित्र हैं और जो कोई तुममें से उनको मित्र बनायेगा, वह उन्हीं में से होगा।"[10]

कुरान में ऐसी और भी अनेक आयतें हैं। उदाहरण के लिये :-

(1) "हे ईमान लाने वालो ! तुमसे पहले जिनको किताब दी गई थीं, जिन्होंने तुम्हारे दीन को हँसी और खेल बना लिया है, उन्हें और काफिरों को अपना मित्र न बनाओ।"[11]

---

5. बैट येओर, दी जिम्मी, पृष्ठ 396-97
6. कुरआन मजीद, सूरा 109, आयत 6, पृष्ठ 1207
7. वही, सूरा 2, आयत 256, पृष्ठ 172
8. वही, सूरा 9, आयत 5, पृष्ठ 368
9. डा० हर्ष वर्धन, उपरोक्त, पृष्ठ 4
10 कुरआन मजीद, सूरा 5, आयत 51, पृष्ठ 267
11. वही, सूरा 5, आयत 57, पृष्ठ 268

(2) "हे ईमान लाने वालों ! ईमान वालों के मुकाबले में काफिरों को मित्र न बनाओ।" [12]

(3) "मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं और जो लोग उनके साथ हैं वे काफिरों के मुकाबले में कठोर और आपस में दयालु हैं।" [13]

(4) "निश्चय ही उन लोगों ने कुफ्र किया जिन्होंने कहा कि अल्लाह मसीह सुत मरयम ही है...... जो कोई अल्लाह के साथ (किसी को) शरीक करेगा, उस पर अल्लाह ने जन्नत हराम कर दी है और उसका ठिकाना आग (जहन्नम) है।" [14]

कुरान आदेश देती है कि मुसलमानों को काफिरों से लड़ कर उन्हें नष्ट कर देना चाहिये ताकि इस्लाम कुफ्र पर अपनी श्रेष्ठता प्रतिपादित कर सके। कुरान के अनुसार, "हे नबी ! ईमान वालों को लड़ाई पर उभारो। यदि तुम बीस जमे रहने वाले होंगे तो वे दो सौ पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगे, और यदि तुममें सौ हों तो वे एक हजार काफिरों पर भारी रहेंगे।" [15]

इस्लाम में जिहाद के आह्वान के पश्चात् तो गैर-मुस्लिमों को देखते ही मार डालने का आदेश है। कुरान के अनुसार, "हे नबी ! काफिरों और मुनाफिकों से जिहाद करो। और उनके साथ सख्ती से पेश आओ। उनका ठिकाना जहन्नम है और वह क्या ही बुरा ठिकाना है।" [16] इसीलिये मुहम्मद साहब ने मुसलमानों को कहा कि वे काफिरों की बस्तियों से इतनी दूर रहें जिससे कि उनके घरों का प्रकाश भी न दिखाई दे।

कुरान के अनुसार एक मुस्लिम गुलाम एक मूर्तिपूजक से अच्छा है चाहे वह मुसलमानों को कितना भी श्रेष्ठ दिखाई देता हो। [17] इसी कारण मौलाना मुहम्मद अली जिसे गाँधी जी ने 1923 में काँग्रेस के काकीनाडा अधिवेशन में अध्यक्ष बनाया था, ने दिल्ली की सार्वजनिक सभा में कहा था कि उनके लिये एक फासद (उपद्रवी) और फारिर (बलात्कारी) मुसलमान गाँधी जी से हजार दर्जा बेहतर है क्योंकि इस्लाम के अनुसार उनके लिये हर वह व्यक्ति जो मुहम्मद और कुरान पर ईमान लाता है, उस व्यक्ति से जो उन पर ईमान नहीं लाता, चाहे कितना भी श्रेष्ठ क्यों न हो, बेहतर है।

इस्लाम यहूदियों और ईसाइयों से भी अधिक मूर्तिपूजकों से घृणा करता है। स्वामी विवेकानन्द कहते हैं, "मुसलमानों के लिये यहूदी और ईसाई अत्यधिक घृणा के पात्र

12. वही, सूरा 4, आयत 144, पृष्ठ 247
13. वही, सूरा 48, आयत 29, पृष्ठ 945
14. वही सूरा 5, आयत 72, पृष्ठ 271
15. वही, सूरा 8, आयत 65, पृष्ठ 358
16. वही, सूरा 9, आयत 73, पृष्ठ 380
17. वही, सूरा 2, आयत 221, पृष्ठ 163

नहीं हैं, अधिक से अधिक वे तुच्छ मत के व्यक्ति हैं। किन्तु हिन्दुओं के साथ ऐसा नहीं है। उनके अनुसार हिन्दू मूर्तिपूजक-घृणास्पद काफ़िर हैं, अतः इस जीवन में वे कत्ल किये जाने योग्य हैं तथा दूसरे में उनके लिये अनन्त नरक सुनिश्चित हैं।"[18] कुरान में ऐसी अनेक आयतें हैं जिनमें मूर्तिपूजकों को कत्ल करने का स्पष्ट आदेश है। उदाहरण के लिये कुरान कहती है :-

(1) "और उनको जहां-कहीं पाओ कत्ल करो।"[19]

(2) "और उनसे युद्ध करो यहां तक कि फितना शेष न रहे और "दीन' अल्लाह का हो जाये।"[20]

(3) "मैं अभी काफिरों के दिलों में रोब डाले देता हूँ। तो तुम उनकी गर्दनों पर मारो और उनके हर जोड़ पर चोट लगाओ।"[21]

(4) "काफिरों के लिये आग (जहन्नम) की यातना है।"[22]

(5) "तुमने उन्हें कत्ल नहीं किया, बल्कि अल्लाह ने उन्हें कत्ल किया।"[23]

(6) "फिर जब हराम महीने बीत जायें तो मुश्रिकों को जहाँ-कहीं पाओ कत्ल करो, और उन्हें पकड़ो और उन्हें घेरो और हर घात की जगह उनकी ताक में बैठो।"[24]

(7) "फिटकारे हुये, जहाँ कहीं पाये जायेंगे, पकड़े जायेंगे और बुरी तरह कत्ल किये जायेंगे।"[25]

(8) "निश्चय ही अल्लाह ने काफिरों पर लानत की है, और उनके लिए (जहन्नम की) दहकती आग तैयार कर रखी है।"[26]

यदि कोई हिन्दू, यहूदी या ईसाई इस्लाम स्वीकार कर अपना मूल धर्म या मत छोड़ देता है तो फिर उसका अपने गैर-मुस्लिम परिवारजनों से सम्बन्ध स्वतः ही टूट जाता है क्योंकि इस्लाम मुसलमानों को यह अनुमति नहीं देता कि वे अपने गैर-मुस्लिम माता-पिता या भाई-बहन से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध रखें। इस संदर्भ में कुरान का स्पष्ट मत है, "हे ईमान लाने वालो ! अपने बापों और अपने भाइयों को अपना

---

18. दी कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकान्नद, वोल्यूम IV, पृष्ठ 446
19. कुरआन मजीद, सूरा 2, आयत 191, पृष्ठ 157
20. वही, सूरा 2, आयत 193, पृष्ठ 158
21. वही, सूरा 8, आयत 12, पृष्ठ 350
22. वही, सूरा 8, आयत 14, पृष्ठ 35
23. वही, सूरा 8, आयत 17, पृष्ठ 35
24. वही, सूरा 9, आयत 5, पृष्ठ 368
25. वही, सूरा 33, आयत 61, पृष्ठ 759
26. वही, सूरा 33, आयत 64, पृष्ठ 759

मित्र न बनाओ यदि वे ईमान की अपेक्षा कुफ्र को पसन्द करें और तुम में से जो कोई उनसे मित्रता का नाता जोड़ेगा, तो ऐसे ही लोग जालिम होंगे।"[27] यही कारण है कि कोई व्यक्ति मुस्लिम बनने के पश्चात् अपने पूर्वजों और मान्यताओं से ही नहीं, अपितु अपने गैर-मुस्लिम सगे सम्बन्धियों से भी पूरी तरह सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है। साथ ही वह उनको काफिर कहने और उसके अनुरूप व्यवहार के लिये तैयार हो जाता है।

इस्लाम की स्थापना के पश्चात् अरब में महाविध्वंस की जो आँधी उठी, उसमें अतीत के सभी चिन्ह लुप्त हो गये। महाविध्वंस की यह आँधी शीघ्र ही प्रचण्ड झंझावत के रूप में अफगानिस्तान सहित सम्पूर्ण पश्चिमी एसिया में फैल गयी। इससे प्रभावित सभी देशों को अपने भूतकाल से सभी प्रकार का सम्बन्ध पूर्ण रूप से समाप्त करना पड़ा।[28] मुसलमानों को अपने गैर-मुस्लिम पूर्वजों के प्रति सम्मान प्रकट करना निषिद्ध है। कुरान में कहा गया है, "नबी के लिये, और ईमान वालों के लिये, उचित नहीं कि वे मुश्रिकों (मूर्तिपूजकों) के लिये क्षमा की प्रार्थना करें चाहे वे उनके नातेदार ही क्यों न हों जबकि उन पर यह बात खुल गई कि वे भड़कती आग (उहन्नम) वाले हैं। .... और इबराहीम ने अपने बाप के लिये जो क्षमा की प्रार्थना की थी वह तो केवल एक वादे के कारण की थी जो वादा उसने उससे कर लिया था, पर जब उस पर यह बात खुल गई कि वह अल्लाह का शत्रु है तो वह उससे विरक्त हो गया।[29]

कुरान मुसलमानों को गैर-मुस्लिमों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने की अनुमति नहीं देती है। किसी भी मुस्लिम युवक को गैर-मुस्लिम युवती से तब तक विवाह करने का अधिकार नहीं है जब तक कि वह इस्लाम स्वीकार न कर ले। कुरान के अनुसार, "और मुश्रिक (मूर्तिपूजक) स्त्रियों से जब तक वे ईमान न लायें विवाह न करो, ईमान वाली एक लौंडी एक मुश्रिक स्त्री से अच्छी है, यद्यपि वह तुम्हें भली लगे और मुश्रिक पुरूषों से अपनी स्त्रियों का विवाह न करो जब तक कि वे ईमान न लायें, ईमान वाला एक गुलाम एक मुश्रिक पुरूष से अच्छा है, यद्यपि वह भला लगे।"[30] इस प्रकार कुरान मुस्लिमों को गैर-मुस्लिमों से न केवल सह विवाह के लिये ही निषिद्ध करती है, अपितु उन्हें गैर-मुस्लिमों को लीलने के लिये भी प्रेरित करती है।

किसी मुसलमान द्वारा गैर-मुस्लिम को दिया वचन वचन नहीं होता क्योंकि वह

---

27. वही, सूरा 9, आयत 23, पृष्ठ 370
28. पी० एन० ओक, भारतीय इतिहास की भंयकर भूलें, पृष्ठ 370
29. कुरआन मजीद, सूरा 9, आयत 113-114, पृष्ठ 388-89
30. वही, सूरा 2, आयत 221, पृष्ठ 163

उसे मानने के लिये बाध्य नहीं है। डॉ० ए०एल० श्रीवास्तव लिखते हैं, "रफीउद्दीन जैसे प्रसिद्ध मुसलमान धर्म-तत्वज्ञ ने शेरशाह को बताया कि उसने रायसेन के पूरनमल को शपथ खाकर जो वचन दिया था, वह उसे पूरा करने के लिये बाध्य नहीं है, क्योंकि कुरान की शिक्षा के अनुसार गैर-मुसलमान के साथ कोई भी आश्वासन नहीं निभाना चाहिये।" [31]

इस्लाम पड़ौसी गैर-मुस्लिम को भी सहन नहीं करता। कुरान के अनुसार, "हे ईमान लाने वालो ! उन काफिरों से लड़ो जो तुम्हारें आस-पास हैं और चाहिये कि ये तुम में सख्ती पायें।" [32] मुसलमानों का अल्लाह रक्तपात पसंद करता है। उसे खून की नदियाँ बहती देखकर आनन्द आता है। इसलिये उसका मुसलमानों को आदेश है कि वे काफिरों को अति बेरहमी से मारें। कुरान कहती है, "अब जब कुफ्र करने वालों से तुम्हारी मुठभेड़ हो तो गर्दनें मारना, यहाँ तक कि जब तुम उन्हें कुचल चुको, तो बन्धनों में जकड़ो।"[३३] काफ़िरों को अल्लाह भी मार सकता है किन्तु वह चाहता है कि उन्हें मुसलमान ही मारें ताकि वह ईमान वालों की परख कर सके। कुरान के अनुसार, "यदि अल्लाह चाहता होता तो उनसे बदला ले लेता परन्तु उसे तुम्हारी एक-दूसरे के द्वारा परीक्षा करनी थी।" [34]

इस्लाम में गैर-मुस्लिमों को कठोरतम दण्ड देने का आदेश है। कुरान के अनुसार, "जिन लोगों ने हमारी आयतों का इन्कार किया उन्हें हम जल्द अग्नि में झोंक देंगे। जब उनकी खाले पक जायेंगी तो हम उन्हें दूसरी खालों से बदल देंगे ताकि वे यातना का रसास्वादन कर लें।" [35] कुरान के अनुसार मूर्तिपूजकों और उनकी मूर्तियों के लिये जगह नर्क की आग है। "निश्चय ही तुम और वह जिसे अल्लाह के सिवा पूजते थे जहन्नम का ईंधन हो। तुम अवश्य उसके घाट उतरोगे।" [36]

कुरान गैर-मुस्लिमों को समाप्त कर उनकी सम्पत्ति को अल्लाह का तोहफा मानकर इसे प्रयोग करने का आदेश देती है। कुरान के अनुसार, "तो जो कुछ गनीमत तुमने हासिल की है उसे हलाल और पाक समझ कर खाओ।" [37] कुरान युद्ध में लूट के माल को 'माल-ए-गनीमत' मानती है तथा इस पर अल्लाह और उसके रसूल का अधिकार

31. डा० ए०एल० श्रीवास्तव, पृष्ठ 255
32. कुरआन मजीद, सूरा 29, आयत 123, पृष्ठ 391
33. वही, सूरा 47, आयत 4, पृष्ठ 929
34. वही,
35. वही, सूरा 4, आयत 56, पृष्ठ 231
36. वही, सूरा 21, आयत 98, पृष्ठ 585
37. वही, सूरा 8, आयत 69, पृष्ठ 359

मानती है।[38] 'माल-ए-गनीमत' का पाँचवाँ भाग अल्लाह का, और रसूल का, और (रसूल के) नातेदारों का, और अनाथों और मुहताजों और मुसाफिर का है।[39] लूट का शेष 4/5 भाग लड़ने वाले मुसलमानों में बाँट दिया जाना चाहिये।

मुसलमानों को 'माल-ए-गनीमत' के रूप में प्राप्त गैर-मुस्लिम महिलाओं को भी अपने पास रखने का कुरान आदेश देती है। ऐसी महिलाओं से मुसलमान विवाह कर सकते हैं।[40] जे०जे० पूल का मत है कि कुरान द्वारा एक मुसलमान को चार पत्नियाँ और कितनी भी दासी रखने की अनुमति देने से इस्लाम मानवता का शत्रु कहा जायेगा क्योंकि यह दास प्रथा को बढ़ावा देता है।[41]

मुहम्मद साहब का भरण-पोषण ऐसी ही लूट पर आधारित था। लूट उनके लिये हलाल करार की गई, जबकि उनसे पहले के पैगम्बरों के लिये यह हलाल नहीं थी।[42] अतः इस्लाम में मुसलमानों के लिये भी लूट हलाल मानी गयी है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस्लाम के सिद्धान्त गैर-मुस्लिमों के प्रति घृणा, हिंसा और लूट के लिये प्रेरित करते हैं। यह सत्य सनातन वैदिक (हिन्दू) धर्म की तरह नहीं है जो "सर्वेभवन्तु सुखिन, सर्वे सन्तु निरामया, सर्वे भद्राणि पश्चन्तु, मा कश्चिद् दुख भाग भवेत्" या 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' का सन्देश देता हो। इसके विपरीत इस्लाम वह विस्तारवादी राजनैतिक विचारधारा है जो दीन (मज़हब) और सियासत (राजनीति) का समन्वय करती है तथा गैर-मुस्लिमों के प्रति असहिण्णुता सिखाती है। इस्लामिक विचारधारा विज्ञान, तर्क और मानवता की कसौटी पर खरी नहीं उतरती।

भारतीय मुसलमानों में जातिप्रथा और अस्पृश्यता भी पाई जाती है। उच्च वर्ग 'अशरफ' कहलाता है। पेशेवर वर्ग को घृणास्पद शब्द 'अजलफ' से जाना जाता है। कुछ स्थानों पर एक तीसरा वर्ग भी होता है। इसे 'अरजल' कहा जाता है। यह निम्नतम वर्ग है। इनके साथ अन्य मुसलमान संगति नहीं करते। इन्हें सार्वजनिक कब्रिस्तान के प्रयोग के लिये मस्जिद में प्रवेश नहीं करने दिया जाता।[43]

इस्लाम में साधारण मुसलमानों को 'मोमिन' कहा जाता है। जो मुसलमान जिहाद करते हैं, उन्हें 'मुजाहिद' या 'मुजाहिदीन' कहा जाता है। मुजाहिद को मोमिन से श्रेष्ठ

38. वही, सूरा 8, आयत 1, पृष्ठ 349
39. वही, सूरा 8, आयत 41, पृष्ठ 354
40. वही, सूरा 4, आयत 24, पृष्ठ 225
41. जे०जे० पूल, स्टडीज इन मुहम्मडनिज्म, पृष्ठ 225
42. अल बुखारी, हदीस जिल्द 4, पृष्ठ 199
43. डा० बी० आर० अम्बेडकर, उपरोक्त, पृष्ठ 229

माना जाता है। मुजाहिद से भी श्रेष्ठ वह मुसलमान माना जाता है जो अपने हाथ से कम से कम एक काफिर को समाप्त करे। उसे 'गाजी' कहा जाता है। गाजी से भी श्रेष्ठ 'शहीद' माना जाता है। शहीद वह मुजाहिद कहलाता है जो जिहाद करते हुये मारा जाए। वह सीधा जन्नत जाता है तथा उसे किसी अन्य बड़े से बड़े मुसलमान की तरह जन्नत के लिये कयामत तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस्लाम का भ्रातृत्वभाव केवल मुसलमानों तक ही सीमित है। उन्हें अन्य धर्मावलम्बियों से कोई प्रेम या लगाव नहीं है। यह स्थिति भारतीय संस्कृति के पूर्ण रूप से विपरीत है। भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम्' और प्राणिमात्र में सद्भाव उत्पन्न करने का सन्देश देती है। इस्लामिक संस्कृति भारतीय संस्कृति से बहुत भिन्न है। भारतीय संस्कृति में इस्लाम के लिये पूरा सम्मान है, किन्तु इस्लामिक संस्कृति में भारतीय संस्कृति के लिये कोई स्थान नहीं है। भारत में पहली मस्जिद केरल के नगर कालीकट में हिन्दू राजा जमोरिन ने बनवाई थी, किन्तु मुस्लिम आक्रान्ताओं ने भारतीय अस्मिता के प्रतीक राम जन्म भूमि और कृष्ण जन्म भूमि पर बने हिन्दू मन्दिरों को भी अन्य हजारों मन्दिरों की तरह ध्वस्त कर दिया। इसी प्रकार हिन्दुओं ने 'सर्वधर्म समभाव' की वैदिक विचारधारा के आधार पर हिन्दुत्व और इस्लाम को एक ही उद्देश्य प्राप्त करने के दो मार्ग बताये, जबकि हिन्दुओं को मुस्लिम आक्रान्ताओं ने उनके ही देश में अश्रेष्ठ, तुच्छ और अशक्त माना। महमूद गजनवी, तैमूर लंग, नदिरशाह और अहमदशाह अब्दाली जैसे आक्रान्ताओं ने हिन्दूओं पर आक्रमण कर न केवल उन्हें लूटा, अपितु उन पर भंयकर अत्याचार भी किये। मुहम्मद गौरी और बाबर जैसे अन्य मुस्लिम आक्रान्ताओं का उद्देश्य भी हिन्दुओं की सम्पत्ति से लाभ उठाना था।

भारतीय संस्कृति में निहित मानवीय मूल्यों के परिणामस्वरूप मुस्लिम आक्रान्ता अपने लगभग 600 वर्ष के शासन के बावजूद भी भारत को इस्लामिक देश नहीं बना सके। इसका मुख्य कारण है वैदिक धर्म और संस्कृति में अनन्त ब्रह्मण्ड में निहित प्राणीमात्र के प्रति सद्भाव और आत्मीयता की भावना। मुकद्दस के शायर मौलाना हाली ने भी इस्लाम के बेमिसाल काफले की जबरदस्त कामयाबी का वर्णन करने के बाद उसके गंगा के दहाने में आ डूबने की बात मानी। उसकी निम्न पंक्तियाँ इसी निराशा को व्यक्त करती हैं :-

"वो दीने हजाजी का वेबाक बेड़ा, किये पार जिसने थे सातों समुन्दर,
जो जेहुँ में अटका न सेहूँ में अटका, वह आकर दहाना में गंगा के डूबा।"

इस्लाम और राष्ट्रीयता

इस्लाम भूगोल पर आधारित राष्ट्रीयता को मान्यता नहीं देता। कुरान विश्व इस्लामबाद में आस्था रखती है। इसकी शिक्षायें पृथ्वी पर इस्लाम के अतिरिक्त अन्य विचारधाराओं को सहन नहीं करती। इस्लामिक विचारधारा में मजहब और राजनीति एक दूसरे से इतनी गहराई से जुड़े हुये हैं कि एक के बिना दूसरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मौलाना मौदूदी लिखते हैं – "इस्लाम और राष्ट्रीयता भावना और उद्देश्यों में एक दूसरे के विपरीत हैं। जहाँ राष्ट्रीयता है, वहाँ इस्लाम विकसित नहीं हो सकता। इस्लाम में राष्ट्रीयता के लिए कोई स्थान नहीं है। राष्ट्रीयता के विकास से इस्लाम की प्रगति रुक जाती है। इस्लाम का उद्देश्य है राष्ट्रीयता को नष्ट करना।"[1]

राष्ट्रीयता और इस्लाम दो परपस्पर विरोधी विचारधारायें है। इस्लाम में राष्ट्रीयता का सिद्धान्त निन्दनीय हैं क्योंकि वह इस्लामिक सार्वभौमिकता में आस्था रखता है। इस्लाम राष्ट्रीयता के सिद्धान्त को पश्चिमी विचार मानता है, जिसमें संकीर्ण राष्ट्रीय विचार, जातीय ईर्ष्या तथा भौगोलिक विभाजन की अतिशय मान्यता निहित है। जो इस्लाम में आस्था रखता है वह राष्ट्रीयता, वर्ग अथवा देश के आधार पर विभाजित नहीं किया जा सकता।[2]

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर का मत है कि मुसलमान किसी एक देश की राष्ट्रीयता से नहीं बँध सकता। यहाँ तक कि मौलाना मुहम्मद अली का भी कहना था कि कोई भी मुस्लिम, चाहे उसका देश कोई भी हो, अन्य किसी मुसलमान के विरुद्ध खड़ा नहीं हो सकता।[3] सर मुहम्मद इकबाल, जिन्होंने हिन्दुस्तान की प्रशस्ति में राष्ट्रीय तराना गाया था, के ऊपर खिलाफत आन्दोलन के मध्य मिल्लत का ऐसा भूत सवार हुआ कि बाद में वे 'नील नदी के किनारे से लेकर काशगर' तक के मुसलमानों की एकता का गान गाने लगे, जिससे कि काबा की रक्षा हो सके।

मुसलमानों की प्रथम आस्था इस्लाम और इस्लामिक देशों के प्रति रहती है। उनका मुख्य उद्देश्य 'अल्लाह का राज्य' स्थापित करना है, उस अल्लाह का, जो प्राणी

---

1. मौलाना मौदूदी, हिन्दू वर्ल्ड, पृष्ठ 24
2. जॉन एल० एस्पोजिटो, इस्लाम एण्ड पॉलिटिक्स, पृष्ठ 90
3. टाइम्स ऑफ इण्डिया, दि० 18.02.1924

मात्र को प्यार करने वाला संसार का पिता न होकर, केवल मुसलमानों और उनके पैगम्बर का ही है।

किसी भी देश में मुसलमान उस राज्य के कानूनों के स्थान पर अपने पैगम्बर के कानूनों को मानने की बात करते हैं। यह प्रवृत्ति उन्हें किसी भी देश का बुरा नागरिक बना देती है। उनकी आस्था का केन्द्र राष्ट्र से बाहर होने के कारण वे अपने साथी नागरिकों द्वारा सदैव सन्देह के पात्र बने रहते हैं। श्रीमती एनी बिसेन्ट लिखती हैं - "किसी भी सभ्य भूमि में उन लोगों को रहने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिये, जो विश्वास करते हैं कि उनका मजहब उन लोगों की हत्या, लूट, बलात्कार, आगजनी और देश से निष्कासित करने के लिये सिखाता है, जो अपने पूर्वजों के मत को छोड़ने से मना करते हैं। अल्लाह के ऐसे कानूनों को एक सभ्य देश के कानूनों के ऊपर चलने नहीं दिया जा सकता। बीसवीं शताब्दी में रहने वाले लोगों को मध्य युग के ऐसे विचार रखने वाले लोगों को या तो प्रशिक्षित करना चाहिये अथवा उन्हें निष्कासित कर देना चाहिये। उनका स्थान केवल उन देशों में ही हो सकता है जहाँ उनकी विचारधारा है तथा जहाँ वे अपने ऐसे विचारों को अपने से भिन्न विचार रखने वालों के विरुद्ध प्रयोग कर सकते हैं।"[4]

इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध विद्वान अनवर शेख अपनी पुस्तक 'इस्लाम, अरब राष्ट्रीय आन्दोलन' में इस्लाम को अरब का राष्ट्रीय आन्दोलन मानते हैं। उनका कहना है कि इस्लाम ने गैर-अरब मुस्लिमों की राष्ट्रीय-अस्मिता को बेहद क्षति पहुँचाई है। इस्लाम की समानता और मानव प्रेम एक कल्पना मात्र है, जिसे अत्यन्त चतुराई से प्रस्तुत किया गया है। सत्य तो यह है कि मुहम्मद साहब ने मानव मात्र को दो भागों में विभाजित किया। उनके अनुसार अरब शासक हैं और गैर-अरब मुस्लिम सांस्कृतिक उपनिवेशवाद के माध्यम से शासित हैं। ऐसा इस्लाम के आधारभूत तत्वों में अरब श्रेष्ठता को आसमान पर चढ़ा कर किया गया। जितना उसे चढ़ाया गया, उसी अनुपात में दूसरे देशों के मुसलमानों को निम्नता प्राप्त हुई। अरबों की दृष्टि से यह महान सफलता है, किन्तु गैर-अरब मुसलमानों के लिये यह घोर अपमानजनक और ध्वंसमूलक है। फिर भी ये मनोवैज्ञानिक प्रभाव के कारण इसे आनन्दपूर्वक स्वीकार करते हैं, क्योंकि पैगम्बर मुहम्मद ने उन्हें जन्नत के विलास-वैभव का वायदा किया है।

इस्लाम धर्म की शर्तें पूर्ण नहीं करता। इसमें अरब को आसमान पर चढ़ा कर

4. श्रीमती एनी बिसेन्ट, द फ्यूचर ऑफ इण्डियन पॉलिटिक्स, पृष्ठ 304-305

महिमामण्डित किया गया है। इसकी सफलता का रहस्य गैर-अरब मुसलमानों का मानस-प्रक्षालन है, जो अपनी राष्ट्रीय जड़ों की निंदा करने लगे और जिन्होंने अरब श्रेष्ठता, वर्चस्व और सांस्कृतिक प्रभुत्व स्वीकार कर लिया। यह पैगम्बर मुहम्मद की रहस्यमय और काल्पनिक शक्ति के कारण हो सका। मुसलमानों द्वारा प्रत्येक गैर-अरब वस्तु के प्रति घृणा के भाव से भारत, मिश्र और ईरान जैसे महान राष्ट्रों की गौरवशाली संस्कृतियों को भारी क्षति पहुँची है।

मुहम्मद साहब इस पृथ्वी पर कहीं भी और कभी भी उत्पन्न हुये सबसे महान राष्ट्रवादी नेता थे। उन्होंने गैर-अरबों पर अरबों का प्रभुत्व स्थापित किया। उनका राष्ट्रवादी व्यक्तित्व चमत्कारिक रुप से उभर कर सामने आता है। यह कहना अनुचित न होगा कि किसी भी दूसरे राष्ट्रवादी नेता ने अपने देश के लिये इतनी भक्तिपूर्ण योजना नहीं बनाई, जैसी मुहम्मद साहब ने निर्मित की। आज विश्व भर के विभिन्न देशों से प्रतिवर्ष कम से कम 20 लाख मुसलमान हज करने मक्का जाते हैं। यदि एक हाजी हज के अवसर पर तीन हजार डालर खर्च करता है तो अरब में 6 अरब डालर केवल गैर-अरब हाजियों के माध्यम से आ जाता है। सऊदी अरब की जनसंख्या लगभग 60 लाख है। अतः अरब में केवल हज के कारण ही प्रतिव्यक्ति वार्षिक आय 1000 डालर हो जाती है। तेल की प्राप्ति से पूर्व हाजियों से प्राप्त होने वाली आय सऊदी अरब के लिये मुख्य आमदनी थी।

इस्लाम में मक्का और काबा को इस सीमा तक महिमामण्डित किया गया कि उस हर स्वस्थ मुसलमान का हज जाना आवश्यक हो गया, जिसकी आर्थिक स्थिति हज जाने की है। अगर वह ऐसा नहीं करता तो यह मान लिया जाता है और समझा जाता है कि मृत्यु के पश्चात् उसका स्थान दोजख में होगा। किन्तु मक्का जाकर हज करने वाले प्रत्येक मुसलमान को जन्नत मिलने की गारण्टी है, जिसमें सुन्दर-सुन्दर हूरें तथा अन्य विलासिता की वस्तुयें प्राप्त होंगी।

काबा से जन्नत-प्राप्ति जुड़ी होने के कारण ही ग़ैर-अरब मुसलमान अपनी मातृभूमि के स्थान पर अरब को महत्व देते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि अरब को महिमामण्डित करने के कारण उनकी स्वयं की राष्ट्रीयता संदिग्ध हो जाती है। इसलिये प्रत्येक देश में मुसलमान वहाँ की राष्ट्रीय धारा में समरस होने के स्थान पर अपनी मुस्लिम पहचान पर जोर देते हैं। 1947 में मज़हब के आधार पर भारत का विभाजन इसी मुस्लिम पहचान के कारण हुआ। आज भी भारत में कश्मीर, चीन में शिक्यांग,

रुस में चेचन्या, इज़रायल में फिलस्तीन की समस्या का कारण मुसलमानों द्वारा अपनी राष्ट्रीय पहचान के स्थान पर मुस्लिम पहचान को बनाये रखना है। बोस्निया, लेबनान, चाड आदि भी इसी कारण अशान्त हैं। इस्लाम द्वारा किसी भी राष्ट्र के प्रति अपनाये जाने वाले पृथकतावादी दृष्टिकोण के कारण ही स्वातन्त्रवीर सावरकर ने कहा था कि 'धर्मान्तरण बनाम राष्ट्रान्तरण', अर्थात् हिन्दुस्तान में यदि कोई हिन्दू मुसलमान बन जाता है तो उसका केवल धर्म ही नहीं बदलता अपितु उसकी राष्ट्रीयता भी बदल जाती है। फिर न इसे भारत की नदियाँ पवित्र लगती हैं और न भारत के नगर। न भारतीय भाषा और लिपि से मोह रहता है और न भारतीय बाड्गमय से। उसे वन्देमातरम् में बुतपरस्ती की बू आती है, किन्तु काबा स्थित संगे अस्वद (काला पत्थर) के प्रति साष्ट्रांग प्रणाम करने में बुतपरस्ती की बू नहीं आती।

अनवर शेख इस्लाम के अरब राष्ट्रवादी आन्दोलन होने और मुसलमानों के अपने-अपने देशों की राष्ट्रीयता से कटे होने के सदंर्भ में निम्न दस प्रमाण देते हैं :-

1. पैगम्बर मुहम्मद को सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति, उनकी कुरैश जाति को सर्वश्रेष्ठ समुदाय और अरब को विश्व का सर्वश्रेष्ठ और पवित्रतम देश घोषित किया गया है।
2. इसके लिये प्राचीन सेमेटिक तरीके का प्रयोग किया गया। उन्होंने अपने को पैगम्बर घोषित किया। इसके बारे में धारणा यह दी कि वह जो कुछ करते हैं, अल्लाह के कहने पर करते हैं।
3. यहूदियों के राष्ट्रीय देवता याहवे थे। पैगम्बर मुहम्मद ने अल्लाह को चुना। यह काबा के देवता थे। काबा के देवता को ही विश्व के एक मात्र ईश्वर के रूप में प्रस्थापित किया।
4. पैगम्बर ने काबा को पवित्रतम स्थल घोषित किया। अरब को इस्लाम की पुण्य भूमि घोषित किया ताकि जो कोई मुसलमान बने, अरबों और अरब की महानता आवश्यक रुप से स्वीकार करें।
5. मुहम्मद साहब ने इस्लाम पूर्व की काबा हज तीर्थ यात्रा को इस्लाम की आधारभूत मान्यता बना दिया ताकि गैर-अरब मुसलमानों में अरब का सांस्कृतिक उपनिवेशवाद मजबूत हो और अरबों के लिये स्थायी आय का साधन हो सके।
6. पैगम्बर ने इस बात पर तरह-तरह से जोर दिया कि अल्लाह ने इब्राहम के पुत्र इस्माइल के वंशजों को चुना है, न कि इब्राहम के पुत्र इसाक को। इसका उद्देश्य यहूदियों की तुलना में अरब राष्ट्रवाद को गौरवान्वित करना था।

7. शाहीन तिरमजी के अनुसार अल्लाह उनका मानमर्दन करे, जो कुरैशों का अपमान करता है।[5] पैगम्बर ने कहा कि यदि कोई अरबों के खिलाफ है तो वह मेरे भी खिलाफ़ है। काबा अरब राष्ट्रवाद का उससे अधिक महत्वपूर्ण स्थान है, जितना येरुसलम यहूदियों के लिये हैं। काबा अरब राष्ट्रवाद का मेरुदण्ड है। इसी कारण सभी गैर-अरब मुसलमान अपनी राष्ट्रीयता को नकारते हैं। अरब राष्ट्र केन्द्रस्थ हैं, जबकि दूसरे मुस्लिम समुदाय उपग्रह जैसे हैं। गैर-अरब मुसलमान जन्नत की आशा में रोजा करते हैं, क्योंकि पैगम्बर मुहम्मद उनके लिये जन्नत का दरवाजा कभी नहीं खोलेंगे, जो अरबों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध न रखते हों।

8. पैगम्बर मुहम्मद ने इस्लाम को अपने इर्द-गिर्द खड़ा किया। वे ही समस्त मुसलमानों के आदर्श हैं। वे ही मानवता के लिये वरदान हैं। अल्लाह के पैगम्बर के रुप में वे स्वयं अरबों को अधिक महत्व देते हैं। इसलिये एक तरह से अरबपरस्ती मुसलमान होने के लिये पूर्व शर्त है।

9. इस्लाम का अर्थ है, अल्लाह और मुहम्मद साहब दोनों में विश्वास करना। अल्लाह स्वयं काबा के देवता थे। मुहम्मद साहब भी अरब थे। अतः इस्लाम अरब राष्ट्रवाद की हित साधना करता है।

10. कुरान अरबी भाषा में है। प्राथमिक तौर पर यह अरबों के मार्गदर्शन और समझने के लिये हैं। इसे दुनियाँ भर के लिये संदेश के रुप में पेश करने का अर्थ है - अरबों के वर्चस्व को गैर-अरबों पर थोपना।

उपरोक्त अरब राष्ट्रवादी अवधारणों में कुछ तो नस्ली किस्म की हैं और कुछ मजहबी किस्म की। अनवर शेख कहते हैं कि मुहम्मद साहब अपराजेय मनोबल के व्यक्ति थे। सफल होने का उनका मनोबल अदम्य था। वह इतिहास की नब्ज पहचानते थे और यह जानते थे कि इतिहास चक्र को कैसे अपने अनुकूल मोड़ें। उनमें ऐसे अनेक गुणों का संगम था जैसा अन्यत्र नहीं मिलता। वह एक ऐसे देश में उत्पन्न हुए, जिसमें बहुत बड़ी सम्भावनायें नहीं थीं, किन्तु अपनी बुद्धिमता और शौर्य से उन्होंने अरबों का साम्राज्य धनी बना दिया। लोग भूल जाते हैं कि पैगम्बर मुहम्मद ने अरब साम्राज्य बनाया। यह उनकी पैगम्बरी का अभिन्न भाग था।

अनवर शेख का यह भी कहना है कि कोई एक हजार वर्ष पहले तक भारत के लोग अमीर, बहादुर और आविष्कार प्रवीण थे। उनकी अकूत सम्पत्ति ने आक्रमणकारियों

5. शाहीन तिरमजी, भाग 2, पृष्ठ 835

को आकृष्ट किया। केवल यह एक तथ्य कि हिन्दुओं ने इस्लाम को सिन्ध में तीन सौ वर्षों तक रोके रखा, हिन्दुओं पर कायरता के आरोप को नकारता है। इस्लाम का प्रभाव तुर्की की पराजय से बढ़ा। दूसरा कारण यह था कि भारतीय धर्मान्तरित मुसलमानों ने भारतीयता को नकार दिया। उन्होंने भारत को 'दारूल हरब' अर्थात् एक तरह की मजहबी समरभूमि मानना प्रारम्भ कर दिया। वे मक्का की श्रेष्ठता के तराने गाने लगे। यह इतना बढ़ा गया कि वे उस हर वस्तु को जिसमें भारतीय गौरव झलकता हो, घृणा करने लगे। यहाँ तक कि भारतीय मुस्लिम धर्मस्थलों को अरब के धर्मस्थलों की तुलना में घटिया माना जाने लगा। अपने पूर्वजों के प्रति घृणा के भाव बढ़ने लगे। उन्होंने चाहा कि मंदिरों को तोड़ दें, गैर-मुसलमानों को बर्बाद कर दें या मुसलमान बना लें। भारतीयता के प्रति इसी सम्पूर्ण घृणा के कारण भारत का विभाजन महजब के आधार पर हुआ, ताकि वे अरब मूल्यों, जिसे वे इस्लामिक मूल्य कहते रहे, के अनरूप चल सकें। भारत का विभाजन मक्का के प्यार के कारण हुआ।

देश विभाजन के पश्चात भी पंथ निरपेक्ष भारत में अनेक भारतीय मुसलमान अकबर और दारा को काफिर मानते हैं तथा महमूद गजनवी, मुहम्मद गौरी, बाबर और औरंगजेब को अपना आदर्श । जमीयत-उल-उलेमाए हिन्द के अध्यक्ष मौलाना असद मदनी के अनुसार - "यदि दारा को सफलता मिल जाती तो भारत में मुसलमान तो रहते, किन्तु इस्लाम नहीं रहता। क्योंकि औरंगजेब को सफलता प्राप्त हुई, अतः भारत में मुसलमान और इस्लाम दोनों ही टिक गये।"[6]

किन्तु यह सत्य है कि भारत में इस्लाम को कभी कोई खतरा नहीं रहा। जब पहली बार सताये, प्रताड़ित और शोषित मुसलमान विपन्नता के साथ मालाबार के तट पर आये, तब भारत ने इस्लाम के इन अनुयायियों का अपमान नहीं किया, अपितु पूर्ण सम्मान प्रदान किया, ठीक वैसा ही जैसा कोई अपने परिजनों को देता है। केरल में मुसलमानों को मोपला कहते हैं और मलयालम में मोपला का अर्थ है दामाद। मलाबार के राजाओं ने मुसलमानों के साथ दामाद की तरह आचरण किया। वास्तव में चाहे वे मुसलमान हों या ईसाई, भारत में सभी के लिये सम्मानपूर्ण स्थान रहा है, किन्तु दुर्भाग्य है कि आज भारतीय संस्कृति को यह कहकर लांछित किया जा रहा है कि इस संस्कृति से इस्लाम को खतरा है। इस्लाम के अनुयायियों की यह प्रवृत्ति भारतीय संस्कृति व समाज के प्रति सामंजस्यरहित है तथा पृथकतावाद की द्योतक है।

6. हमीद दलवाई, मुस्लिम पॉलिटिक्स इन सेक्यूलर इण्डिया, पृष्ठ 62

पाकिस्तान के निर्माण से पूर्व मौलाना मुहम्मद अली, जो भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के अध्यक्ष भी रहे थे, ने अफगानिस्तान के शासक को भारत पर आक्रमण करने का निमन्त्रण दिया था तथा भारतीय मुसलमानों को आव्हान किया था कि अफगान आक्रान्ता की सहायता करें ताकि भारत में अंग्रेजों के स्थान पर मुसलमानों का पुनः शासन स्थापित हो सके। मुहम्मद अली पर देशद्रोह का मुकद्दमा चला कर उसे दण्डित किया गया था।

इसी प्रकार 1940 में मुस्लिम लीग के अध्यक्ष मुहम्मद अली जिन्नाह ने लीग के लाहौर अधिवेशन में कहा था कि हिन्दुस्तान में हिन्दू और मुसलमान दो जातियाँ नहीं, अपितु दो राष्ट्र हैं क्योंकि दोनों का खान-पान भिन्न है, दोनों का रहन-सहन भिन्न है तथा दोनों के रीति-रिवाज भिन्न हैं। न दोनों सहभोज करते हैं और न सहविवाह। यहाँ तक कि एक का नायक दूसरे का खलनायक है। अतः मुसलमानों को 'मुस्लिम इण्डिया' (पाकिस्तान) चाहिये। जिन्नाह ने 1946 में घोषणा की – "मैं अपने आपको इण्डियन नहीं मानता। इण्डिया विभिन्न राष्ट्रों का समूह है जिनमें दो प्रमुख राष्ट्र हिन्दू और मुसलमान हैं। हम अपने मुस्लिम राष्ट्र के लिये सर्वसत्ता-सम्पन्न अलग राज्य चाहते हैं। मैं हिन्दुओं के साथ मिलकर रहने को तैयार नहीं। हम हिन्दू और मुसलमान अलग-अलग ही नहीं, अपितु एक-दूसरे के शत्रु हैं।" [7]

भारत में पृथकतावादी मुस्लिम मनोवृत्ति को स्पष्ट करने के लिये मुस्लिम लीग के एक अन्य प्रमुख नेता शाहिद सुहरावर्दी का कलकत्ता के 'द स्टेट्समैन' में छपा बयान भी उल्लेखनीय है जिसमें उसने कहा – "रक्तपात और अव्यवस्था अनिवार्य रुप से अपने आप में बुराई नहीं है, यदि उनका प्रयोग श्रेष्ठ लक्ष्य के लिये किया जाये। मुसलमानों के लिये इस समय कोई भी लक्ष्य पाकिस्तान से श्रेष्ठतर नहीं हो सकता।" [8]

स्वतन्त्रता-प्राप्ति से पूर्व मुस्लिम मानसिकता द्वारा भारत के प्रति शत्रुभाव रखने के कारण हुए डॉ० भीमराव अम्बेडकर ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'थॉट्स ऑन पाकिस्तान' में तो यहाँ तक कहा – "मुसलमान जब तक स्वयं को केवल मुसलमान मानता रहेगा, तब तक उसे हिन्दुस्तान की राष्ट्र-देह में आत्मसात नहीं किया जा सकता। मुसलमानों को साथ लेकर अखण्ड हिन्दुस्तान कभी नहीं बन सकेगा और न

7. प्रो० बलराज मधोक, हिन्दू राज्य, पृष्ठ 118

8. द स्टेटसमैन, कलकत्ता, दि० 5 अगस्त 1946

हिन्दुस्तान का समाज जीवन एकरस हो सकेगा। समुद्र में जहाज न डूबे इसके लिये आवश्यकता से अधिक सामान फेंक जहाज को डूबने से बचा लिया जाता है। मुसलमानों को हम आत्मसात नहीं कर सकते। अतः किसी विदेशी तत्व को राष्ट्र के शरीर में रखने की अपेक्षा उसे निकाल देना ही उचित है।"[9]

1947 में भारत के मजहब के आधार पर विभाजन के पश्चात हमारे देश में मुस्लिम अल्पमत द्वारा बाह्य सहायता विशेषकर पाकिस्तान के आधार पर अन्दर से तोड़-फोड़ और विद्रोह का भय उत्पन्न हो गया है। इसके प्रमुख कारण हैं इस्लाम के मूल सिद्धान्त, जो मुसलमानों को किसी भी गैर-इस्लामी राज्य का विश्वसनीय तथा देशभक्त नागरिक बनने की अनुमति नहीं देते। इसीलिये डॉ० भीमराव अम्बेडकर ने यह सुझाव दिया था कि मजहब के आधार पर भारत-विभाजन का तर्कसंगत फलितार्थ है कि जनसंख्या का आदान-प्रदान भी मजहब के आधार पर हो।

1947 में देश की धरा बँटी मजहब के आधार पर और इसी आधार पर देश की सेना, पुलिस और सरकारी कर्मचारियों को बाँटकर उनका आदान-प्रदान हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के मध्य किया गया। यदि तभी जनसंख्या का आदान-प्रदान भी मजहब के आधार पर कर दिया जाता तो हिन्दुस्तान में मुस्लिम पृथकतावाद की समस्या न रह जाती।

1954 में नियुक्त अहमदिया दंगा आयोग के अध्यक्ष जस्टिस मुनीर के सामने पाकिस्तान के प्रमुख मौलाना अताउल्लाशाह बुखारी ने कहा कि कोई भी मुसलमान किसी गैर-मुस्लिम राज्य के प्रति वफादार नहीं हो सकता। प्रो० बलराज मधोक लिखते हैं - "न्यायमूर्ति मुनीर ने पूछा कि क्या हिन्दुस्तान में रहने वाला कोई मुसलमान हिन्दुस्तान राज्य के प्रति वफादार हो सकता है, इसके उत्तर में मौलाना अताउल्ला ने आग्रहपूर्वक कहा - "नहीं"।[10]

अब पुनः हिन्दुस्तान के कतिपय मुस्लिम नेता देश का इस्लामीकरण करने और इसे पाकिस्तान की तरह दारुल-इस्लाम बनाने की बातें करने लगे हैं। वे मुहम्मद इकबाल और मुहम्मद अली जिन्नाह की तरह पृथकतावादी भाषा बोलने लगे हैं। बंगाल विधानसभा के पूर्व उपाध्यक्ष कलीमुद्दीन शम्स के जयपुर में 1977 में जमायत-ए-मन्सूर द्वारा आयोजित मुस्लिम सम्मेलन में दिये गये भाषण से पृथकतावादी मुस्लिम मनोवृत्ति

9. डॉ० भीमराव अम्बेडकर, उपरोक्त, पृष्ठ 366

10. प्रो० बलराज मधोक, उपरोक्त, पृष्ठ 121

समझी जा सकती है। वे कहते हैं - "जब से देश स्वतन्त्र हुआ है, मुसलमानों को दूसरे नम्बर का नागरिक समझकर पेश आया जा रहा है। उनकी शिक्षा और उनकी नौकरियों के लिये कोई उचित प्रबन्ध नहीं है। अब हमें बताया जा रहा है कि हम अपने आपको राष्ट्रीय धारा में विलीन करें। हम इसके विरुद्ध हैं। मुसलमान एक राष्ट्र है - बेशक भारतीय क्षेत्र के अन्तर्गत। हम मुस्लिम संस्कृति के भारतीयकरण के पक्ष में नहीं। हम राष्ट्रीय धारा में अपने आपको विलीन करने के विरुद्ध हैं।" [11]

किसी भी देश में अल्पसंख्यकों के लिये पृथक भूमि कानून, पृथक शिक्षा कानून और पृथक सिविल कानून होना राष्ट्रीयता के विकास में अत्यन्त घातक है। भारत में मुस्लिम बाहुल्य कश्मीर के लिये पृथक ३७० धारा, मुसलमानों के लये पृथक अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थायें और मुस्लिम व्यक्तिगत कानून न केवल पृथकतावाद के परिचायक हैं, अपितु भारतीय राष्ट्रीयता के लिये भी हानिकारक हें।

भारत में मुसलमान मुस्लिम देशों की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र और सुखी हैं। मुसलमानों के मत उन देशों में सुरक्षित नहीं रह सकते, जहाँ कट्टरपंथी मुसलमानों का राज्य है। प्रगतिशील लेखक मुजफ्फर हुसैन लिखते हैं - "भारतीय मुसलमानों में किसी मुद्दे को लेकर न तो विवाद है और न ही तनाव, इसलिये जब अन्य देशों के मुसलमान शिया-सुन्नी आधार पर, तो कहीं मुजाहिद्दीन गुट की स्पर्धा को लेकर, तो कहीं सरकार और धर्मजनूनी संगठनों के बीच की रस्साकशी के कारण आपस में तलवारें भांजे हुये हैं, वहाँ भारतीय मुसलमान इन सभी बलाओं से मुक्त हैं।" [12] फिर भी अनेक मुस्लिम नेता भारत में मुसलमानों के शोषण के बारे में आये-दिन राग अलापते रहते हैं। यह उनकी साम्प्रदायिक व पृथकतावादी मानसिकता को ही इंगित करता है।

मजहब या पंथ किसी भी व्यक्ति का निजी मामला है। इसे समाज और राष्ट्र के ऊपर नहीं समझा जाना चाहिये। यदि मजहब को समाज और राष्ट्र से अधिक महत्व दिया गया तो यह स्थिति राष्ट्रीयता के विकास में निश्चय ही घातक होगी। मजहबी मामलों में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता अन्यन्त आवश्यक है। मजहबी विचारों को राष्ट्र से ऊपर समझने से टकराव अवश्यम्भावी है। मानवता के सुखद भविष्य के लिये विचार-स्वातन्त्रय परम आवश्यक हैं।

---

11. वीर अर्जुन, नई दिल्ली, दि० 19 अक्टूबर, 1977 में प्रकाशित
12. मुजफ्फर हुसैन कृत 'इस्लामी विदेशमंत्री सम्मेलन' लेख से उद्धृत, उजाला दि० 28.101994

इस्लाम और तर्कवाद

धर्म श्रद्धा प्रधान होना चाहिए, अन्धविश्वास युक्त नहीं। यह तर्क और विज्ञान की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए। धर्म को सृष्टि के नियमों का अवलोकन करने और उससे नये आविष्कार करने की प्रेरणा देनी चाहिए। सृष्टि के प्रारम्भ से ही इसका स्वरूप सनातन एवं पूर्ण रहा है। धर्म की वृत्ति अन्वेषण की होनी चाहिए। इसका उद्देश्य भेड़ों को मनुष्य बनाना होना चाहिए न कि मनुष्यों को भेड़ बनाना। ईश्वर क्या है ? जीव क्या है ? संसार क्या है ? इन सूक्ष्म विषयों पर बुद्धि का प्रयोग किया जाये या नहीं ? इस्लाम में यह सब अनिष्ट माना जाता है।

सत्य की अनन्तता का प्रत्यक्ष बुद्धि से होता है। बुद्धि पर एकाधिकार मनुष्य का होता है क्योंकि वह बुद्धि-प्रधान प्राणी है। मनुष्य किसी भी विषय पर तर्क कर सकता है। यही गुण उसे प्राणियों में श्रेष्ठतम स्थान प्रदान करता है। वैदिक धर्म तर्कप्रधान है। यह विज्ञान-सम्मत है। इस्लाम में तर्क को कोई स्थान नहीं है। यह इल्हाम माना जाता है। कोई भी व्यक्ति इसमें एक शब्द भी परिवर्तित नहीं कर सकता। इस पर वाद-विवाद का प्रश्न ही नहीं उठता। उचित होता कि इस्लाम में तर्क का सम्मान किया जाता। आखिर तर्क ही तो है, जो मनुष्य को पशुओं से पृथक करता है। तर्क ईश्वर द्वारा प्रदत्त विशेष भेंट है।

इस्लाम में अल्लाह को नित्य माना जाता है, जीव और प्रकृति को नहीं। वही आरम्भ में है और वही अन्त में है। जब कुछ नहीं था तो वह था। वह सदा से है और सदा रहेगा। कुरान में कहा गया है, "वही आदि है और वही अन्त है।" [1] कुरान में लिखा है कि 'कुन फ यकून' अर्थात् अल्लाह ने कहा 'होजा और हो जाता है'। मुसलमानों की मान्यता है कि सृष्टि की रचना के लिए अल्लाह को किसी अन्य पदार्थ की आवश्यकता न थी क्योंकि वह सर्वशक्तिमान है। कुरान के अनुसार, "वह तो जब किसी चीज का इरादा करता है, तो उसका काम बस यह है कि उसे कह दे कि हो जा, और वह हो जाती है।" [2] पर प्रश्न उठता है कि क्या बिना कारण कार्य हो सकता है ? क्या अल्लाह सर्वशक्तिमान होते हुए भी अपने गुण-कर्म-स्वभाव के प्रतिकूल कार्य कर सकता है ?

1. कुरआन मजीद, सूरा 57, आयत 3, पृष्ठ 1008
2. वही, सूरा 36, पृष्ठ 794

कितनी भी प्रार्थना करने पर क्या वह दूसरा अल्लाह बना सकता है ? क्या वह सूर्य को पूर्व के स्थान पर पश्चिम से निकाल सकता है ? क्या वह बाँझ महिला से बुढ़ापे की अवस्था में बच्चा उत्पन्न कर सकता है ? अल्लाह आज भी सर्व शक्तिमान है तो फिर वह 'कुन' कहने मात्र से चीजों को क्यों नहीं बना देता ? क्या वह 'कुन' कह कर बीज को वृक्ष बना सकता है ? वास्तविकता यह है कि हर एक की उत्पत्ति का क्रम है और काल की मर्यादा नियत है। हर कार्य के लिए कारण चाहिए। अल्लाह के अतिरिक्त किसी अन्य को नित्य न मानना अल्लाह की महत्ता कम करना है, बढ़ाना नहीं। स्वामी दयानन्द लिखते हैं, "भला खुदा ने हुक्म दिया कि हो जा तो हुक्म किसने सुना ? और किसको सुनाया ? और कौन बन गया ? किस कारण से बनाया ? जब यह लिखते हैं कि सृष्टि के पूर्व सिवाय खुदा के कोई भी दूसरी वस्तु न थी तो यह संसार कहाँ से आया ? बिना कारण कोई भी कार्य नहीं होता तो इतना बड़ा जगत कारण के बिना कहाँ से हुआ ? यह बात केवल लड़कपन की है।" [3]

यदि सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व केवल अल्लाह ही था और उसके अतिरिक्त अन्य कोई सत्ता न थी तो इसका अर्थ यह हुआ कि अल्लाह पूर्ण है। किसी भी पूर्ण चीज को पूर्ति की आवश्यकता नहीं होती है। पूर्ति की आवश्यकता केवल उस चीज को होती है जो अपूर्ण हो। यदि अल्लाह ने सृष्टि की रचना केवल अपने लिए की तो वह अपूर्ण हो गया। इसलिए तर्क संगत यही है कि सृष्टि की रचना परमपिता परमात्मा द्वारा उन अनन्त जीवों के हित के लिए की गई जो सृष्टि की रचना से पूर्व भी थे तथा जो अजर, अमर, अनादि, अल्पज्ञ और चेतन थे। आवश्यकता चेतन की होती है, जड़ की नहीं। यदि अल्लाह के अतिरिक्त अन्य चेतन सत्तायें नहीं होतीं तो सृष्टि की रचना की कोई आवश्यकता ही नहीं होती। अतः परमात्मा, जीवात्मा और प्रकृति – ये तीनों सत्तायें शाश्वत् हैं।

कुरान में अल्लाह को कहीं सर्वव्यापक दिखाया गया है तो कहीं उसे राज सिंहासन (अर्श) पर आराम करते हुए। कहीं उसे सर्वदेशी बताया गया है तो कहीं उसे एकदेशी। कुछ विद्वानों के अनुसार इस्लाम में अल्लाह का स्वरूप निराकार है तो कुछ अन्य के अनुसार साकार। जो लोग अल्लाह को निराकार मानते हैं, वह इसे अद्वितीय, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, अनुपम और अतिसमीप मानते हैं। कुरान की निम्न आयत उसके निराकार स्वरूप को प्रदर्शित करती है :–

3. स्वामी दयानन्द, सत्यार्थ प्रकाश, पृष्ठ 368

"वही आदि है और वही अन्त है, वही भीतर है और वही बाहर है और वह हर चीज का जानने वाला है।" [4]

जो लोग अल्लाह के स्वरूप को साकार मानते हैं, उनका कहना है कि अल्लाह सातवें आसमान में सिंहासन के ऊपर बैठा हुआ है जहाँ वह फरिश्तों के द्वारा सारी सृष्टि पर शासन करता है। उनका कहना है कि यदि अल्लाह सर्वत्र होता तो मुहम्मद साहब के पास कुरान को जिब्राइल के द्वारा भेजने की क्या आवश्यकता थी ? इस साकारवाद के आधार पर ही मुहम्मद साहब की 'मिअराज' यात्रा की अनेक कथायें हदीसों में वर्णित हैं। अल्लाह मूत्र-पुरीष आदि घृणित स्थानों में नहीं रहता। अल्लाह को साकार मानने में कुरान की निम्न आयतें प्रमाण के रूप में प्रस्तुत की जा सकती हैं :-

1. "निसंदेह तुम्हारा 'रब' वही अल्लाह है जिसने आकाशों और धरती को छः दिनों में पैदा किया, फिर राजसिंहासन पर विराजमान होकर इन्तजाम चला रहा है।" [5]
2. "वह रहमान, जो सिंहासन पर विराजमान हुआ।" [6]
3. "वे जो सिंहासन को उठाये हुये हैं, और जो उसके गिर्द (घेरा बाँधे हुये) हैं, अपने 'रब' की प्रशंसा के साथ तसवीह करते हैं।" [7]
4. "वही है जिसने आकाशों और धरती को छः दिनों में पैदा किया, फिर राजसिंहासन पर विराजमान हुआ।" [8]
5. "और फरिश्ते उसके किनारों पर होंगे, और उस दिन तुम्हारे 'रब' के सिंहासन को आठ (फरिश्ते) अपने ऊपर उठाये होंगे।" [9]

कुरान में ऐसी अनेक आयतें हैं जो यह प्रदर्शित करती हैं कि अल्लाह फरिश्तों, आदम और शैतान से वार्तालाप करता है। इस वार्तालाप में आदम को शिक्षा देकर बहिश्त में प्रविष्ट किया गया है। फरिश्तों ने पहले तो घमण्ड किया, किन्तु बाद में वे सिजदा करने को तैयार हो गये तथा शैतान प्रारम्भ से अन्त तक विद्रोही बना रहा। कुरान के अनुसार पैगम्बर सन्देश लाने के लिए या तो अल्लाह का संकेत पकड़ेगा या

---

4. कुरआन मजीद, सूरा 57, आयत 3, पृष्ठ 1008
5. वही, सूरा 10, आयत 3, पृष्ठ 395
6. वही, सूरा 20, आयत 5, पृष्ठ 557
7. वही, सूरा 40, आयत 7, पृष्ठ 846
8. वही, सूरा 57, आयत 4, पृष्ठ 1008
9. वही, सूरा 66, आयत 17, पृष्ठ 1070

पर्दे में होकर बातें करेगा अथवा फरिश्ते के द्वारा वाणी सुनेगा।[10] यह माना जाता है कि मुहम्मद साहब दो पर्दों में थे और उन्होंने अल्लाह की आवाज सुनी। एक पर्दा सुर्ख ज़री का था और दूसरा श्वेत मोनियों का। दोनों पर्दों के मध्य में ७० वर्ष चलने योग्य मार्ग था।[11] इस प्रकार यह कहना अनुचित न होगा कि इस्लाम में ईश्वर की कल्पना किसी असीम शक्ति की नहीं अपितु स्थान और समय की दृष्टि से एक सीमित व्यक्ति की है।

इस्लाम में अल्लाह के अतिरिक्त अन्य किसी पर भी ईमान न लाने का सन्देश है, किन्तु प्रश्न उठता है कि पैगम्बर मुहम्मद को ईमान में अल्लाह के साथ क्यों शरीक किया गया है ? साथ ही अल्लाह उन्हें पैगम्बर किये बिना अपना अभीष्ट कार्य नहीं कर सकता तो अवश्य ही सर्वशक्तिमान नहीं कहा जा सकता। कुरान में कहा गया है - "ये अल्लाह की सीमायें हैं और जो कोई अल्लाह और उसके रसूल के आदेशों का पालन करेगा, उसे अल्लाह ऐसे बागों में दाखिल करेगा जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, उनमें वह सदैव रहेगा। और यही बड़ी सफलता है।"[12] अतः उसे लाशरीक कहना उचित नहीं है।

कुरान में कहा गया है - "और यह कि सजदे अल्लाह के हैं तो अल्लाह के साथ किसी को न पुकारो।"[13] यदि यह बात सत्य है तो मुसलमान कल्मे - 'ला इलाह इल्लिलाः मुहम्मदर्रसूलल्लाः' में अल्लाह के साथ पैगम्बर मुहम्मद को क्यों पुकारते हैं ?

कुरान का अल्लाह पक्षपाती है। वह केवल मुसलमानों का है। गैर-मुसलमानों पर तो वह नाना प्रकार के कहर ढाने वाला है। कुरान के अनुसार वह केवल मुसलमानों को पार उतारने वाला है तथा अन्यों को दरिया में डुबो देने वाला है।[14] क्या यह तर्कसंगत है कि इस्लाम को मानने वाले सभी धर्मात्मा हैं तथा अन्य मतों को मानने वाले सभी पापात्मा। यह तो कोई कट्टरपंथी मुसलमान भी दावा नहीं कर सकता कि जो मुसलमान नहीं हैं, वे नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से श्रेष्ठ नहीं होते।

अल्लाह एक है। इस्लाम में बहुदेवीदेवतावाद निषिद्ध है। किन्तु क्या बहुदेवीदेवतावाद या शिर्क में आस्था रखना इतना बड़ा पाप है कि उसके मानने वाले की हत्या कर दी

---

10. वही, सूरा 42, आयत 51, पृष्ठ 885
11. उपरोक्त आयत का भाष्य 'तफसीरे हुसैनी' से
12. कुरआन मजीद सूरा 4, आयत 13, पृष्ठ 223
13. वही, सूरा 72, आयत 18, पृष्ठ 1087
14. वही, सूरा 7, आयत 136, पृष्ठ 132

जाये ? शिर्क के स्थान पर नैतिक अपराधों के लिए दण्ड दिया जाना अधिक आवश्यक है क्योंकि इनसे सामाजिक व्यवस्था ध्वस्त हो जाती है। फिर यदि अल्लाह के अतिरिक्त किसी भी अन्य तत्व को विद्यमान मानना शिर्क है तो मुसलमान अल्लाह के साथ-साथ फरिश्तों, शैतानों, जन्नतवालों और जहन्नुमवालों में क्यों ईमान लाते हैं ? क्या यह शिर्क नहीं है ?

कुरान में शैतान को तो सभी को बहकाने वाला कहा गया है, जबकि शैतान को बहकाने वाला अल्लाह बताया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि अल्लाह शैतान का भी शैतान है क्योंकि शैतान प्रत्यक्ष कहता है कि अल्लाह ने ही उसे पथभ्रष्ट किया।[15] गैर-मुस्लिम शैतान की पार्टी के माने जाते हैं। फिर जो अल्लाह शैतान का कुछ नहीं बिगाड़ सका वह भला शैतान और उसके अरबों गैर-मुस्लिम अनुयायियों का भला क्या बिगाड़ सकता है ?

कुरान के अल्लाह को पदार्थ विद्या का ज्ञान नहीं था क्योंकि उसने एक आकाश को, जो कि बिना बना अनादि है, को अनेक आसमानों में प्रदर्शित किया है तथा उनके निर्माण के लिए छः दिन का समय बताया है।

अल्लाह चाल चलता है, उनके विरूद्ध जो मुहम्मद के विरूद्ध हैं। कुरान में कहा गया है – "वे एक चाल चल रहे हैं और मैं एक चाल चल रहा हूँ।"[16] कुरान यदि यह मानती है कि सभी गैर-मुस्लिम अज्ञानी हैं, तो अल्लाह को उनके विरूद्ध षड़यन्त्र करने के स्थान पर उनका मार्गदर्शन करना चाहिये, क्योंकि अज्ञानियों और पथभ्रष्टों को असत से सत्, अन्धकार से प्रकाश और मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जाना ही ईश्वर का गुण है।

कुरान के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अल्लाह मुहम्मद साहब पर विशेष कृपावान रहे। सूरा अत-तहरीम में कहा गया है – "हे नबी ! जिस चीज को अल्लाह ने तुम्हारे लिए हलाल किया है उसे अपनी पत्नियों को खुश करने के लिए क्यों हराम करते हो ?"[17] इस आयत की विवेचना में स्वामी दयानन्द लिखते हैं कि अल्लाह क्या हुआ, मुहम्मद साहब के घर का भीतरी और बाहरी प्रबन्ध करने वाला भृत्य ठहरा। इस पर दो कहानियाँ हैं। एक तो यह कि मुहम्मद साहब को शहद का शर्बत प्रिय था। उनकी कई बीवियाँ थीं उनमें एक के घर पीने में देर लगी तो दूसरियों को असह्य प्रतीत हुआ। उनके

15. स्वामी दयानन्द, उपरोक्त, पृष्ठ 377
16. कुरआन मजीद, सूरा 86, आयत 15 व 16
17. वही, सूरा 66, आयत 1, पृष्ठ 1053

कहने-सुनने के पीछे मुहम्मद साहब सौगंध खा गये कि हम न पीयेंगे। दूसरी यह कि उनकी कई बीबियों में से एक की बारी थी। उसके यहाँ रात्रि को गये तो वह न थी, अपने बाप के यहाँ गई थी। मुहम्मद साहब ने एक लौंडी अर्थात दासी को बुलाकर पवित्र किया। जब बीबी को इसकी खबर मिली तो वह अप्रसन्न हो गई। तब मुहम्मद साहब ने सौगंध खाई कि मैं ऐसा न करूँगा और बीबी से भी कह दिया कि तुम किसी से यह बात मत कहना। बीबी ने स्वीकार किया कि न कहूँगी। फिर उन्होंने दूसरी बीबी से जा कहा। इस पर यह आयत अल्लाह ने उतारी - "जिस वस्तु को हमने तेरे पर हलाल किया, उसको तू हराम क्यों करता है।" [18]

अल्लाह की मुहम्मद साहब पर विशेष कृपा निम्न आयतों से भी प्रदर्शित होती है :-

"उसके रब को क्या देर लगेगी यदि वह तुम्हें तलाक दे दे, इसमें कि वह तुम्हारे बदले तुमसे अच्छी पत्नियाँ उसे प्रदान करे, मुस्लिम, ईमान वाली, भक्ति और विनय भाव से रहने वाली, तौबा करने वाली, इबादत करने वाली, सियाहत करने वाली, पति से परिचित (अर्थात् विधवा आदि) और कुमारियाँ।" [19]

कुरान के अनुसार सबसे पहला व्यक्ति आदम था, जिसे अल्लाह ने मिट्टी से उत्पन्न कर अपने दोनों हाथों से बनाया तथा फिर उसमें अपनी रूह (आत्मा) फूँक दी। [20] प्रश्न उठता है कि क्या वास्तव में आदमी के शरीर की रचना केवल मिट्टी से ही हुई है ? क्या शरीर में अन्य चार भौतिक तत्व – जल, अग्नि, वायु और आकाश नहीं है ? क्या आदमी को बनाने वाला अल्लाह दो हाथों वाला है ? तो क्या वह मनुष्य की तरह अवयवधारी शरीर वाला है ?

यदि अल्लाह ने अपने शरीर से मनुष्य के शरीर में रूह फूँक दी तो फिर मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र कैसे माना जा सकता है ? साथ ही मनुष्य में कुफ्र की प्रवृत्ति कैसे आ गई ? यदि अल्लाह की सत्ता ही-नित्य है, तो उसकी सृष्टि में पाप क्यों आ गया ? वैदिक दर्शन में कर्म करने में आत्मा स्वतन्त्र है क्योंकि उसकी स्वतन्त्र सत्ता है, किन्तु फल ईश्वराधीन है।

इस्लाम में रूह को अल्लाह ने पैदा किया है। यदि रूह पैदा हुई हैं तो वे मर भी जायेंगी। यदि वे पूर्ण नष्ट हो गयीं तो उनका अभाव भी उत्पन्न हो जायेगा। वैदिक

18. स्वामी दयानन्द, उपरोक्त, पृष्ठ 368
19. कुरआन मजीद, सूरा 66, आयत 5, पृष्ठ 1054
20. वही, सूरा 27, आयत 28 व 29, पृष्ठ 476

दर्शन में आत्मा अमर है। वह अनादि है और अनन्त है। उसकी पृथक सत्ता है। उसे न परमात्मा ने उत्पन्न किया है और न वह उसे नष्ट कर सकता है।

वैदिक धर्म अहिंसा को सार्वभौम धर्म मानता है। किन्तु इस्लाम में रक्त से परहेज है, रक्त बहाने से नहीं। जीवों को कष्ट देना भी इस्लाम में निषिद्ध नहीं है। कुरान के अनुसार मनुष्यों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए अल्लाह ने उन्हें बनाया है।

इस्लाम में मनुष्य का कोई संचित और प्रारब्ध कर्म नहीं होता। संसार के भोगों की असमानता जीव के कर्मों के अनुसार नहीं अपितु अल्लाह की इच्छा पर आधारित है। कुरान में ऐसी अनेक आयतें हैं जिनसे जीव की कर्म करने में भी परतन्त्रता झलकती है। इस्लाम में तोबा करने तथा रसूल की सिफारिश से भी पाप क्षमा कर दिया जाता है। वैदिक धर्म में प्रत्येक जीव को अपने कर्मों का फल सुनिश्चित रूप में भोगना आवश्यक है। ईश्वर अच्छे और बुरे कर्मों का फल यथावत देता है। यदि कोई व्यक्ति सच्चे दिल से भी पश्चाताप करे, तो भी वह बुरे कर्म की सजा पाता है अन्यथा सृष्टि में अराजकता हो जायेगी।

कुरान का यह कथन तर्कसंगत नहीं है तथा पापों की वृद्धि करने वाला है कि "जो हो चुका उसे अल्लाह ने क्षमा कर दिया, परन्तु जिस किसी ने फिर ऐसा किया, तो उससे अल्लाह बदला लेगा।"[21] तोबा करने से भी यदि पाप क्षमा कर दिये जायें तो इससे पापियों का पाप करने का हौसला और भी बढ़ जायेगा, क्योंकि पश्चाताप करने से ही यदि कोई न्यायाधीश अपराधी के अपराधों को क्षमा कर दे तो इससे समाज में कानून और व्यवस्था की समस्यायें निश्चित रूप से बढ़ जायेंगी।

इस्लाम जीवों के पुनर्जन्म में आस्था नहीं रखता। संसार में मनुष्य, पशु, पक्षी आदि सबके जीव प्रथम ही प्रथम शरीर में प्रविष्ट हुये। मरने के पश्चात उनका पुनः जन्म न होगा। कयामत के दिन प्रत्येक जीव अपने पुराने शरीर के साथ जीवित हो जायेगा। किन्तु कुरान में ऐसी अनेक आयतें हैं जो पुर्नजन्म को इंगित करती हैं :-

1. " ...... जब कि तुम निर्जीव थे उसने तुम्हें जीवित किया। फिर वही तुम्हें मारता है, फिर वही तुम्हें जीवित करेगा, फिर उसी की ओर तुम लौटाये जाओगे।"[22]
2. "अल्लाह ने उसे सौ वर्ष की मौत दे दी, फिर उसे उठ खड़ा किया।"[23]
3. "जीवित को निर्जीव में से निकालता है और निर्जीव को जीवित में से निकालता

---

21. वही, सूरा 5, आयत 95, पृष्ठ 275
22. वही, सूरा 2, आयत 28, पृष्ठ 130
23. वही, सूरा 2, आयत 259 पृष्ठ 173

है।" [24]

4. "भला जब हम मर चुके हों और मिट्टी और हड्डियाँ होकर रह जायें, तो फिर वास्तव में हम (पुनः जीवित करके) उठा खड़े किये जायेंगे।" [25]
5. "हम तुम्हारा आकर बदल दें और तुम्हें किसी ऐसे रूप में उठा खड़ा करें जिसे तुम जानते नहीं।" [26]

कुरान की इन आयतों से स्पष्ट है कि यदि पुनर्जन्म के सिद्धान्त को न माना जाये तो इन आयतों का कोई अर्थ नहीं प्रतीत होता है। जब ये आयतें लिखी गयीं, उस समय अरब के वातावरण में पुनर्जन्म सम्बन्धी विचार फैले हुये थे जिनको या तो मुहम्मद साहब ने अपनी दृष्टि से ओझल कर दिया या उनके बाद मुस्लिम विद्वानों ने इन आयतों की भिन्न-भिन्न व्याख्यायें कर दीं।

वैसे इस्लाम में कई ऐसे सम्प्रदाय हैं जो पुनर्जन्म मानते हैं। कवि-दार्शनिक रूमी, अपनी 'मस्नुई' में लिखते हैं - "हम चुँ सब्जा बारहा रोईद अम्। हफ्तसद् हफ्ताद कालिब् दीद अम्।।" पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानने वाले कुरान की इस आयत को साक्षी रूप में प्रस्तुत करते हैं - "जिस पर अल्लाह कुपित हुआ, उनमें से कुछ को वानर और सूअर बना दिया।" [27]

पुनर्जन्म में आस्था न रखने वाले मुसलमानों के बारे में पं० गंगाप्रसाद लिखते हैं - "क्या वह मरने पर कब्र में जिस्म के साथ जायेंगे या बहिश्त में भेज दिये जायेंगे या नरक में। कयामत के दिन तो बहुत दिनों में आयेंगे। हजरत आदम से लेकर असंख्य मनुष्य मर चुके हैं - पैगम्बर भी और साधारण अनुयायी भी, काफिर भी और मोमिन भी। बहिश्त और दोजख में जाने का सवाल तो कयामत के दिन ही निश्चित होगा। आज हावील की रूह कहाँ है और काबील की कहाँ है ? हजरत मूसा की कहाँ और फिरौन की कहाँ ? हजरत मुहम्मद साहब की कहाँ और अबू लहब और उसकी बीबी की कहाँ ?" [28]

कुरान के अनुसार कयामत के पश्चात अल्लाह सभी लोगों को पुनः जीवित करके उठायेगा और उनके कर्मों का फल देगा, तो क्या रूहें कब्रों में रहती हैं ? इससे तो

24. वही, सूरा 3 , आयत 27, पृष्ठ 186
25. वही, सूरा 37, आयत 16, पृष्ठ 799
26. वही, सूरा 56, आयत 61, पृष्ठ 1003
27. वही, सूरा 7, आयत 166, पृष्ठ 338
28. प० गंगा प्रसाद उपाध्याय, इस्लाम और आर्यसमाज, पृष्ठ 76

उन लोगों के साथ अन्याय हुआ जो सबसे पहले मर गये। स्वामी दयानंद लिखते हैं - "जब कयामत की रात अर्थात् प्रलय ही में न्याय करने के लिये पैगम्बर और उनके उपदेश मानने वालों को खुदा बुलायेगा तो जब तक प्रलय न होगा तब तक सब दौरा सुपुर्द रहे और दौरा सुपुर्द सबको दुखदायक है जब तक न्याय न किया जाये इसलिए शीघ्र न्याय करना न्यायधीश का उत्तम काम है।" [29]

इस्लाम की मान्यता है कि अपने-अपने कर्मों का फल मनुष्य ही पायेंगे, पशु-पक्षी नहीं। पशु-पक्षियों को मनुष्यों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए अल्लाह ने बनाया है। कुरान की यह मान्यता तर्कसंगत प्रतीत नहीं होती कि "वह जिसे चाहता है, क्षमा करता है, और जिसे चाहता है यातना देता है।" [30] यह तो अल्लाह का सरासर अन्याय है क्योंकि उसे पापी को दण्डित करना चाहिए। ईश्वर तो न्यायाधीशों का भी न्यायाधीश है। यदि चोर, डकैत और कातिलों को क्षमा माँगने पर न्यायाधीश क्षमा कर दें तो क्या समाज में अराजकता उत्पन्न नहीं हो जायेगी ? उसी प्रकार परमात्मा पापियों के पाप क्षमा कर दिया करे तो क्या सृष्टि में अव्यवस्था उत्पन्न नहीं हो जायेगी ?

कुरान का यह कथन भी दार्शनिक दृष्टि से उचित नहीं है कि "और कहो - 'हम क्षमा चाहते हैं', हम तुम्हारी खताओं को क्षमा कर देंगे।" [31] इस पर स्वामी दयानन्द लिखते हैं - "यह खुदा का उपदेश सबको पापी बनाने वाला है या नहीं ? क्योंकि जब पाप क्षमा होने का आश्रय मनुष्यों को मिलता है तब पापों से कोई भी नहीं डरता। इसलिए ऐसा कहने वाला खुदा और यह खुदा की बनायी हुई पुस्तक नहीं हो सकती क्योंकि वह न्यायकारी है, अन्याय कभी नहीं करता और क्षमा करने में अन्यायकारी हो जाता है किन्तु यथापराध ही दण्ड देने में न्यायकारी हो सकता है।" [32]

परमात्मा पूर्ण होने के कारण उसका न्याय भी पूर्ण है। मानवीय न्याय में मानवीय दुर्बलताओं के कारण अन्याय की सम्भावना है, किन्तु ईश्वरीय न्याय में अन्याय का प्रश्न ही नहीं उठता। भारतीय दर्शन के अनुसार वर्तमान जीवन के सुख-दुख इस अथवा किसी भी पूर्व जीवन के अच्छे-बुरे कर्मों का फल है। अन्यथा प्रश्न उठता है कि वर्तमान जीवन के सुख-दुख का क्या कारण है ? बिना कारण वर्तमान जीवन की असमानताओं के लिये परमात्मा पर अन्यायी होने का दोष आता है।

---

29. स्वामी दयानन्द, उपरोक्त, पृष्ठ 385
30. कुरआन मजीद, सूरा 5, आयत 18, पृष्ठ 261,
31. वही, सूरा 2, आयत 58, पृष्ठ 134
32. स्वामी दयानन्द, उपरोक्त, पृष्ठ 365

जो पुनर्जन्म को नहीं मानते वे वर्तमान जीवन के सुख-दुख का कारण नहीं बता सकते। क्या कारण है कि अत्यन्त पवित्र जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति भी दुख पाते हैं। मुसलमान मुहम्मद साहब के जीवन को निष्पाप मानते हैं। फिर प्रश्न उठता है कि मुहम्मद साहब को अपने जीवन में कष्ट क्यों उठाने पड़े ? आपको मक्का से मदीना क्यों पलायन करना पड़ा ? क्यों आपके पुत्र इब्राहीम की मृत्यु से आपको दुखी होना पड़ा ? क्यों आप मृत्यु से पूर्व अस्वस्थ रहे ?

यदि वर्तमान जीवन के सुख-दुख अकारण प्राप्त हुये हैं तो कयामत के दिन जन्नत-जहन्नुम प्राप्त होने में कर्म-बन्धन का सिद्धान्त कहाँ तक युक्तियुक्त है ? या फिर यह माना जाये कि संसार में तो अल्लाह बिना न्याय के कार्य करता है, किन्तु कयामत के दिन अपनी कार्यपद्धति बदल देगा।

कुरान के अनुसार, अल्लाह ने ही आत्मा उत्पन्न कीं तथा उसी ने उनके कर्म भी निश्चित किये। किसी के भाग्य लेख में पवित्रता लिखी गई तो किसी के भाग्य में पाप करना। फिर प्रश्न उठता है कि कयामत के दिन कर्मों का फल लोगों को क्यों दिया जाना चाहिये क्योंकि भाग्य लेख तो प्रारम्भ से ही निश्चित कर दिये गये हैं।

कुरान स्वर्ग और नरक के सिद्धान्त का प्रतिपादन करती है। स्वर्ग और नरक सातवें आसमान पर हैं। स्वर्ग दाहिनी ओर है और नरक बायीं ओर। इनके मध्य अल्लाह का सिंहासन है। स्वर्ग मुसलमानों के लिए है और नरक काफिरों के लिए। कुरान का यह सिद्धान्त तर्कसंगत नहीं है कि मुसलमान सदैवकाल बहिश्त में वास करने वाले हैं।[33] क्योंकि कोई भी जीव अत्यन्त पाप या पुण्य करने का सामर्थ्य नहीं रखता, इसलिये वह सदैव नरक या स्वर्ग में नहीं रह सकता।

धर्म वासना को वश में रखने की शिक्षा देता है। यदि कोई जन्नत की हूरों पर लट्टू होकर नमाज और रोजा रखता है तो वह मन का गुलाम हो जायेगा। इस्लाम ने जन्नत के बहुत से प्रलोभनों को देकर लोगों को भड़का दिया है। कुरान का यह कहना भी तर्कसंगत और वैज्ञानिक नहीं है कि मुसलमानों को जन्नत में ऐसे बाग मिलेंगे जिनके नीचे नहरें बहती हैं तथा उनके लिए वहाँ पाक-साफ जोड़े होंगे और वे वहाँ सदैव रहेंगे।[34]

यदि मुसलमानों के जन्नत में बाग, नहर आदि हैं तो उनके रखरखाव के लिए

---

33. कुरआन मजीद, सूरा 2, आयत 25, पृष्ठ 138
34. वही, सूरा 2, आयत 25, पृष्ठ 130

माली, मजदूर आदि भी होंगे। कुरान के अनुसार, शुभ कर्म करने वाले मुसलमानों को जन्नत में न कोई परिश्रम करना पड़ता है और न उसमें उन्हें कभी थकान होगी। जन्नत में मिलने वाले सुखों के बारे में कुरान की निम्नांकित कुछ आयतें महत्वपूर्ण हैं :-

1. "उस जन्नत का हाल यह है, जिसका वादा डर रखने वालों से किया गया है, उसमें पानी की नहरें हैं जिसमें सड़ाँध नहीं, और दूध की नहरें हैं जिनका मजा बदला नहीं, और शराब की नहरें हैं जो पीने वालों के लिये स्वादिष्ट हैं, और साफ-सुथरे शहद की नहरें हैं, और उनके लिये वहाँ हर प्रकार के फल हैं।" [35]
2. "इन ईमान वाले पुरूषों और ईमान वाली स्त्रियों से अल्लाह ने ऐसे बागों का वादा किया है जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी, जिनमें वे सदैव रहेंगे।" [36]
3. "तो दाहिनी ओर वाले, क्या समझते हो दाहिनी ओर वालों को ? .... जड़ाऊ तख्तों पर हैं, टेक लगाये उन पर आमने-सामने बैठे हैं। फिर रहे हैं उनके पास ऐसे किशोर जिनकी अवस्था सदा एक ही रहेगी। आबखोरे और आफताबे लिए और प्याला निथरी बहती शराब से भरा हुआ, जिससे न उनका सिर दुखे और न उनकी बुद्धि में विकार आये। और मेवे जो पसन्द करें। और पक्षी का माँस जिसकी इच्छा हो। और बड़ी और सुन्दर आँखों वाली (मृगनैनी) परम रूपवती स्त्रियाँ, जैसे धराऊ मोजी हों .... और ऊपर लगे हुए बिछौने हैं, हमने उन स्त्रियों को एक विशेष उठान पर उठाया है और हमने उन्हें कुमारी बनाया है, प्रेयसी और समायु, दाहिनी ओर वालों के लिए।" [37]
4. "सिवाय अल्लाह के चुने हुये बन्दों के, उनके लिए जानी-बूझी रोजी है, मेवे। और उनका सम्मान किया जायेगा नेमत-भरी जन्नतों में, तख्तों पर आमने-सामने बैठे होंगे, निथरी बहती (शराब के स्रोत) से मद्यपात्र भर-भर कर उनके बीच फिराये जायेंगे, उज्ज्वल, पीने वालों के लिए आस्वाद, न उसमें कोई खराबी होगी और न वे उससे मतवाले होंगे। और उनके पास निगाहें बचाने वाली, सुन्दर आँखों वाली स्त्रियाँ होंगी, ऐसी (निर्मल) मानो छिपे हुये अण्डे हैं।" [38]

कुरान में वर्णित जन्नत के भोग पदार्थ सांसारिकता के प्रतीक हैं। पं० चूमपति लिखते हैं, - "इन सभी भोग-विलास वालों को देखकर एक विलासी धनवान के महल

---

35. वही, सूरा 47, आयत 15, पृष्ठ 931
36. वही, सूरा 9, आयत 72, पृष्ठ 380
37. वही, सूरा 56, आयत 8,15 से 23,34,35,36,37, पृष्ठ 1000-1002
38. वही, सूरा 37, आयत 40,41,42,43,44,45,46,47,48,49, पृष्ठ 801

की कल्पना हो सकती है कि उनमें नहरें, सोने और चाँदी के आभूषण, पतले व गाढ़े रेशम के वस्त्र, जड़ाऊ तख्त, मेवे, शराब, पंछियों का माँस, लड़के जैसे मोती बिखरे हुये शराब के प्याले हाथों में लिए रहे हैं। पास में औरतें बैठी हैं मोटी आँखों वाली, गोरी, सुन्दर जैसे छुपे हुये मोती या अण्डे, उनसे विवाह भी कर दिया है।" [39]

कुरान में वर्णित यह विरोधाभास ही है कि वह इस संसार में शराब पीने को निषिद्ध करती है, किन्तु जन्नत में हूर, गिलमे, माँस आदि के साथ साथ शराब को मुसलमान पुरुषों और स्त्रियों को उपलब्ध कराती है। शायर गालिब ने इस जन्नत की सत्ता को अस्वीकार करते हुये कहा है :-

"खूब मालूम है जन्नत की हकीकत लेकिन,
दिल के बहलाने को गालिब यह ख्याल अच्छा है।"

कुरान में वर्णित जन्नत में जिस प्रकार आनन्द-सागर तरंगें मार रहा है, दोजख में वैसे ही विपत्ति की अग्नि धाँय-धाँय जल रही है। दोजख उन लोगों को प्राप्त होगा जो मुहम्मद साहब और कुरान के बताये हुये मार्ग पर नहीं चलते। कुरान में कहा गया है :-

1. "और जिन्होंने कुफ्र किया है और हमारी आयतों को झुठलाया है, वही लोग जहन्नम वाले हैं।" [40]
2. "हमने जहन्नम को काफिरों के लिए बन्दी घर बना रखा है।" [41]
3. "तो यदि तुम यह न कर सको - और तुम ऐसा कदापि नहीं कर सकते - तो उस आग से डरो, जिसका ईंधन मनुष्य और पत्थर होंगे और जो काफिरों के लिए तैयार की गई है।" [42]
4. "और जो कोई अल्लाह और उसके रसूल की अवज्ञा करेगा और उसकी सीमाओं से आगे बढ़ेगा, उसे अल्लाह आग (जहन्नम) में डालेगा, जहाँ उसे सदा रहना होगा और उसके लिये अपमानजनक यातना है।" [43]
5. फिर तुम, हे गुमराहो, झुठलाने वालो, तुम अवश्य जक्कूम (थूहर) के वृक्ष से खाओगे और उससे पेट भरोगे। फिर उस पर खौलता हुआ पानी पियोगे, और पियोगे जैसे

39. प० चमूपति, उपरोक्त, पृष्ठ 163-164
40. कुरआन मजीद, सूरा 5, आयत 10, पृष्ठ 259
41. वही, सूरा 17, आयत 8, पृष्ठ 507
42. वही, सूरा 2, आयत 24, पृष्ठ 130
43. वही, सूरा 4, आयत 24, पृष्ठ 223

प्यास से व्याकुल ऊँट पिये।" [44]

कुरान में जहन्नम की जो भीषणता प्रदर्शित की गई है तथा उसे जिस प्रकार काफिरों का बन्दीघर बताया गया है, उसी प्रकार पुराणों में भी कहा गया है कि म्लेच्छों के लिए घोर नरक बना है। दार्शनिक दृष्टि से कुरान और पुराण का यह सिद्धान्त मिथ्या है। उचित यह है कि जो धार्मिक हैं, वे सुखी रहेंगे और जो पापी हैं, वे चाहे किसी भी पंथ को मानते हों, दुखी रहेंगे।

कुरान में ऐसी अनेक आयतें हैं जो तर्क और विज्ञान की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं। उदाहरणार्थ कुछ नीचे प्रस्तुत हैं :-

1. "और तुम्हें अपने उन लोगों का हाल मालूम ही है जिन्होंने 'सब्त' के विषय में मर्यादा का उल्लंघन किया, तो हमने उनसे कह दिया ; बन्दर हो जाओ, धिक्कारे और फिटकारे हुये।" [45]
2. "फिर तुम्हारे दिल कठोर हो गये तो वे पत्थरों की तरह या उनसे भी अधिक कठोर हो गये - पत्थरों में तो कोई ऐसा भी होता है जिसमें से नहरें फूट निकलती हैं, और उनमें कोई ऐसा होता है जो फट जाता है और उसमें से पानी बह निकलता है। और उनमें कोई ऐसा भी होता है जो अल्लाह के भय से गिर पड़ता है।" [46]
3. "तब उसने अपनी लाठी (धरती पर) डाल दी, क्या देखते हैं कि वह एक प्रत्यक्ष अजगर था।" [47]
4. "और उन्होंने कहा (हे मूसा !) तू कोई भी निशानी लाकर उसके द्वारा हम पर जादू चला, हम तो तुझ पर ईमान लाने वाले नहीं हैं।"

   "फिर हमने उन पर तूफान और टिड्डियाँ और (अहितकारी) कृमि और मेंढक और रक्त, कितनी ही निशानियाँ अलग-अलग करके भेजीं।" [48]
5. "और हे मेरी जाति वालो ! यह अल्लाह की ऊँटनी तुम्हारे लिए एक निशानी है, इसे छोड़ दो कि अल्लाह की धरती में (जहाँ चाहे) खाये और तकलीफ देने के लिए इसे हाथ न लगाना, नहीं तो तात्कालिक यातना तुम्हें आ लेगी।" [49]

---

44. वही, सूरा 56, आयत 51-56, पृष्ठ 1002-1003
45. वही, सूरा 2, आयत 65, पृष्ठ 136
46. वही, सूरा 2, आयत 74, पृष्ठ 137
47. वही, सूरा 7, आयत 107, पृष्ठ 329
48. वही, सूरा 7, आयत 132 व 133, पृष्ठ 331
49. वही, सूरा 11, आयत 64, पृष्ठ 425

6. "तो उनसे अल्लाह के रसूल ने कहा - खबरदार अल्लाह की ऊँटनी और उसके पानी पीने की बारी से !"

"परन्तु उन्होंने उसे झुठलाया, और उस (ऊँटनी) को उसकी कूँचें काटकर मार डाला, तो उनके रब ने उनके गुनाह के कारण उन पर तबाही डाली और उस (बस्ती) को बराबर कर दिया।" [50]

7. "और हमने नूह को उसकी जाति वालों की ओर भेजा, और पचास साल कम एक हजार वर्ष उनमें रहा।" [51]

8. "उसने आकाशों को बिना सहारे के पैदा किया जैसा कि तुम देखते हो, और धरती में पहाड़ डाल रखे हैं, कि वह तुम्हें लेकर ढलक न जावे।" [52]

9. "वह घड़ी निकट आ पहुँची और चाँद फट गया।" [53]

10. "फिर हमने आकाश के द्वार खोल दिये जिससे मूसलाधार पानी गिरने लगा।" [54]

11. "और अल्लाह को उत्तम ऋण दिया, तो मैं अवश्य तुम्हारी बुराइयाँ तुमसे दूर कर दूँगा और तुम्हें निश्चय ही ऐसे बागों में दाखिल करूँगाा जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी।" [55]

12. "यहाँ तक कि वह सूर्यास्त की जगह पहुँचा, उसने उसे एक कृष्णसागर (काले गंदले पानी) में अस्त होते पाया।" [56]

13. "और अल्लाह ने प्रत्येक जीवधारी को पानी से पैदा किया। तो कोई उनमें अपने पेट के बल चलता है और उनमें कोई दो टाँगों पर चलता है और उनमें कोई चार पर।" [57]

14. "महिमावान है वह (अल्लाह) जो एक रात अपने बन्दे (मुहम्मद) को 'मस्जिदे हराम' से अकसा की मस्जिद तक ले गया जिसके वातावरण को हमने बरकत दी है, ताकि हम उसे अपनी कुछ निशानियाँ दिखायें।" [58]

---

50. वही, सूरा 91, आयत 13 व 14, पृष्ठ 1166
51. वही, सूरा 29, आयत 14, पृष्ठ 701
52. वही, सूरा 31, आयत 10, पृष्ठ 727
53. वही, सूरा 54, आयत 1, पृष्ठ 986
54. वही, सूरा 54, आयत 11, पृष्ठ 987
55. वही, सूरा 5, आयत 12, पृष्ठ 259
56. वही, सूरा 18, आयत 86, पृष्ठ 538
57. वही, सूरा 24, आयत 45, पृष्ठ 631
58. वही, सूरा 17, आयत 1, पृष्ठ 506

"परली सीमा की बेर के पास, जिसके निकट जन्नत है जो सदा का ठिकाना है। ...... निश्चय ही उसने अपने रब की बड़ी-बड़ी निशानियाँ देखीं।" [59]

यहाँ मुहम्मद साहब की सजीव जन्नत यात्रा का वर्णन है जिसे 'मिअराज' कहते हैं। अल्लाह ने उन्हें जन्नत में ले जाकर अपने ऐश्वर्य दिखाये। 'मिअराज' के अवसर पर अल्लाह ने आपको जो ऐश्वर्य दिखाये उसका उल्लेख कुरान में नहीं किया गया। इस संदर्भ में मुहम्मद साहब ने वर्णन किया है कि एक रात आपको बुर्राक नामक पशु के द्वारा 'मस्जिदे हराम' (काबा) से 'मस्जिदे अकसा' (बैतुल मुकद्दस) तक ले जाया गया। [60] बुर्राक एक सफेद रंग का पशु है जो गधे से बड़ा और खच्चर से छोटा होता है तथा उसके पैर वहाँ तक पड़ते हैं, जहाँ तक उसकी दृष्टि पड़े। बैतुल मुकद्दस में उन्होंने अपनी सवारी को उस स्थान पर बाँधा जिसमें अन्य पैगम्बर अपनी सवारियाँ बाँधते थे। वहाँ आपने स्वर्गीय पैगम्बरों के साथ नमाज पढ़ी।

इसके पश्चात मुहम्मद साहब हजरत जिबरील के साथ ऊपरी लोक को गये तथा विभिन्न आसमानी क्षेत्रों में आप विभिन्न महान नबियों से मिले। अन्त में आप अत्यन्त उच्च स्थानों पर पहुँचकर अपने 'रब' की सेवा में उपस्थित हुये। इस यात्रा में आपको जन्नत और जहन्नम भी दिखाये गये। इसके पश्चात आप बैतुल मुकद्दस की ओर पलट आये और वहाँ से मस्जिदे हराम वापिस आ गये। [61]

हजरत की उम्मत पर पचास नमाजें बन्धक हुई। हजरत वापिस लौटे किन्तु सम्मानीय पैगम्बरों ने समझाया कि यह बोझ तुम्हारे अनुयायियों से सहन न हो सकेगा। हजरत बार-बार अल्लाह की सेवा में गये और वहाँ से नमाजों की संख्या पाँच करा कर ही अन्त में लौटे। हजरत मूसा ने इनमें भी कमी कराने की सलाह दी तो आपने कहा कि वे अनेक बार अपने रब के पास जा चुके हैं। अब उन्हें लज्जा आती है। [62] आज के वैज्ञानिक युग में मुहम्मद साहब की यह चमत्कारी यात्रा क्या विश्वसनीय प्रतीत होती है ?

कुरान में फरिश्तों को बकरे के रूप में प्रदर्शित किया गया है, जिनके पावों से घुटनों तक का अन्तर एक आकाश से दूसरे आकाश तक का है। कुरान की अनेक बातों के अवैज्ञानिक और तर्क विरोधी होने के कारण डॉ० तस्लीमा नसरीन इसे कालातीत

---

59. वही, सूरा ५३, आयत 14, 15, व 18, पृष्ठ 979
60. वही, पृष्ठ 504
61. वही
62. पं० चमूपति, उपरोक्त, पृष्ठ 107

पुस्तक मानती हैं तथा इसकी सार्वभौमिकता को नकारते हुये इसकी ऐतिहासिकता को कायम रखने की वकालत करती हैं।

क्या यह तर्कसंगत है कि हनुमान के रूप में एक पत्थर के सामने शीश नवाता और परिक्रमा करता हिन्दू एक अज्ञानी मूर्तिपूजक है, किन्तु काबा स्थित काले पत्थर को साष्टांग प्रणाम और उसकी परिक्रमा करता मुसलमान ऐसा व्यक्ति है जिसने आध्यात्मिकता के उच्च स्तर का भेद पा लिया है ? गंगा में स्नान करता और धार्मिक अनुष्ठान और प्रक्षालन के लिए उसका जल ले जाता हिन्दू तो एक आदम, अंधविश्वासी प्रकृति पूजक है, किन्तु यही चाहत काबा स्थित जमजम के पानी से पूर्ण करता और उसे प्रक्षालन और शेष को अपने साथ ले जाता मुसलमान, यह उसका सहज वैज्ञानिक होना है ?[63]

तर्क और वाद-विवाद को महत्व न देने के कारण इस्लाम कला-विहीन नीरस मजहब माना जाता है। इस्लामी देश दुनियाँ में सर्वाधिक रूढ़िवादी और पिछड़े बने हुये हैं। इसका प्रमुख कारण है इस्लाम की कठोरता, अपरिवर्तनशील प्रकृति तथा तर्क को महत्व न देना।

63. अरुण शौरी, झूठी निन्दा – अपमान की लड़ाइयाँ, दैनिक जागरण, दिनांक 18.02.1994

अध्याय – 12

इस्लाम और आतंकवाद

आज पश्चिमी देशों में लोकतन्त्र, उदारवाद, स्वतन्त्रता, समानता व मानवाधिकारों की रक्षा का प्रश्न इतना महत्वूपर्ण है कि अन्य देशों के लोग इनमें जाना और स्थायी रूप से बसना अपना परम सौभाग्य समझते हैं। भारत में भी सृष्टि के प्रारम्भ से 'एकं सत् विप्रा बहुनाम् वन्दति' और 'सर्व पंथ समभाव' की भावना इतनी प्रबल रही है कि केरल में अरबों और सीरियाई ईसाइयों तथा गुजरात में पारसियों को सहर्ष शरण प्रदान की गई। आधुनिक काल में चीनी साम्यवादियों से उत्पीड़ित तिब्बती बौद्धों तथा बांग्लादेश के लगभग डेढ़ करोड़ मुस्लिम घुसपैठियों को भी भारत में पूर्ण सुरक्षा प्राप्त है। किन्तु इस्लाम के प्रवर्तक मुहम्मद साहब ने यह कहकर कि वे अल्लाह के अन्तिम दूत है तथा कुरान अल्लाह का आखिरी कलाम है, उदारता और समन्वय की भावना को पूर्ण तिलान्जलि दे दी। सम्पूर्ण अरब में इस्लाम को प्रस्थापित कर मुहम्मद साहब ने ईरान के तत्कालीन राजा किस्रा और रोम, मिस्र तथा इथोपिया के तत्कालीन शासकों को इस्लाम स्वीकार करने सम्बन्धी जो पत्र लिखे, वे न केवल सदभावना रहित है, अपितु धमकीयुक्त भी है। इन पत्रों की भाषा कट्टरवाद इंगित करती है।

मुहम्मद साहब के पश्चात् इस्लाम के प्रारम्भिक चार खलीफा – अबू बक्र, उमर, उस्मान और अली भी उदारता से कोसों दूर रहे। विश्व के जिन-जिन क्षेत्रों में इस्लाम का प्रचार- प्रसार हुआ, वहां कट्टरबाद को इस सीमा तक अपनाया गया कि उनमें रहने वाली मूल जातियाँ इस्लाम के प्रति घृणा करने लगी। भारत में हिन्दू, चीन, वर्मा, थाईलैण्ड आदि में बौद्ध, सर्विया, रूमानिया, बल्गारिया, अर्मीनिया, रूस आदि में स्लाविक जातियाँ इजरायल में यहूदी और यूरोप में ईसाई इस्लामिक कट्टरवाद से गत सैकड़ों वर्षो से पीड़ित रहे हैं।

मुसलमान भारत सहित हर देश में छोटी-छोटी बात पर 'इस्लाम खतरे में है' का नारा लगाते है, किन्तु वास्तविकता इसके विपरीत है। आज हर देश को 'इस्लाम से खतरा' है।

इस्लाम सत्य सनातन वैदिक धर्म की तरह नहीं है। यह आक्रमक साम्राज्यवाद की वह राजनैतिक विचार धारा है जिसका मुख्य उद्देश्य है समस्त गैर- मुस्लिम क्षेत्रों पर विजय और समस्त गैर मुस्लिमों का धर्मान्तरण। इस्लाम ने अल्लाह और मुहम्मद के

नाम पर गैर-विश्वासियों के साथ न केवल स्थायी युद्ध अपितु युद्ध में पराजित होने पर उनकी लूट, हत्या और गुलामी को कानूनी बना दिया है।[1] इस्लामी जिहाद में हत्या, लूट, लोगों को गुलाम बनाना, उनका अपहरण, स्त्रियों को रखैल वना कर रखना तथा पर पीड़न आदि को बिल्कुल उचित और पाक वतया जाता है एवं हर कीमत पर सत्ता ही प्रधान मान ली जाती है। पैगम्बर मुहम्मद की उक्ति है कि उन्हें अल्लाह ने यह आदेश दिया है कि इस्लाम में विश्वास न करने वालों के विरूद्ध वे तब तक लड़े जब तक वे इस्लाम स्वीकार न कर ले। तभी उनकी जान माल की रक्षा की गारण्टी की जा सकती है।

इस्लामिक प्रेम पूरी तरह मिथक है। गैर-मुस्लिम के प्रति घृणा इस्लाम की रीढ़ की हड्डी है। यह केवल यही नहीं कहता कि सभी गैर मुस्लिम नरक की यातना भोगेंगे, अपितु मुसलमानों और गैर-मुसलमानो में स्थायी तनाव उत्पन्न करता है। इस्लाम की अवधारणा मार्क्स के वर्ग-संघर्ष की अवधारणा से कहीं अधिक खतरनाक है। इस्लाम अरब को आसमान पर चढ़ा कर महिमा मण्डित किया गया है। इस कारण इस्लाम धर्म की शर्तें पूरी नहीं करता।[2]

धर्म का सम्बन्ध अन्तःकरण से होता है। यह प्राणी मात्र में सद्भाव उत्पन्न करता है। अतः किसी भी व्यक्ति पर अपनी उपासना पद्धति को थोपा जाना उचित नहीं है। इससे टकराव और कट्टरवाद उत्पन्न होता है जो अन्ततोगत्वा आतंकवाद में परिणित हो जाता है। स्वधर्म छोड़कर इस्लाम स्वीकार न करने के कारण जो हश्र गुरू तेग बहादुर और भाई मतिदास आदि जैसे उनके अनुयापियों का हुआ, इस्लाम स्वीकार न करने से जो अन्त वीर हकीकतराय जैसे बालक का हुआ तथा इस्लाम स्वीकार न करने के कारण जिस प्रकार जोराबरसिंह और फतेहसिंह को ईटों के द्वारा दीवार में चिनवा दिया गया, क्या ये कृत्य इस्लामिक कट्टरवाद और आतंकवाद के प्रतीक नहीं हैं ? छत्रपति शिवाजी के पुत्र शम्भा जी महाराज और वीर बन्दा वैरागी को जिस तरह कत्ल किया गया, क्या वह मजहबी आतंकवाद को प्रदर्शित नहीं करता ? क्या ऐसी आतंकवादी घटनायें सम्पूर्ण हिन्दू इतिहास में इस्लाम के अनुयायियों के साथ कभी की गई ?

इस्लाम न तो मुरतिद को सहन करता है और न मुनाफिक को। उन्हें मृत्युदण्ड

1. सीताराम गोयल, हीरोइक हिन्दू रजिस्टैन्स टू मुस्लिम इनवेडर्स, पृष्ठ 37
2. अनवर शेख, इस्लाम अरब राष्ट्रीय आन्दोलन, दैनिक जागरण, दि० 3.03.1995 में प्रकाशित लेख से

दिया जाना सुनिश्चित है। आज दुनिया के सभी मुस्लिम देशों में मिश्र सर्वाधिक प्रगतिशील है, किन्तु वहाँ भी यदि कोई इस्लाम छोड़कर ईसाईयत ग्रहण करता है, तो उसे मृत्युदण्ड दिया जाता है, जबकि यदि कोई ईसाई इस्लाम स्वीकार कर मुस्लिम बनता है, तो उसका स्वागत है।

विश्व के सभी देशों को एक ही शिकायत है कि उनके देशवासियों को या तो बलात् मुस्लिम बनाया गया है या फिर प्रलोभन से। सैकड़ों देशों में धर्मान्तरण दंगों का कारण बना है। इस्लाम के प्रवक्ताओं का कहना है कि तवलीग उनके मजहब का आवश्यक अंग है। अतः वे अपने मजहब के अनुयायियों की वृद्धि के लिये हर तरह के साधन अपनाते हैं। उनका विश्वास है कि कयामत के दिन, जब कि संसार समाप्त होना है, सभी लोग मुस्लिम हो जायेगें। इस्लाम के प्रचार और प्रसार के लिये इस्लाम योजनाबद्ध ढंग से पुरुषों की निम्न भावनाओं को उभारता है और इस्लाम के नाम पर किये गए कुकर्मों को पुण्य कर्म 'कारे सवाब' और जन्नत प्राप्ति का मार्ग बताता है। जन्नत ही नहीं, वरन जन्नत का भी जो रूप इस्लाम पेश करता है, वह भी उन भावनाओं और कामुकता को उभारने वाला है। वहाँ जाने वाले को भोग के लिए सुन्दर हूरें मिलती हैं और पीने को शराब।[3]

क्या कारण है कि कोई भी हिन्दू या चीनी, अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, रूस, जर्मनी या जापान में तो सहर्ष बस जाता है, किन्तु अरब, इराक, ईरान या पाकिस्तान में बसना नहीं चाहता ? क्या कारण है कि 1947 में लाखों की संख्या में हिन्दुओं ने पाकिस्तान स्थित अपने खेत-खलिहान तथा मकान-दुकानों को छोड़कर सिंध, पंजाब और बंगाल से हिन्दुस्तान में शरणार्थी के रूप में आना स्वीकार किया ? 1947 में हिन्दुस्तान आने वाले हिन्दू यदि पाकिस्तान में ही रहते तो क्या उन्हें वहाँ वे समान नागरिक अधिकार प्राप्त होते जो मुसलमानो को हिन्दुस्तान में प्राप्त हैं ? इन प्रश्नों के उत्तर में इस्लामिक कट्टरवाद को आसानी से जाना जा सकता है क्योंकि पाकिस्तान का निर्माण भी हिंसा और आतंक के बल पर हुआ। 1946 में अखण्ड भारत के प्रश्न पर निर्वाचन जीत कर जनता का समर्थन प्राप्त करने वाली कॉंग्रेस ने दंगों से भयभीत होकर पाकिस्तान के निर्माण की माँग स्वीकार की थी। पश्चिमी पाकिस्तान में हिन्दुओं की जनसंख्या 25 प्रतिशत थी जो इस समय घटकर डेढ़ प्रतिशत रह गई है। पाकिस्तान में हिन्दुओं की आबादी इस समय लगभग 15 लाख है। उन्हें नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं हैं तथा

3. बलराज मधोक, उपरोक्त, पृष्ठ 24-25

न्यायालयों में चार हिन्दुओं अथवा चार ईसाइयों की गवाही एक मुसलमान की गवाही के बराबर मानी जाती है।

पाकिस्तान में थोड़ी सी संख्या ईसाइयों की भी है। किन्तु इस्लामिक कट्टरबाद के कारण वे वहाँ स्वाभिमान से नहीं रह सकते। उन्हें तरह-तरह से उत्पीड़ित किया जाता है। 1992 में सलामत मसीह नामक 11 वर्षीय ईसाई लड़के के गॉव रट्टा धोतरा (लाहौर के निकट) की मस्जिद के एक मौलवी ने उसके विरूद्ध एक मुकद्मा दायर किया कि उसने अन्य दो ईसाई लड़के - रहमत मसीह और मन्जूर मसीह के साथ मस्जिद की दीवार पर पैगम्बर मुहम्मद की निन्दा में कुछ लिखा। सलामत की वकील सुश्री जहॉगीर का कहना था कि सलामत निरक्षर है तथा वह कुछ भी लिखने-पढ़ने में असमर्थ है। केस रहमत मसीह और मन्जूर मसीह के विरूद्ध भी दर्ज किया गया। मुकद्मे की कार्यवाही के समय इन तीनों अभियुक्तों पर मुस्लिम कट्टरपंथियों द्वारा गोली चलाई गई। इस गोली काण्ड में मन्जूर मारा गया और सलामत तथा रहमत घायल हो गये। मुकद्मे की सुनवाई के समय पाकिस्तान के कट्टरपंथी संगठनों ने खुलेआम धमकी दी कि यदि अभियुक्तों को फाँसी की सजा नहीं दी गई तो वे स्वयं उनकी हत्या कर देंगे। एमनेस्टी इन्टरनेशनल ने अपील की कि सलामत और रहमत को बिना शर्त रिहा किया जाय। किन्तु सत्र न्यायाधीश ने 1995 के प्रारम्भ में इन दोनों को फाँसी की सजा सुनाई जिससे ईसाई समुदाय के लोगों में आतंक और भय उत्पन्न हो गया।

सलामत की ओर से उच्च न्यायालय में अपील करने वाले वकील पर मुस्लिम कट्टरपंथियों ने हमला किया तथा उसकी कार तोड़ डाली। वे इन दोनों ईसाइयों के खून के इस तरह प्यासे थे कि उन्होंने लाहौर उच्च न्यायालय के समक्ष प्रदर्शन किये और उनकी मृत्यु की सजा बहाली के नारे लगाये। कट्टरपंथियों ने अमेरिका और ब्रिटेन के विरूद्ध भी नारे लगाये। तभी अप्रैल, 1995 में पाकिस्तान की प्रधानमंत्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो सरकार ने न्यायिक कार्यवाही को शीघ्र से शीघ्र कराकर तथा सबूत का अभाव दिखाकर उन्हें मुक्त करा दिया तथा कट्टरपंथियों द्वारा मारे जाने से बचाने के लिए उन्हें जर्मनी भेज दिया।

1994 में लाहौर उच्च न्यायालय ने गुल मसीह नामक एक ईसाई को मिले ऐसे ही मृत्यु दण्ड को रद्द कर दिया था किन्तु उसे मुस्लिम कट्टरपंथियों द्वारा जान से मारने की धमकियों के कारण पाकिस्तान छोड़ कर भागना पड़ा।

फरवरी, 1995 में अनवर मसीह नामक एक ईसाई को भी इस्लाम और पैगम्बर

मुहम्मद की आलोचना करने के आरोप में गिरफ्तार किया गया क्योंकि उसने कहा था, "मुसलमान बेशर्म हैं तथा उनका पैगम्बर मृत है जबकि हमारा पैगम्बर आकाश में जीवित है।"[4]

पाकिस्तान में ईसाई-विरोधी वातावरण इस सीमा तक पहुँच गया है कि 7 मार्च, 1995 को अमेरिकी वाणिज्य दूतावास के दो अधिकारियों को भीड़ भरी सड़क पर मुस्लिम कट्टरपंथियों ने मार गिराया तथा एक अन्य कर्मचारी को गम्भीर रूप से घायल कर दिया। इस घटना को अमेरिकी सरकार ने बहुत गम्भीरता से लिया तथा हत्यारों को पकड़ने के लिये 60 अमेरिकी गुप्तचरों का एक दल पाकिस्तान भेजा। अमेरिका के भय से पाकिस्तान ने यह सब कुछ सहन कर लिया।

विडम्बना तो यह है कि पाकिस्तान में गैर मुस्लिमों के साथ साथ गैर- सुन्नी मुसलमानों का जीना भी दूभर हो गया है। सुन्नी बहुल देश होने के कारण पाकिस्तान में शिया और अहमदी मताबलम्बियों की स्थिति अत्यन्त सोचनीय है। पाकिस्तान में शियाओं का विरोध इस सीमा तक हो गया है कि 1994 में उनकी 12 से अधिक मस्जिदों और इमामवाड़ों पर ग्रेनेडों और क्लाशिनकोव रायफलों से सुन्नी कट्टरपंथियों ने हमले किये। इन हमलों में नमाज पढ़ते हुऐ सैकड़ों शिया मारे गये। ईद का उत्सव भी वे चैन से नहीं मना सके। पाक मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट के अनुसार वहाँ हर एक दिन के अन्तर से किसी न किसी तरह का अन्तईस्लामी साम्प्रदायिक हमला हो रहा है, जिसमें औसतन एक व्यक्ति प्रतिदिन घायल हो रहा है और हर पाँचवे दिन एक की मृत्यु हो रही है। पाकिस्तान सरकार विभिन्न इस्लामिक पंथों के प्रति भी तटस्थता का भाव नहीं अपना रही है। सुन्नी सत्ता पर हावी है, अतः शियाओं की कोई सुनने वाला नहीं है। मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट में ही कहा गया है कि शियाओं को सरकार की भूमिका के प्रति गहरा सन्देह है। शियाओं की शिकायत है कि पाकिस्तान सरकार सुन्नियों द्वारा किये जा रहे हमलों की समर्थक रही है।[5] 1995 वर्ष के प्रारम्भ में कराँची में एक शिया महिला के सामने सुन्नी मुसलमानों ने उसके चार जवान पुत्रों को गोली से उड़ा दिया।

पाकिस्तान में अहमदियों को गैर-मुस्लिम घोषित कर दिया गया है। 10 अप्रैल 1995 को पेशावर के निकट शब्वदार कस्बे में सार्वजनिक रूप से पत्थरों से मार मार

4. दी हिन्दुस्तान टाइम्स, दि० 27.02.1995 में प्रकाशित
5. अमर उजाला, सम्पादीय दि० 28.02.1995

कर मार दिया क्योंकि वह दौलत खाँ नामक एक व्यक्ति को अहमदिया मत में दीक्षित कर रहा था।

एक अन्य घटना से पाकिस्तान में निहित इस्लामिक आतंकवाद को समझा जा सकता है। घटना अप्रैल 1994 की है। पाकिस्तान के गुजरांवाला जिले में हाफिज सद्दाज तारिक नामक एक मुसलमान से गलती से कुरान पर आग गिर गई जिससे वह थोड़ी सी जल गई। जैसे ही इस घटना की जानकारी अन्य मुसलमानों को हुई, वे आपे से बाहर हो गये। स्थानीय मुल्ला ने सद्दाज तारिक के विरूद्ध तत्काल मृत्यु का फतवा जारी कर दिया जिससे मुसलमानों की भीड़ उस पर बाज की तरह टूट पड़ी। एक पुलिस इन्सपैक्टर ने उसे बचा कर थाने में बन्द कर दिया। किन्तु भीड़ इतनी अधिक हो गई कि उसके उन्माद के दबाब में पुलिस इन्सपैक्टर को सद्दाज को थाने से बाहर निकालना पड़ा जिससे कट्टरपंथियों ने उसे पत्थरों से मार मार कर जान से मार दिया। बाद में उसकी लाश को एक मोटर साईकिल से बांध कर दो घंटे तक सड़क पर घसीटा गया।

पाकिस्तान कट्टरवाद और आतंकवाद का निर्यातक देश है। मुस्लिम इस्लामिक कट्टरपंथियों का मनोबल बढ़ने का कारण यह भी है कि पाकिस्तान में अन्य धर्मों, उनके देवताओं अथवा उनके धर्मग्रन्थों के विरुद्ध कुछ भी किया या कहा जा सकता है, किन्तु इस्लाम अथवा उसके पैगम्बर के विरुद्ध जबान खोलना मृत्यु को निमन्त्रण देना है। कोई भी मजहब जो दूसरे धर्मो के प्रति असहिष्णु रहेगा, उसके लिए अपने अन्दर के पंथों के मध्य सहिष्णुता स्थापित करना असम्भव है। इसलिए भारत सहित दूसरे देशों में आतंकवाद फैलाने वाला पाकिस्तान स्वयं इस्लामिक आतंकवाद से बच नहीं सका। कराची में आये दिन मुसलमानों द्वारा मुसलमानों की हत्या इसी का परिणाम है। पाकिस्तान के सिंध प्रान्त में हिन्दुस्तान से गये मुसलमानों ने 'मुहाजिर कौमी एकता' संगठन बना लिया है तथा कराची में सिंधी मुहाजिर दंगे लगातार हो रहे हैं।

पाकिस्तान की तरह बांग्लादेश भी मुस्लिम उग्रवाद से ग्रसित है। 1971 में बंगला देश के निर्माण के समय वहाँ के प्रथम राष्ट्रपति शेख मुजीबुर्रहमान ने भारत के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुये इसे पंथ-निरपेक्ष देश घोषित किया, किन्तु मुसलमानों ने पंथ निरपेक्षता को सहन नहीं किया। कट्टरपंथियों ने एक दिन राष्ट्रपति भवन में प्रवेश कर उन्हें गोली से उड़ा दिया। साथ ही बांग्लादेश को इस्लामिक राष्ट्र घोषित कर दिया गया। बांग्लादेश में मुस्लिम कट्टरपंथी उन लेखकों और कवियों को अपने हमले का निशाना बनाते रहे हैं, जो उनकी दृष्टि में इस्लाम से भटक गये हैं। 1973 में युवा लेखक दाउद

हैदर को निर्वासन का जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य होना पड़ा क्योंकि उस पर इस्लाम की निन्दा करने वाली कविता लिखने का आरोप लगाया । मुस्लिम कट्टरपंथियों ने हैदर के विरूद्ध प्रदर्शन किये। सरकार ने उसे कारावास में रखकर कट्टरपंथियो के हमलो से बचाया। विस्फोटक स्थिति को देखते हुये बाद में उसे हिन्दुस्तान भेज दिया गया। आजकल वह जर्मनी में निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहा है।

बंग्लादेश की ३२ वर्षीय लेखिका डा० तस्लीमा नसरीन को कट्टर पंथियों ने विश्व ख्याति प्रदान करा दी है। उन्होनें अपने उपन्यास 'लज्जा' में अपने देश में हिन्दुओं के साथ हो रहे अत्याचारों को प्रदर्शित किया है तथा उनके दुखद उत्पीड़न को गहरी संवेदना के साथ लिखा है। तस्लीमा का जीवन बांग्लादेश में अब सुरक्षित नही है। कट्टरपंथी मुस्लिम उनकी जान के पीछे पड़ गये हैं। उनकी हत्या करने का फतवा दिया जा चुका है। उनका दोष यह है कि वे कुरान में निहित स्त्री शोषण की विरोधी हैं तथा उसमें संशोधन किये जाने की समर्थक हैं। उनका कहना है कि कुरान का जो नैतिकता का ढाँचा है, उसमें औरत को न्याय कभी भी नहीं मिल सकता। इसलिये उसके पुनर्लेखन की आवश्यकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन के बाबजूद भी डॉ० तस्लीमा नसरीन अब बांग्लादेश ही क्या अन्य किसी भी मुस्लिम देश में स्वतन्त्र रूप से जीवित नहीं रह सकतीं। बांगला देश की सरकार क ट्टरपंथियों के सामने झुक गई है। तस्लीमा की तरह बांग्लादेश के कट्टरपंथियों की हिट लिस्ट में एक और महत्वपूर्ण महिला है। वे हैं प्रधानमंत्री खालिदा जिया की सत्तारूढ़ पार्टी की सांसद फरीदा रहमान। उनका दोष यह है कि उन्होंने माँग की है पिता की सम्पत्ति में पुत्रियों को पुत्र के बराबर ही भाग मिलना चाहिए। 15 मार्च, 1995 को फरीदा रहमान ने इस्लामिक उत्तराधिकार कानून में परिवर्तन किये जाने की माँग की है। फरीदा के इतना कहने मात्र से कट्टरपंथियों ने उनके विरूद्ध आबाज बुलन्द कर दी है। उन्हें मुरतिद की संज्ञा दी गई है। अब तस्लीमा की तरह फरीदा का भी सिर काटने की तैयारियाँ प्रारम्भ हो गई हैं क्योंकि उन्होंने भी तस्लीमा की तरह कुरान में संशोधन किये जाने की माँग की है।[6]

बांग्लादेश में शमसुर रहमान नामक एक प्रख्यात कवि के विरूद्ध भी कट्टरपंथियों ने आन्दोलन छेड़ कर उन्हें 'नास्तिक' जैसी संज्ञा दी है क्योंकि उन पर आरोप यह है कि उन्होंने अपनी एक कविता में अजान की आवाज के विषय में एक आपत्तिजनक

6. मुजफ्फर हुसैन, इस्लामी कट्टरपंथ की शिकार महिलाएं, अमर उजाला, दि० 16.05.1995

टिप्पणी की है। कट्टरपंथियों ने सिलहट में उनके विरूद्ध एक सशस्त्र जलूस भी निकाला है।[7]

पाकिस्तान और बंग्लादेश में मुस्लिम कट्टरपंथी महिलाओं का भी भिन्न–भिन्न तरह से उत्पीड़न कर रहे हैं। वे फतवा देकर चाहे जिसे पत्थरों से मरवा दें और चाहे जिस पर कोड़े बरसाने लगे। बंग्लादेश में 250 और पाकिस्तान में औसतन 188 महिलाएं इस प्रकार के अमानवीय दण्ड की हर वर्ष शिकार होती हैं। इस्लामी कट्टरवादी तलाक देकर उनका भरण-पोषण करने से इंकार करके और उन तलाकशुदा महिलाओं के छोटे बच्चों को अनाथ बनाकर ही नहीं रुक जाते, अपितु उनको हर प्रकार के शारीरिक और मानसिक दण्ड देकर ही अपने आपको साहसी और वीर पुरूष सिद्ध करने में अपना पराक्रम मानते हैं।[8]

विश्व के एक मात्र हिन्दू नेपाल में भी मुस्लिम कट्टरपंथियों की गतिविधियों दिनों -दिन बढ़ रही हैं। यहां मुसलमानों की जनसंख्या कुल 4 प्रतिशत है। 1958 में नेपाल में पाकिस्तान के सहयोग से 'अखिल नेपाल अन्जुमन-ए-इस्लाह' नामक एक मुस्लिम संस्था स्थापित की गई है जिसका उद्देश्य नेपाल के मुसलमानों को संगठित करना तथा हिन्दुस्तान के विरूद्ध दिन रात जहर उगलना है। इस्लाह के भारत-विरोधी गतिविधियों में लिप्त शराब के व्यापारी मकबूल अहमद लारी (लखनऊ) और कुख्यात तश्कर दाउद इब्राहीम (आजमगढ़) से गहरे सम्बन्ध है।

भारत भी इस्लामिक आतंकवाद से कोई कम पीड़ित नहीं है। मुहम्मद–बिन–कासिम, महमूद गजनवी, मुहम्मद गौरी, तैमूर लंग, बाबर, नादिर शाह, अहमदशाह अब्बाली आदि के आक्रमणों से भारत में जो आतंक मचा, उसकी स्मृति रोंगटे खड़ा करने वाली है। इन आक्रांन्ताओं और इनके सहधर्मियों ने भारतीय कला, साहित्य, संस्कृति और धर्म को समूल रुप से नष्ट करने के प्रयास किये। भारतीय समाज में आज जिन गन्दी गन्दी गालियों का प्रचलन है, वे सब इस्लाम की ही देन है।

1947 में भारत के मजहब के आधार पर विभाजन के पश्चात् हिन्दुस्तान में मुस्लिम समस्या पुनः उठ खड़ी हुई है। विभिन्न राजनैतिक दलों और उनके नेताओं द्वारा मुस्लिम तुष्टीकरण इस सीमा तक किया जा रहा है कि भारतीय मुसलमानों का एक बड़ा वर्ग कट्टरपंथी होता जा रहा है। हिन्दुस्तान में पाकिस्तान की गुप्तचर संख्या आई०एस०

---

7. दैनिक जागरण, दि० 26.04.1995
8. मुजफ्फर हुसैन, उपरोक्त लेख, अमर उजाला, दि० 16.05.1995

आई० का जाल बिछा हुआ है। बम्बई, कलकत्ता,मद्रास आदि स्थानों पर मुस्लिम आतंकवादियों द्वारा किये गये बम काण्डो से सम्पूर्ण देश हिल चुका है। कश्मीर घाटी की स्थिति मुस्लिम आतंकवादियों ने अत्यन्त शोचनीय कर दी है। लगभग साढ़े चार लाख कश्मीरी हिन्दू 1989 से इस्लामिक आतंकवादियों के भय से जम्मू, दिल्ली आदि में शरणार्थी शिविरों में पड़ा हुआ है।

हजरत बल दरगाह की तरह चरार-ए- शरीफ दरगाह को विदेशी भाड़े के अफगान और पाकिस्तानी आतंकवादियों ने लगभग दो माह से अधिक अपने नियन्त्रण में रखा। चरार-ए-शरीफ में हिज्बुल मुजाहिदीन, हरकत-उल अंसार, अल फतह, अलजेहाद, हिज्बुल मुसलमीन, इखवान- उल- हक जैसे देढ़ दर्जन आतंकवादी गुटों के लगभग 400 आतंकवादी छिपे हुऐ थे। दरगाह और आस-पास के ठिकानों में इनके पास पर्याप्त खाद्यान्न, रुपये ,हथियार और अत्याधुनिक संचार उपकरण थे। सेवा और और सुरक्षा बलों के अतिरिक्त जम्मू- कश्मीर पुलिस के विशेष कार्यवाही दस्ते, काउन्टर इन्टैलीजैन्स, रॉ, आई.बी. तथा अन्य सुरक्षा एजेसियों के लिऐ आतंकवादियों का बढ़ता जमावड़ा एक कठिन समस्या बन गया। 8 मई, 1995 को चरारे शरीफ कस्बे में आतंकवादियों ने आग लगा कर लगभग 300 मकानों को जला दिया। बाद में कुख्यात अफगान आतंकवादी मस्त गुल ने चरारे शरीफ में 11 मई, 1995 को ईदुल जुहा के दिन प्रातः काल आग लगा दी। इस दिन 32 उग्रवादी और 10 सुरक्षाकर्मी संघर्ष में मारे गये। अबू जिंदल नामक आतंकवादी को गिरफ्तार कर लिया गया। किन्तु मस्तगुल गिरफ्तार नहीं किया जा सका। उसने मार्च, 1995 में पत्रकारों से बातचीत में कहा था कि “मस्त गुल न तो रूसी फौजियों के हाथ में पड़ा था और न ही हिन्दुस्तानी फौजियों के हाथ पड़ेगा।”

चरार-ए-शरीफ में ईदुल जुहा के ही दिन आग जानबूझ कर लगाई गई ताकि भारत सहित सम्पूर्ण विश्व के मुसलमान भारत सरकार और भारतीय जनता के विरूद्ध जिहाद प्रारम्भ कर सके। आग में घी डालने के लिए पाकिस्तान, कश्मीरी आतंकवादियों और दिल्ली जामा मस्जिद के इमाम बुखारी ने एक स्वर में यह भी कहना प्रारम्भ किया कि चरार-ए- शरीफ में भारतीय सेना ने ही आग लगाई है। भारत सरकार द्वारा चरार-ए-शरीफ और जले मकानों के पुनर्निमाण के लिए 15 करोड़ रूपये दिये गए। फिर भी कश्मीर घाटी में भारत के विरूद्ध अनेक प्रदर्शन निकाले गए। इन प्रदर्शनों में खुल कर'पाकिस्तान जिन्दाबाद' के नारे लगाऐ गए। कई स्थानों पर घाटी में मंदिरों को जला

दिया गया।

इस्लामी आतंकवादियों की दृष्टि में हिन्दुस्तान उनका शत्रु है। इसीलिये वे भारतीय कानून और व्यवस्था को नष्ट-भ्रष्ट करने में सक्रिय है। पाकिस्तान में इस्लामी आतंकवादियों के लिये प्रशिक्षण केन्द्र चलाये जा रहे है। कश्मीर के आतंकवादियों को भी पाकिस्तान में प्रशिक्षित किया जा रहा है। पाकिस्तान के माध्यम से ही अन्य इस्लामी राष्ट्रों के आतंकवादी कश्मीर में सक्रिय है। वह भारत में निरन्तर घुसपैठिये भेज रहा है। इस समय भारत में हजारों आतंकवादी घुसपैठिये सक्रिय है। इन्हें मजहब के नाम पर अनेक भारतीय मुसलमानों का समर्थन और संरक्षण प्राप्त हो रहा है। इन आतंकवादियों का सम्बन्ध उन तस्करों से भी है, जो अवैध रूप से अरबों रूपये की सामग्री हिन्दुस्तान लाकर यहां की अर्थव्यवस्था को नष्ट करने में लगे हुये है। ये तस्कर सभी मुस्लिम है। इन्होंने भारतीय अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में आतंक मचाया हुआ है। हाजी मस्तान,यूसुफ पटेल, दाउद इब्राहीम, याकूव मेनन आदि भारतीय अर्थव्यवस्था के लिये घातक सिद्ध हो चुके हैं।

इस्लामी आतंकवादी मजहब की आड़ लेकर जिस तरह के फतवे देते है, वे मानवता विरोधी है। मानवता विरोधी ये फतवे भारत में भी जारी किये गये हैं और छोटी-छोटी बातों पर जारी किये गये है। यदि भारत सरकार इन फतवों को सार्वजनिक रूप से उजागर कर दे तो देश में तूफान खड़ा हो सकता है।

पाकिस्तानियों और हिन्दुस्तान के अनेक मुसलमानों के मस्तिष्क में यह विचार प्रायः घूमता रहता है कि उन्होंने हिन्दुस्तान पर लगभग 600 वर्ष शासन किया है। किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि शासन उन्होंने नहीं किया। वे तो अधिसंख्य हिन्दुओं की ही धर्मपरिवर्तित सन्तानें है। हिन्दुस्तान में शासन करने वाले तो अरब,तुर्क,अफगान और मुगल आक्रान्ता थे।

पाकिस्तान में 1947 में स्थान-स्थान पर 'हँस कर लिया पाकिस्तान, लड़ कर लेगें हिन्दुस्तान' नारा लगा था। इसी भावना के तहत पाकिस्तान ने 1947, 1965,1971 और 1999 में हिन्दुस्तान से युद्ध किये जिसमें वह अपने नापाक इरादों में सफल न हो सका। पाकिस्तान जानता है कि वह हिन्दुस्तान से सीधे युद्ध लड़कर कदापि नहीं जीत सकता। अतः जिस प्रकार मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज चौहान को धोखे से पराजित किया, पाकिस्तान भी छल, आतंक, और धोखे से हिन्दुस्तान को पराजित करना चाहता है। भारत में इस्लामी आतंकवाद पाकिस्तान की इसी मानसिकता का परिणाम है।

हिन्दुस्तान में प्रगतिशील और उदारवादी मुसलमान भी कट्टरपंथियों के कोपभाजन हो रहे हैं। एक उर्दू शायर मुहम्मद अल्वी का दारूल उलूम शाह-ए-आलम नामक संस्था ने सामाजिक बहिष्कार का आदेश पारित कर दिया है क्योंकि उन्होंने 17 वर्ष पूर्व लिखी एक कविता, जिसे अन्य कविताओं के साथ संग्रहित होने पर साहित्य एकेडेमी पुरुष्कार भी गत वर्ष दिया गया, में अल्लाह को इस प्रकार सम्बोधित किया : ''मालिक, यदि तुम स्वयं आने के लिये समय नहीं निकाल सकते हो, तो कम से कम, हमको एक अच्छा- सा पैगम्बर तो भेज दो। "उलेमाओं के अनुसार ये पंक्तियाँ कुरान के उस मत के विपरीत हैं जिसमें मुहम्मद साहब को अल्लाह का अन्तिम पैगम्बर माना है तथा उनके बाद अब किसी भी पैगम्बर के न आने का सन्देश है। मजहबी नेताओं के अनुसार अल्वी से इस्लाम के प्रति गलती हुई है, अतः उसे मजहब में पूर्ण रूप से पुनः दीक्षित होना चाहिये जिसमें उसे अपनी पत्नी से पुनः विवाह करना और सार्वजनिक रूप से अपनी गलती स्वीकार करना सम्मिलित है। यह अत्यन्त दुख की बात है कि भारत जैसे देश, जो कि संविधान द्वारा पंथ निरपेक्षता के लिये प्रतिवद्ध है, में ऐसी मध्यकालीन माँगों को प्रस्तुत किया गया है। [9]

आज अफगानिस्तान भी इस्लामिक आतंकवाद से कोई कम पीड़ित नहीं है। वहां मुजाहिदीन गुट सत्ता-संघर्ष के लिये लड़ रहे हैं और सारा काबुल बीरान सा हो गया है। अफगानिस्तान में 20 वर्षों से युद्ध और गृहं-युद्ध चल रहा है। इसमें हजारों महिलायें विधवा हो चुकी है तथा लाखों बच्चे अनाथ हो चुके है। किन्तु फिर भी इस्लाम के नाम पर आतंकबाद चलाने वालों का क्रूर हृदय पसीजा नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामिक आतंकवादी ओसामा बिन लादेन को यहाँ के तालिबान शासकों ने अपने यहाँ शरण दे रखी है। जिसने 'अल कायदा' नामक अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामिक आतंकवादी संगठन को बनाकर अमेरिका, इजराइल, रूस और भारत को नष्ट करने की चेतावनी दी है।

पूर्व सोवियत संघ से विघटित छोटा सा गणतन्त्र ताजिकिस्तान भी इस्लामिक आतंकवाद से परेशान है। इसमें इस्लामिक कट्टरपंथी वहाँ की सरकार को उखाड़ने में प्रयत्नशील हैं। अन्य इस्लामिक गणतन्त्रों में भी कट्टरवाद शनैःशनै बढ़ रहा है। रूस भी इस्लामिक कट्टरवाद का शिकार बना हुआ है। चेचन्याई आतंकवादी उसके लिये सिरदर्द बने हुये हैं।

पाकिस्तान की तरह ईरान भी इस्लामिक आतंकवाद का निर्यातक देश रहा है।

9. टाइम्स आफ इण्डिया, सम्पादकीय, दि० 25.05.1995

फिलीस्तीनी आतंकवादी संगठन हमास और लेबनान के शिया आतंकवादी गुटों को ईरान का पूरा समर्थन प्राप्त है। किन्तु अब ईरान स्वयं भी आतंकवाद से पीड़ित हो गया है। ईरान में मुजाहिदीन खल्क नामक आतंकवादी दल की गतिविधियाँ बढ़ रही हैं। मशाद की इमाम रजा मस्जिद में हुये बम-विस्फोट में इसी संगठन का हाथ रहा है। इस बम विस्फोट में एक सौ से अधिक व्यक्ति मारे गये थे। गत दो-तीन वर्षों में इस संगठन ने हजारों निर्दोष ईरानियों की हत्या कर दी हैं। ईरान सरकार के अनुसार वहाँ के पूर्व राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री, मंत्रियों,मुख्य न्यायाधीश और कई सांसदों की हत्या के लिए मुजाहिदीन खल्क उत्तरदायी है। इस संगठन द्वारा अयतुल्ला खुमैनी की हत्या करने का प्रयास किया गया, जिससे उसका एक हाथ बेकार हो गया। राष्ट्रपति रफसंजानी को भी गोली का निशाना बनाने की कोशिश की गई। मुजाहिदीन खल्क द्वारा आतंकवादी कार्यों के लिये स्त्रियों की भी सेवा ली जाती है।

इस्लामिक आतंकवादी गुट किसी भी प्रगतिशील आधुनिक विचारों वाली मुस्लिम सरकार को सहन नहीं कर पा रहे हैं। मिश्र, ट्यूनीशिया और अल्जीरिया में इस्लामिक आतंकवादी गुट वहाँ की मुस्लिम सरकारों के विरूद्ध हैं क्योंकि उनकी दृष्टि में ये सरकारें शरीयत के अनुसार पूर्ण रूपेण नहीं चल रहीं ।

अल्जीरिया के निर्वाचनों में इस्लामी मुक्ति मोर्चा की विजय के पश्चात सेना ने जनवरी 1992 में निर्वाचनों को रद्द करके देश में सैनिक शासन लागू कर दिया था। उसके बाद इस्लामी मुक्ति मोर्चा ने हथियार उठा लिये। लगभग 3 वर्ष में अल्जीरिया में 20 हजार लोग मारे जा चुके हैं। अल्जीरियों के इस्लामिक कट्टरपंथी गुट 'आर्मड इस्लामिक ग्रुप' ने सरकार और सेना में कार्यरत सभी की माँ, बहिन और पत्नियों को कत्ल करने की धमकी दी है क्योंकि उनकी दृष्टि में सरकार और सेना सैक्यूलर विचारों की है। इस कट्टरपंथी गुट का कहना है कि महिलाओं को अल्लाह ने केवल बच्चे उत्पन्न करने हेतु पैदा किया है। उन्हें किसी गैर-मुस्लिम अथवा सैक्यूलर विचारों वाले से विवाह करने की सजा मृत्यु है तथा बुर्का न पहनने वाली महिलाओं को जीने का अधिकार नहीं है। अल्जीरिया के आर्थिक विकास में भागीदार कई फ्राँसीसियों की वहां हत्याकर दी गई है तथ गैर-मुस्लिमों को अविलम्ब अल्जीरिया छोड़ने अन्यथा उनकी हत्या करने की धमकी दी गई है।

इजरायल अपनी स्थापना के समय से ही इस्लामिक आतंकवाद से लगातार पीड़ित रहा है। इसके प्रधानमन्त्री राबिन ने 1992 में अपने देश से 415 मुस्लिम उग्रवादियों

के निष्कासन को उचित ठहराते हुये कहा था कि उनका देश इस्लामिक आतंकवादियों की हिट लिस्ट में सर्वप्रथम स्थान पर है। इस्लाम के गत 1400 वर्ष के इतिहास की यदि समीक्षा की जाये तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि यहुदियों को सर्वाधिक पीड़ा इस्लाम ने ही पहुँचाई है। तभी तो मानव-बम विस्फोट में तीन यहूदी अधिकारियों के मारे जाने के पश्चात् एक हमास छापामार ने बड़े गर्व से कहा, "हम जिहाद की सन्तान हैं। विस्फोट से यहूदी खोपड़ियों को फाड़कर हम उनको रोंदते हुये स्वर्ग जाते हैं।"[10]

सऊदी अरब, कुवैत और जोर्डन इस्लामिक देश होते हुये भी आन्तरिक इस्लामिक आतंकवादी गुटों से परेशान हैं। इसी प्रकार कुर्द राष्ट्रीयता से टर्की,सीरिया और ईरान की सरकारों की नींद हराम है। सऊदी अरब, मिश्र, ईरान, कुवैत, अल्जीरिया आदि इस्लामी देश अपने देश में पनप रहे विघटनकारी इस्लामिक आतंकवादियों को कुचलने के लगातार प्रयास कर रहे है, किन्तु वे इसकी सार्वजनिक घोषणा नहीं करते क्योंकि इससे उन्हें इस्लाम की छवि बिगड़ने का डर भी लगता है। किन्तु इस तरह की आतंकवादी घटनायें जिस तेजी से बढ़ रही हैं, उसे देखते हुये उन्हें छिपाना अब बहुत सम्भव नहीं रह गया है। इस लिये उनकी जानकारी शेष विश्व को मिलने लगी है।

इस्लामिक कट्टरवादी भूमध्य सागर को पार कर यूरोप में भी अपने पैर पसारने लगे है। इससे फ्राँस और जर्मनी बहुत चिन्तित हैं। ये यूरोपीय देश अब अपने यहाँ उन इस्लामिक कट्टरपंथी संगठनों के प्रचार पर रोक लगाने की तैयारी कर रहे हैं, जो हिंसा का प्रचार करते हैं। यूरोपीय देश इस बात से चिन्तित है कि यदि अल्जीरिया में मारकाट जारी रहती है तो यह आग यूरोप में भी फैलेगी, क्योंकि जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड आदि सभी देशों में मुसलमानों की संख्या कई-कई लाख है।

यदि विश्व परिपेक्ष्य में इस्लामिक आतंकवाद का निष्पक्ष रूप से अध्ययन किया जाये तो ज्ञात होगा कि इसका मुख्य उद्देश्य है, इजरायल को नष्ट करना तथा अमेरिका रूस और भारत को कमजोर करना। अमेरिका की राष्ट्रीय सुरक्षा को चुनौती देने के लिये ही 1993 में इस्लामिक आतंकवादियों द्वारा न्यूयार्क के विश्व व्यापार केन्द्र में बम विस्फोट किया गया था। यह भी सुनिश्चित है कि इस बम काण्ड के मुख्य अभियुक्त ने आतंकवाद का प्रशिक्षण पाकिस्तान में लिया था।

अमेरिका में इस्लामिक आतंकवाद की व्यक्तिगत घटनायें भी हो रही हैं। अमेरिकी

10. अमर उजाला, दि० 29.12.1994 में प्रकाशित 'इस्लामी आतंकवाद से पीड़ित इस्लामी देश' लेख से

संघीय जाँच ब्यूरो के अधिकारियों के अनुसार कुछ दिन पूर्व एरीजोना राज्य में इमाम रशीद खलीफा की हत्या मुस्लिम आतंकवादियों द्वारा इसलिये कर दी गई क्योंकि इमाम रशीद खलीफा यह कहा करते थे कि कुरान अल्लाह ने लिखकर नहीं भेजी, अपितु मनुष्य ने लिखी है। खलीफा की हत्या के लिये एक वाक्य का जो फतवा जारी किया गया, उसमें कहा गया कि इमाम रशीद खलीफा की हत्या छुरा भोंककर या किसी ऐसे ही अन्य तरीके से इस प्रकार की जानी चाहिये कि पुलिस को कुछ भी पता न लग सके।[11]

कुछ राजनैतिक विचारक इसे विडम्बना ही मानते हैं कि अमेरिका ने 1990-91 के युद्ध में इराक के विरूद्ध सऊदी अरब की सहायता की क्योंकि सऊदी अरब विश्व में सबसे अधिक कट्टरपंथी इस्लामिक देश है। इसमें न तो लोकतन्त्र है और न ही मानवाधिकार। साथ ही गैर-मुस्लिमों को राजनैतिक अधिकार तक नहीं हैं। इसमें कोई भी गैर–मुस्लिम पढ़ने के लिये अपनी धार्मिक पुस्तक नहीं ले जा सकता। यहाँ तक कि इराक के विरुद्ध युद्ध के समय अमेरिकन सैनिक इसमें 'बाईबिल' तक नहीं ले जा सकते थे। सऊदी अरब स्थित भारतीय दूतावास के एक कर्मचारी एवं हरियाणा निवासी रामकुमार भारद्वाज को सऊदी अरब सरकार ने इसलिये दण्डित कर छः माह का कारावास दिया क्योंकि उन पर 'सत्यार्थ प्रकाश' और 'भागवद्गीता' पाई गयी। सऊदी अरब में यदि किसी हिन्दू की मृत्यु हो जाती है तो मृतक के शरीर की अंत्येष्टि नहीं की जा सकती। या तो उसे गाड़ना होगा या उसे हिन्दुस्तान लाकर जलाना होगा अथवा उसे समुद्र में फेंकना होगा।

सऊदी अरब हमास जैसे अति अग्रवादी इस्लामिक संगठन सहित विश्वव्यापी उग्रवादी मुस्लिम संगठनों की आर्थिक सहायता बराबर कर रहा है।

यह कहना अनुचित न होगा कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् सबसे अधिक युद्ध, गृह-युद्ध और सैनिक क्रान्तियाँ इस्लामिक देशों में ही हुई हैं। इस्लामिक कट्टरवाद प्रायः प्रत्येक मुस्लिम देश और उन गैर-मुस्लिम देशों में भी बढ़ रहा है जिनमें मुसलमानों की जनसंख्या अच्छे अनुपात में है। किन्तु यह सत्य है कि गैर-मुस्लिमों के सामने इस्लाम सर्वत्र बचाव पर है। इस्लामिक कट्टरवाद ने गैर-मुस्लिम कट्टरवाद को भी जागृत किया है क्योंकि न्यूटन के सिद्धान्त के अनुसार क्रिया की समान और विपरीत प्रतिक्रिया भी होती है। बोस्निया में सर्व राष्ट्रवादियों, चेचन्या में रुसियों, इजरायल में यहूदियों,

11. अमर उजाला दि० 5.01.1995

बर्मा में बौद्धों तथा हिन्दुस्तान में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, बजरंग दल और शिवसेना द्वारा इस्लाम बचाव पर है। फ्रांस और जर्मनी भी मुस्लिम घुसपैठियों को अपने देश से कड़ाई से निकाल रहे है।

हावर्ड विश्वविद्यालय, अमेरिका के ख्याति प्राप्त प्रोफेसर सैम्यूअल पी० हटिंगटन के अनुसार भविष्य में मानवता का विभाजन और संघर्ष का मुख्य कारण राजनैतिक अथवा आर्थिक न होकर सांस्कृतिक होगा। 1917 में रूसी क्रान्ति के पश्चात विश्व के प्रमुख अन्तर्विरोधों की व्याख्या मार्क्सवादी दृष्टिकोण से की जाने लगी थी। 1990 तक विश्व के प्रमुख अन्तर्विरोध को समाजवादी राष्ट्रों बनाम साम्राज्यवादी पूँजीवादी पश्चिमी राष्ट्रों के मध्य माना जाता रहा, किन्तु सोवियत संघ और पूर्वी यूरोपीय समाजवादी राष्ट्रों के विश्व परिदृश्य से ओझल हो जाने के पश्चात पश्चिमी देशों को अब इस्लामिक कट्टरवाद से खतरा है। शीतयुद्ध काल के लाल खतरे की भाँति हरा खतरा भी सारे विश्व में कैंसर की भाँति फैल रहा है। इस्लाम को अब पश्चिम का नया शत्रु माना जाने लगा है।[12]

यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि इस्लाम का यहूदी और ईसाई मतों के साथ इसके जन्मकाल से ही कड़ा अन्तर्विरोध रहा है। इस्लाम ने विश्व प्रसिद्ध रोमन साम्राज्य को नष्ट करके ही अपना विशाल साम्राज्य निर्मित किया जिसका विस्तार अफ्रीका से होते हुये स्पेन तक जा पहुँचा। 1990-91 में खाड़ी युद्ध में इराक ने कुवैत पर आक्रमण कर जब उसे हड़पना चाहा तो उसे कुवैत और सऊदी अरब के साथ-साथ पश्चिमी देशों से भी युद्ध करना पड़ा। इस युद्ध में विश्व भर के उग्रवादी और आतंकवादी मुस्लिम संगठनों ने पश्चिम से समर्पित सऊदी अरब और कुवैत के स्थान पर इराक का समर्थन किया। इस युद्ध के समय इराक का राष्ट्राध्यक्ष सद्दाम हुसैन विश्व के कट्टरपंथी मुसलमानों का नायक बन गया। हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने भी सद्दाम हुसैन के चित्रों को अपने मकानों और दूकानों पर बढ़-चढ़ कर लगाया। खाड़ी युद्ध को मुस्लिम बुद्धिजीवियों ने इस्लाम से पश्चिम का युद्ध माना। ईरान- इराक युद्ध की कटुता को भुला कर ईरान के मजहबी नेता आयतुल्ला खुमैनी ने इसे पश्चिम के विरूद्ध 'जिहाद' करार दिया। खुमैनी ने कहा कि अमेरिका के विरूद्ध युद्ध करते हुये जो भी मुसलमान मारा जायेगा, वह शहीद कहलायेगा। जोर्डन के शाह हुसैन ने कहा कि यह युद्ध केवल अकेले इराक के विरूद्ध नहीं है, अपितु सभी अरबों और मुसलमानों के विरूद्ध है।

12. सैम्यूअल पी० हटिंगटन, दी क्लैश ऑफ सिविलाइजेशन्स, पृष्ठ 22

मुस्लिम कट्टरपंथियों की शिकायत है कि जहाँ मुसलमान मुसलमान के द्वारा मारा जा रहा है जैसे कि कुवैत, कुर्दिश क्षेत्र या सोमाली में, वहां पश्चिमी देश तुरन्त हस्तक्षेप करते है, किन्तु जहाँ मुसलमानों को ईसाइयों के द्वारा मारा जा रहा है जैसे कि बोस्निया में, वहाँ पश्चिमी देश निक्रिय बने हुये हैं। अमेरिका ने 1983 में सीरिया, 1986 में लीबिया 1988 में ईरान 1990-91 में इराक के विरूद्ध हस्तक्षेप किया। ये सभी मुस्लिम देश हैं।

उत्तरी अफ्रीका से मध्य एशिया तक इस्लामिक ब्लाक की रक्तरंजित सीमायें हैं। मुसलमानों की बाल्कन में सर्ब ईसाइयों से, चेचन्या में रूसियों से, इजरायल में यहूदियों से, हिन्दुस्तान में हिन्दुओं से, वर्मा और थाईलैण्ड में बौद्धों से तथा फिलीपाइन्स में कैथोलिक ईसाइयों से आये दिन हिंसा होती रहती है।

कुछ समय पूर्व 7 अगस्त 1994 को लंदन में हुआ मुस्लिम कट्टरपंथियों का वह विशाल सम्मेलन उल्लेखनीय है जिसमें मुस्लिम और गैर- मुस्लिम राष्ट्रों से लगभग 8000 कट्टरपंथी मुस्लिम प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन में पारित प्रस्तावों में दुनिया भर के इस्लामी देशों की सरकारों का तख्ता पलट कर एकीकृत मुस्लिम देश अर्थात निजाम-ए-खलीफा स्थापित करने का आह्वान किया गया। साथ ही यहूदी राज्य इजरायल के विरूद्ध तब तक संघर्ष जारी रखने की वकालात की गई जब तक इसका अस्तित्व समाप्त न हो जाये।[13] सम्मेलन में विश्व की समस्याओं का निदान इस्लाम के माध्यम से हल करने का तरीका भी बताया गया।

लंदन के इस्लामिक सम्मेलन में पारित प्रस्तावों से स्पष्ट हो जाता है कि आज विश्व शान्ति को मुख्य खतरा इस्लामी कट्टरपंथियों से है। निजामे खलीफा का सिद्धान्त मुहम्मद साहब की मृत्यु के पश्चात् अस्तित्व में आया। निजामे खलीफा सिद्धान्त का सबसे नाजुक पहलू यह है कि यह व्यवस्था परिवर्तन विरोधी है, जिसका मूल आधार चौदह सौ वर्ष पुरानी वह खुदाई पुस्तक है जिसमें एक शब्द भी परिवर्तित नहीं किया जा सकता। शमशाद इलाही अंसारी लिखते हैं - "आज जबकि इस्लामी जगत स्वयं विभिन्न मतो में विभाजित है फिर कौन से मतावलम्बी को सही माना जायेगा ? किस फिरके के लोग निजामे खलीफा स्थापित करेगें। इस निराशाजनक स्थिति का स्पष्ट उदाहरण अपफगानिस्तान में इस्लाम के नाम पर चल रहे कत्लेआम से समझा जा सकता है। सूडान की इस्लामी सरकार और ईरान की इस्लामी सरकार के मध्य भी मतैक्य नहीं है। इस्लामी सरकार स्थापित होने के बाद इस विषय पर तीव्र संघर्ष होता है कि

---

13. शमशाद इलाही अंसारी कृत लेख 'सम्यताओं के टकराव का खतरा', अमर उजाला, दि० 26.08.1994

कौन से इमाम की विधि व्यवस्था को लागू किया जाये। इस्लामी तारीख में 12 इमाम हुये हैं जिनकी शरीयत कानूनों पर अलग- अलग व्याख्यायें है। सभी व्याख्यायें कमोवेश भिन्न है।" [14]

वैचारिक विसंगतियों के कारण विश्व के विभिन्न मुस्लिम देश एक नहीं हो सकते। इस्लाम के नाम पर एक होकर भी मुस्लिम देश पश्चिमी देशों को चुनौती नहीं दे सकते क्योंकि ज्ञान, विज्ञान तथा आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों में ये पश्चिम की अपेक्षा बेहद पिछड़े हुये हैं। इसीलिये मौलाना अबुल कलाम आजाद ने आधुनिक विश्व में लेखनी को अधिक शक्तिशाली माना तथा इसे इस्लामी पुनर्जागरण का सर्वोत्तम मार्ग बताया, किन्तु अधिकांश उलेमा अब भी तलवार को ही निर्णायक शक्ति मानते है। तलवार इस्लाम की शक्ति भी रही है और दुर्बलता भी। शक्ति यों की घृणा की ताकत से उसने शीघ्र ही उन्नति प्राप्त कर ली, दुर्बलता यों कि उसने दूसरों में भी घृणा की भावना उत्पन्न कर दी। इससे इस्लाम को हर ओर लड़ना पड़ा । लड़ने की भी एक सीमा होती है। जब वह लड़कर दम लेने लगा, तब दूसरे उस पर हावी हो गये। आज मुस्लिम देश दुनियॉं में सबसे पीछे हैं, दर्शन में, सम्मान में, राजनीति में एवं व्यापार और उद्योग धन्धों में।

आज अनेक स्वतन्त्र राजनैतिक समीक्षक यह मानते है कि भावी विश्व युद्ध इस्लाम और पश्चिम के मध्य होगा। किन्तु मेरा यह सुविचारित मत है कि जब कभी भी ऐसा होगा तो एक ओर इस्लाम होगा, तो दूसरी ओर सम्पूर्ण विश्व मानवता क्योंकि आज अमेरिका के कूटनीतिज्ञ,यूरोप के राजनीतिज्ञ और विश्व के समीक्षाकार इस बात पर एक मत है कि इस्लाम के उस संकीर्ण कट्टरवाद को कुचल देना चाहिये जो मुसलमानों को गैर-मुस्लिमों के विरूद्ध असहिष्णुता की भावना सिखाता है।

यदि विश्व में लोकतन्त्र, उदारवाद और मानवाधिकारों की रक्षा की जानी आवश्यक है तो अमेरिका का विश्व की एक मात्र महाशक्ति होने के कारण यह दायित्व है कि वह इस्लामिक आतंकवाद को कुचलने के लिये पूर्ण रूपेण सक्रिय हो जाय तथा उन देशों और संगठनो की भी भरपूर सहायता ले जो इसे कुचलने के लिये कटिबद्ध है। इस संदर्भ में दैनिक जागरण के सम्पादक नरेन्द्र मोहन की अपील बडी मार्मिक हैं। वे लिखते हैं, "अमेरिकी प्रशासन को यह बात समझ में आ ही जानी चाहिये कि इस्लामी आतंकवाद विश्व के लिये एक बहुत बड़ा खतरा बन चुका है और जब तक अमेरिका

14. वही

विश्व के अन्य राष्ट्रों के साथ एक जुट होकर खड़ा नहीं होता, इस आतंकवाद पर काबू नहीं पाया जा सकता। भले ही अमेरिका कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो और अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन आतंकवादियों को दुष्ट और कायर क्यों न कहें, अमेरिका केवल अपने बल पर इस्लामी आतंकवादी से नहीं निबट सकता। वैसे अमेरिकी नीतियों ने ही इस्लामी आतंकवाद को परोक्षतः पोषण प्रदान किया है। यदि अमेरिका शुरू से ही इस्लामी आतंकवाद के प्रति कठोर रूख अपनाता और पाकिस्तान सरीखे आतंकवाद समर्थक राष्ट्रों से दूरी बनाये रखता तो इस्लामी आतंकवाद विश्व शक्ति के लिये खतरा न बनता। ..... ऐसा नहीं है कि इस्लामी आतंकवादियों ने केवल अमेरिका में ही विस्फोट किये हों तथा अपना दबदबा कायम करने के लिये निरपराध अमेरिकी लोगो की ही हत्यायें की हों, इस्लामी आतंकवादियों के इस तरह के दुष्कृत्यों से अन्य राष्ट्र भी त्रस्त है। भारत भी इन आतंकवादियों से त्रस्त है। ... आज इस्लामी आतंकवाद से विश्व के लगभग सभी प्रमुख राष्ट्रत्रस्त हैं - और तो और ब्रिटेन सरीखा उदारवादी देश भी इस्लामी आतंकवाद की चपेट में है। निश्चित रूप से ब्रिटेन और अमेरिका यह जानते हैं कि इस्लामी आतंकवादी अपने विरोधियों को त्रस्त करने के लिये किस तरह से मजहब की आड़ लेते हैं और किस तरह से घृणा, विद्वेष और आतंक फैलाते हैं। अब तो रूस और चीन भी इस्लामी आतंकवादियों से त्रस्त हैं, फिर भी पता नहीं क्यों ये सभी राष्ट्र विश्व के अन्य राष्ट्रों के साथ मिलकर एक ऐसी आवाज बुलन्द नहीं करते, जिससे इस्लामी आतंकवाद को हतोत्साहित किया जा सके। यदि इस्लामी आतंकवाद को हतोत्साहित करना है तो सारे विश्व को उसके खिलाफ एक जुट होकर अपनी आवाज बुलन्द करनी होगी और इस्लामी, आतंकवाद के समर्थकों पर भी वास्तव में कारगर दबाब बनाना होगा। केवल बयानों या कोरी चेतावनियों से इस्लामी आतंकवाद पर काबू नहीं पाया जा सकता इस आतंकवाद को समाप्त करना है तो उस पर क्रूरतम प्रहार करना होगा। अच्छा हो कि इस प्रहार के संदर्भ में अमेरिका विश्व की अगुआई करें। ओकलाहोमा के पूर्व 1993 में न्यूयार्क के विश्व व्यापार केन्द्र में जो विस्फोट हुआ था, उसके पीदे भी इस्लामी आतंकवादियों का ही हाथ था। अमेरिका के पास इस संदर्भ में पुख्ता सबूत भी हैं, पर आश्चर्य की बात यह है कि बाबजूद इसके अमेरिका ने इस्लामी आतकवाद के प्रति कठोर रूख नहीं अपनाया। निश्चित रूप से इजरायल इस्लामी आतंकवाद पर काबू पाने में बहुत हद तक सफल रहा है। उसने इस्लामी आतंकवाद को उसके अपने गढ़ में परास्त किया है। अतः अमेरिका और विश्व के अन्य राष्ट्रों को इस्लामी आतंकवाद से निबटने के मामले में इजरायल की आतंकवाद विरोधी नीतियों को समझना और स्वीकार करना चाहियें।" [16]

इस्लामिक आतंकवाद को विश्व से समाप्त करने के लिये उदारवादी मुसलमानों को भी आगे आना चाहिये। आज आवश्यकता यह है कि मुसलमानों को सलमान रशदी, अनवर शेख, डॉ० तस्लीमा नसरीन आदि से यदि वैचारिक विरोध है तो उन्हें जान से मारने की धमकी के स्थान पर उनसे वैचारिक आधार पर शस्त्रार्थ करना चाहिये क्योंकि विश्व जनमत द्वारा लेखक के विचारों का उत्तर लेखनी से ही दिया जाना सहन किया जा कसता है। यही मृत्यु का डर मुसलमानों में स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को रोकता रहा है। कुरान की अतर्कसंगत बातों के कायम रहने में मुल्ला- मौलवी उत्तरदायी हैं जो प्रत्येक सुधार की बात को कुरानद्रोह और अल्लाह विरोधी कह कर मुसलमानों को उसके विरूद्ध उत्तेजित कर देते हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि तुर्की ने कुरान की वैज्ञानिक दृष्टिकोंण से पुनर्व्याख्या करने का बीड़ा सरकारी स्तर पर उठाया है। आज इस्लाम को कठमुल्लों के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अता तुर्क कमाल पाशा की आवश्यकता है जो इस्लाम को आधुनिक परिवेश में ढाल कर इसे उदारवादी और विश्व-बन्धुत्ववादी स्वरूप प्रदान कर सके।

11 सितम्बर 2001 को इस्लामिक आतंकवादियों ने अमेरिका के ही चार विमानों को अपहृत करके न्यूयार्क स्थित विश्व व्यापार केन्द्र की विश्व ख्याति की 110 मन्जिला इमारत के दोनों गगनचुंबी टावरों को टक्कर मारकर धराशायी कर दिया। तीसरे अपहृत विमान से उन्होंने वाशिंगटन स्थित रक्षा मंत्रालय पेन्टागन की इमारत के एक भाग को नष्ट कर दिया। चौथे अपहृत विमान से वे राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू बुश को मारना चाहते थे, किन्तु यह विमान पेन्सिल्वेनिया में गिरकर नष्ट हो गया।

अमेरिका में घटी इस क्रूरतम घटना में लगभग दस हजार लोग मारे गये तथा अरबों डालरों की सम्पत्ति नष्ट कर दी गई। अमेरिका ने इस घटना के लिए अन्तर्राष्ट्रीय अरब आतंकवादी ओसामा बिन लादेन और उसके 'अल-कायदा' नामक संगठन को ठहराते हुए अफगानिस्तान की तालिबान सरकार, जिसके संरक्षण में इस समय लादेन है, के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया है। अमेरिका, यूरोपीय संघ तथा नाटो देशों के अतिरिक्त भारत, रूस आदि सभी राष्ट्र इस्लामिक आतंकवाद का कुचलने के लिए ओसामा बिन लादेन को पकड़ने के लिए सामरिक दृष्टि से प्रयासरत हैं। लादेन ने ११ नवम्बर, २००१ को यह स्वीकार भी कर लिया कि उसने और उसके आतंकवादी संगठन–'अलकायदा' ने ही ११ सितम्बर २००१ की आतंकवादी घटना न्यूयार्क और वाशिंगटन में की। अब देखना है कि इस्लामिक आतंकवाद को दुनिया कैसे समाप्त करती है।

---

15. दैनिक जागरण, दि० 22.04.1995 में प्रकाशित सम्पादकीय लेख

क्या कुरान ईश्वरकृत है ?

मुहम्मद साहब ने 40 वर्ष की आयु प्राप्त होने पर यह दावा किया था कि उन्हें इल्हाम हुआ है कि वे अल्लाह के दूत हैं और उन पर अल्लाह का कलाम उतरता है जिसे जिब्राइल दूत उन्हें आयतों के रूप में दे जाता है। यह कलाम 23 वर्ष तक उतरा। मुसलमान मुहम्मद साहब को अल्लाह का अन्तिम दूत और कुरान को अल्लाह की अन्तिम वाणी मानते हैं। मुसलमानों का कहना है कि मुहम्मद साहब तो निरक्षर थे और क्या एक अशिक्षित व्यक्ति कुरान जैसी प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण पुस्तक दे सकता है ? उनकी मान्यता है कि कुरान किसी व्यक्ति की लिखी पुस्तक नहीं अपितु आसमानी पुस्तक है जिसका प्रत्येक शब्द अल्लाह की ओर से अवतरित हुआ तथा जिसे अल्लाह ने मनुष्यों के मार्गदर्शन के लिये उतारा। इसका अवतरण उस समय प्रारम्भ हुआ जब वे मक्का में हिरा नामक पहाड़ी की गुफा में इबादत में लीन थे।[1] मुसलमानों की मान्यता है कि कुरान लोहे-महफूज (आकाश में ज्ञान की सुरक्षित पुस्तक) में है जिसमें अल्लाह ने त्रिकालवृत्ति लिख रखा है।

कुरान में 30 खण्ड और 114 सूरा हैं। निवास-क्रम से प्रत्येक सूरा 'मक्की या 'मदनी' नाम से पुकारी जाती है अर्थात् जो सूरा मक्का में उतरीं वे 'मक्की' और जो मदीना में उतरीं वे 'मदनी' कही जाती हैं।

कुरान एक साथ नहीं उतरा। यह 610 ई० से 632 ई० तक अर्थात् 23 वर्षों में थोड़ा-थोड़ा करके उतरा। वर्तमान कुरान के सुरा और आयतें उतरने के क्रम से भिन्न हैं। कुरान के 114 सूरा 'मक्का-मदनी' दो भेदों में विभक्त हैं। इसमें पहली सूरा बड़ी हैं और बाद की प्रायः छोटी। यह कहा जाता है कि मुहम्मद साहब के जीवनकाल से ही उसके एक-एक वाक्य को बड़ी सावधानी से रेशम, चमड़े, अस्थियों, पत्थरों और खजूर के वृक्ष की छाल पर लिख कर रखा जाता था। बाद में जब पाठों और वाक्यों में भेद होने लगा, तो तृतीय खलीफा उस्मान को सबको एक पुस्तक के रूप में संग्रहित करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। इस संग्रह की प्रामाणिकता के विषय में बहुत मतभेद हैं,[2] क्योंकि मुहम्मद साहब की पत्नी और उमर की पुत्री हफ्सा के पास की कुरान

1. डॉ० इर्तिजा हुसैन, उपरोक्त, पृष्ठ 29
2. राहुल साकृत्यायन, उपरोक्त, पृष्ठ 17

की प्रति को छोड़ कर शेष प्रतियों को खलीफा उस्मान द्वारा जलवा दिया गया। उस समय खलीफा बनने के लिये मुहम्मद साहब के अनुयायियों में गम्भीर मतभेद उठ खड़े हुये जो बढ़ते-बढ़ते गृहयुद्ध के रूप में परिवर्तित हो गये। राहुल साँकृत्यायन लिखते हैं - "वर्तमान पुस्तक के रूप में कुरान का संग्रह खलीफा उस्मान ने कराया था। यही सुन्नियों के मुखिया थे। शिया लोगों का कहना है कि इस पुस्तक में कुरान के कितने ही वाक्य और कितने ही अध्याय छोड़ दिये गये हैं। उदाहरणार्थ, वह सिज्दा अध्याय के कितने ही वाक्य उपस्थित करते हैं। प्राचीन भाष्यकारों ने भी उनमें से कितने ही को जहाँ-तहाँ उद्धृत किया है। पटना की 'खुदाबक्श लाइब्रेरी' में हस्तलिखित कुरान की एक प्रति है, जिसके अन्त में भी ऐसे अनेक वाक्यों का संग्रह है। वर्तमान कुरान 30 सिपारों या खण्डों में विभक्त है, कितनों ही का कहना है कि पहले इनकी संख्या चालीस थी।" [3]

मुसलमानों की धारणा है कि कुरान का रक्षक स्वयं अल्लाह है। इसलिये कुरान सुरक्षित रहेगा। इसे न कोई लुप्त कर सकता है और न इसमें कोई परिवर्तन ही सम्भव है। फिर यह प्रश्न उठता है कि अल्लाह ने पूर्व की आसमानी पुस्तकों के सम्बन्ध में यह उत्तरदायित्व क्यों नहीं निभाया तथा खलीफा उस्मान ने क्यों इसकी अनेक आयतों और सूराओं को छोड़ दिया ?

मुहम्मद साहब ने स्वयं कहा था कि वे कोई नया मजहब प्रारम्भ नहीं कर रहे हैं अपितु उनके द्वारा प्रस्तावित मजहब वही है जिसे हजरत अब्राहम ने प्रारम्भ किया था, किन्तु समय के चक्र से उस मजहब में विकृतियाँ आ गईं। राहुल सांकृत्यायन लिखते हैं, "इस्लाम ने अधिकांश यहूदी सिद्धान्तों को ज्यों का त्यों या कुछ परिवर्तन के साथ ग्रहण कर लिया।" [4] सम्पूर्ण कुरान 610 ई० से 632 ई० अर्थात् 23 वर्ष में उतरा, किन्तु सूरा अल-कद्र के अनुसार यह कद्र वाली रात में उतरा जो हजार महीनों से उत्तम है। [5] कुरान का यह कथन क्या विरोधाभास इंगित नहीं करता ? क्या ईश्वरीय ग्रन्थ में ऐसा विरोधाभास हो सकता है ?

कुरान का प्रारम्भ 'बिस्मिल्लाह अल्-रहमान अल्-रहीम' (अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त कृपाशील और दयावान है) से होता है। सूरा-अत तौबा के अतिरिक्त अन्य सभी सूराओं के प्रारम्भ में यह मंगलाचरण के रूप में पाया जाता है। यही नहीं इसका

3. वही, पृष्ठ 17
4. वही, पृष्ठ 57
5. कुरआन मजीद, सूरा 97, आयत 1 व 3

पाठ मुसलमानों के अन्य कार्यों के प्रारम्भ में करना अनिवार्य माना गया है। मुसलमान इसका पाठ कुछ ऐसे कार्यों में भी करते हैं जो इस पवित्र वाक्य के कदापि अनुकूल नहीं।[6]

बिस्मिल्लाह का पाठ पशुओं के गला काटने में भी किया जाता है। एक ओर कुरान का अल्लाह करूणामय और दयावान है, दूसरी ओर वह सभी गैर-मुस्लिमों को मारने का आदेश देते हुये कहता है कि उन्हें तब तक मारो जब तक वे समाप्त न हो जायें या अल्लाह और कुरान पर ईमान न ले आयें। इससे यह स्पष्ट होता है कि कुरान ईश्वरकृत नहीं अपितु किसी व्यक्ति की रचना है।

बिस्मिल्लाह के बारे में मौलाना मुहम्मद अली कुरान के अपने अंग्रेजी अनुवाद में लिखते हैं कि कुछ लोगों का विचार था कि बिस्मिल्लाह जिससे कुरान की प्रत्येक सूरा प्रारम्भ हुई है, प्रारम्भिक वाक्य के रूप में बढ़ाया गया है।[7] कुरान के प्रारम्भ में यह अल्लाह की ओर से प्रेषित नहीं है। यदि अल्लाह के द्वारा यह बनाया जाता तो 'आरम्भ साथ नाम अल्लाह' के स्थान पर 'आरम्भ वास्ते उपदेश मनुष्यों के' होता। साथ ही 'बिस्मिल्लाह' प्रत्येक सूरा के प्रारम्भ में होता। इसका नवीं सूरा-अत तौबा के प्रारम्भ में न होना इस सन्देह की पुष्टि भी करता है कि लिखने वालों से यह छूट गया होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि लेखकों की ओर से यह पवित्र वाक्य भूमिका के रूप में जोड़ दिया गया, किन्तु बाद में उसे भी 'इल्हाम' का अंग मान लिया गया।

कुरान में माँसाहार का विधान है और बलि का आदेश है। कुरान में पशुओं के उस वध को हलाल माना गया है जिस पर अल्लाह का नाम पढ़ लिया गया हो। दया करने वाले अल्लाह का नाम लेने पर बलि का आदेश क्या स्वयं में विरोधाभास नहीं है ? इस प्रकार बिस्मिल्लाह का प्रयोग उसके आशय के सर्वथा विपरीत है। क्षमा करने वाले और दयालु अल्लाह का नाम लेने का स्वाभाविक परिणाम यह होना चाहिये कि कुरान को मानने वाले वाणीहीन पशु-पक्षियों पर दया का व्यवहार करते किन्तु क्या वे इसके सर्वथा विपरीत कार्य नहीं करते ?

बिस्मिल्लाह की तरह प्रथम सूरा-अलफातिहा भी कुरान का बाद में अंग बनी प्रतीत होती है। यह मुसलमानों के पाठ के लिये है। मुहम्मद साहब के एक परम मित्र इब्ने मसूद ने अपनी कुरान में प्रथम सूरा-अल फातिहा को सम्मिलित नहीं किया। उन्होंने

---

6. प० चमूपति, चौदहवी का चाँद, पृष्ठ 28
7. मौलाना मुहम्मद अली, कुरान, पृष्ठ 82

अपनी पाण्डुलिपि में इसे निरस्त कर दिया तथा उन्होंने अपनी कुरान की प्रति का प्रारम्भ द्वितीय सूरा-अल बकरा से किया था। इस प्रकार यह कहना अनुचित न होगा कि यदि 'बिस्मिल्लाह' और 'अल फातिहा' कुरान के बाद में जोड़े गये तो फिर शेष पुस्तक की प्रामाणिकता पर क्या विश्वास किया जाये ?

कोई भी पुस्तक जो ईश्वरीय ज्ञान होने का दावा करती हो उसमें ऐसी कोई भी बात नहीं होनी चाहिये जो प्रकृति के नियमों के विरूद्ध हो। साथ ही यह भी आवश्यक है कि वह उन सार्वभौमिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करे जो मानव मात्र के लिये ही नहीं अपितु प्राणिमात्र के कल्याण के लिये आवश्यक हैं। साथ ही ऐसे ज्ञान का सृष्टि की रचना के साथ-साथ आना भी आवश्यक है ताकि उसका लाभ सम्पूर्ण मानव मात्र को प्रारम्भ से ही प्राप्त हो सके। इस कसौटी पर वेद का ईश्वरीय ज्ञान होना सिद्ध होता है, जो सृष्टि के प्रारम्भ में आर्य ऋषियों पर प्रकट हुये तथा जो प्राणिमात्र में सद्भाव का सन्देश देते हैं। कुरान इस कसौटी पर खरी नहीं उतरती।

कुरान मानव मात्र को एक नहीं समझती। यह मानव-मानव में विभेद उत्पन्न करती है। यह मनुष्यों को मुस्लिम और गैर-मुस्लिम में विभक्त करती है। कुरान के अनुसार विश्व के समस्त गैर-मुस्लिम काफिर हैं और अल्लाह की ओर से इन पर प्रकोप पर प्रकोप एवं कठोर अपमानजनक यातनायें नियत हैं। साथ ही मृत्यु के पश्चात भी इनको नरक की अनन्त यातनायें सुनिश्चित हैं। कुरान यह भी मानती है कि समस्त विश्व का निर्माण कर्त्ता अल्लाह है, तो फिर यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि उसने काफिर क्यों बनाये तथा इन पर प्रकोप पर प्रकोप एवं कठोर अपमानजनक यातनायें देने का आदेश क्यों दिया ?[8] इससे यह स्पष्ट होता है कि क़ुरान ईश्वरकृत नहीं है क्योंकि ईश्वरीय ज्ञान की पुस्तक के द्वारा मानवमात्र को समान समझना चाहिये।

कुरान ने जो दिया है वह केवल मुसलमानों के लिये है और मुसलमानों में भी सुन्नियों के लिये है।[9] कुरान का अल्लाह काफ़िरों को गुमराह कर देता है, जबकि उसे उन्हें सत्य का मार्ग दिखाना चाहिये। उसे भटके हुये लोगों को असत् से सत् और अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाना चाहिये। कुरान में कहा गया है 'अल्लाह काफिर लोगों को मार्ग नहीं दिखाता।"[10] क्या कुरान के अल्लाह को लोगों का मार्गदर्शन करना चाहिये या गुमराह ? इसलिये भी कुरान को ईश्वरकृत पुस्तक नहीं माना जा सकता।

8. बिशन चन्द गोयल, काश ! गाँधी जी ने कुरान पढ़ी होती ! तो.... पृष्ठ 3
9. भा० गो० केसकर, भारतीय संविधान के विरूद्ध कुरान और मुहम्मद पृष्ठ 5
10. कुरआन मजीद, सूरा 9, आयत 37, पृष्ठ 374

कुरान में पशु-पक्षियों के प्रति सदभाव का नितान्त अभाव है। इसमें माँसाहार का विधान है और बलि का आदेश है। कुरान के अनुसार मृत शरीर, रक्त, सूअर का माँस, वह जानवर जिस पर अल्लाह के सिवाय किसी और का नाम लिया गया हो, वह जो घुटकर या चोट खाकर या ऊँचाई से गिरकर या सींग लगने से मरा हो, जिसे किसी हिंसक पशु ने फाड़ खाया हो, निषिद्ध है।[11] पं० चमूपति लिखते हैं, "हराम तो और भी कई चीजें हैं , जैसे मनुष्य का गोश्त, हिंसक जीवों का गोश्त आदि-आदि, परन्तु उनका वर्णन कुरान में नहीं आया।.... ... क्या यह ईश्वरीय संदेश की कमी नहीं है कि इसमें निषिद्ध वस्तुओं की सूची अत्यन्त अपूर्ण दी है। जिसे कुरान के पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान होने का विश्वास हो, वह क्या इन निषिद्ध वस्तुओं के अतिरिक्त और सब वस्तुएं वैध समझें ?"[12]

कुरान में केवल उस पशु का माँस वैध माना गया है जिस पर अल्लाह का नाम पढ़ लिया गया हो। क्या उस पुस्तक को ईश्वरीयकृत माना जा सकता है जो पशुओं को हलाल किया जाना सिखाती हो और वह भी बिस्मिल्लाह कहकर।

किसी भी पुस्तक को जो अपने को ईश्वरीय ज्ञान होने का दावा करती हो, उसे स्त्री और पुरूष को समकक्ष समझना चाहिये। विश्व की जनसंख्या का आधा भाग स्त्रियों का है। अतः किसी मजहब का यह दावा कि वह मानव मात्र के कल्याण के लिये प्रारम्भ हुआ है, उसे इस कसौटी पर कसा जाना आवश्यक है कि वह स्त्रियों को क्या सामाजिक अधिकार प्रदान करता है। कुरान स्त्रियों को पुरुषों की तुलना में दोयम स्थान प्रदान करती है। वह स्त्री को पुरुष की सम्पत्ति समझती है। कुरान स्त्रियों के लिये पर्दे की पक्षधर है जिससे उनकी शारीरिक, मानसिक और नैतिक क्षति हो रही है। पर्दा इस बात का प्रमाण है कि स्त्री अपनी स्वतन्त्र सत्ता नहीं रखती। कुरान के अनुसार निकाह एक समझौता है जिसे पुरूष कभी भी बिना किसी कारण भी तोड़ सकता है। स्त्री भोग की वस्तु है। वह खेती है। कोई भी मुसलमान एक बार में चार पत्नियाँ और कितनी भी रखैल रख सकता है तथा किसी भी पत्नी को कभी भी तलाक देकर उसकी जगह पर नई स्थानापन्न कर सकता है। कुरान में निर्दिष्ट चार पत्नियों का सिद्धान्त यदि ईश्वरीय होने के कारण सार्वभौमिक और चिरकाल सत्य होता, तो क्या ईश्वर द्वारा पृथ्वी पर स्त्रियाँ पुरूषों की अपेक्षा संख्या में सदैव चौगुनी उत्पन्न नहीं की गईं होतीं ?

---

11. वही, सूरा 5, आयत 3, पृष्ठ 257
12. प० चमपति, उपरोक्त, पृष्ठ 238

कुरान द्वारा स्त्रियों को अधोगति में पहुँचाना आधुनिक काल में अनेक मुस्लिम महिलाओं को स्वीकार नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त डॉ० तस्लीमा नसरीन विश्व की मुस्लिम महिलाओं को पुरूषों के समकक्ष स्थान दिलाने के लिये आन्दोलनरत है। इसलिये वे कुरान को कालातीत पुस्तक मानती हैं। स्वीडन में निर्वासित जीवन व्यतीत करते हुये एक साक्षात्कार में डॉ० तस्लीमा नसरीन ने कहा कि कुरान का महत्व केवल इतना है कि वह एक ऐतिहासिक और कालातीत पुस्तक है जिसकी ऐतिहासिकता के नाते हमें रक्षा करनी चाहिये।[13] ईश्वरीय ज्ञान नित्य होता है। अतः जो पुस्तक कालातीत हो चुकी हो, क्या उसे ईश्वरकृत माना जा सकता है ?

कुरान की अनेक बातें बुद्धि, तर्क और विज्ञान की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं। कुरान में कसमें खाना निषिद्ध है किन्तु फिर भी इसमें कसमों की भरमार है। कुरान में कहा गया है, "अल्लाह की कसम हम तुमसे पहले भी कितनी ही जातियों के पास 'रसूल' भेज चुके हैं।"[14]

क्या यह कथन अल्लाह का हो सकता है ? अल्लाह तो अपने को 'हम' कह रहा है, किन्तु कसम खाते समय वह कहता है कि अल्लाह की कसम। इससे यह स्पष्ट होता है कि 'हम' कोई और है और अल्लाह कोई और। इससे यह भी सिद्ध होता है कि कुरान का रचयिता अल्लाह नहीं, वर्ना 'अल्लाह' की कसम क्यों खाई जाती ?

कुरान यदि ईश्वरकृत ग्रन्थ होता तो अल्लाह उत्तम पुरुष में कहता, किन्तु वह तो इसमें अन्य पुरुष में सम्बोधित किया गया है। कुरान में अनेक आयतें हैं जिनमें अल्लाह को अन्य पुरुष में सम्बोधित किया गया है। उदाहरण के लिये :-

(1) "यदि तुम्हें उस चीज के बारे में, जो हमने अपने बन्दे पर उतारी है, सन्देह हो, तो तुम उस जैसी एक सूरा लाओ और अल्लाह के सिवा जो तुम्हारी सहायता करने वाले हों उनको भी बुला लो, यदि तुम सच्चे हो।"[15]

(2) "और याद करो जब हमने 'इजराईल' की सन्तान से वचन लिया कि अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करोगे।"[16]

(3) "अल्लाह ने उन लोगों की बात सुन रक्खी है, जिन्होंने कहा कि अल्लाह निर्धन है और हम धनवान हैं।"[17]

---

13. डॉ० तस्लीमा नसरीन का वक्तव्य दि० 14.11.1994 के 'अमर उजाला' मे प्रकाशित
14. कुरआन मजीद, सूरा 16, आयत 63, पृष्ठ 492
15. वही, सूरा 2, आयत 23, पृष्ठ 128
16. वही, सूरा 2, आयत 83, पृष्ठ 138

(4) "अल्लाह का हुक्म आ गया तो अब उसकी जल्दी न मचाओ। वह महिमावान और उच्च है।" [18]

(5) "और अल्लाह ने आकाश से पानी बरसाया फिर उसके द्वारा भूमि में उसके मुर्दा हो जाने के पश्चात जान डाल दी।" [19]

कुरान में शैतान को बहुत शक्तिशाली प्रदर्शित किया गया है। यहाँ तक कि उसने अल्लाह के आदेश को भी ठुकरा दिया। कुरान के अनुसार- "और याद करो जब हमने फरिश्तों से कहा कि आदम के आगे झुक जाओ, तो इबलीस के सिवा सब झुक गये, उसने इन्कार किया और घमण्ड किया और हो गया काफिरों में से।" [20]

क्या यह आयत प्रदर्शित नहीं करती कि शैतान अल्लाह से भी अधिक शक्तिशाली है जो उसने अल्लाह का कहना भी न माना। स्वामी दयानन्द लिखते हैं, "खुदा में कुछ तेज नहीं है क्योंकि शैतान ने खुदा का हुक्म ही न माना और खुदा उसका कुछ भी न कर सका। और देखिये ! एक शैतान काफिर ने खुदा का छक्का छुड़ा दिया तो मुसलमानों के कथनानुसार भिन्न जहाँ करोड़ों काफिर हैं वहाँ मुसलमानों के खुदा और मुसलमानों की क्या चल सकती है ?" [21]

साथ ही यह प्रश्न यह उठता है कि शैतान उसने बनाया ही क्यों ? और यदि बनाया भी तो अपना अवज्ञाकारी क्यों बनाया ? या फिर अल्लाह वैदिक परमात्मा की तरह सर्वशक्तिमान नहीं है जो शैतान को दण्डित तक नहीं कर सका तथा उसके क्रियाकलापों पर रोक नहीं लगा सका। ईश्वर के सामने तो शैतान एक भिनगे की तरह होना चाहिये। पं० चमुपति लिखते हैं कि जब यह अल्लाह के अपने अधिकार क्षेत्र में था कि सबको स्वामिभक्त उत्पन्न करता तो शैतान को क्यों विद्रोही स्वभाव का उत्पन्न कर दिया या भूल चूक से ऐसा हो गया। यदि भूल नहीं हुई अपितु इच्छा से उसे घमण्डी बनाया गया तो रूष्ट होने और डराने-धमकाने से क्या तात्पर्य है। [22]

कुरान में अल्लाह अपने को बड़ी कार्यकुशलता वाला कहता है, किन्तु शैतान के सम्बन्ध में न तो उसने प्रौढ़ता का ही प्रमाण दिया और न कार्यकुशलता का। यह तो कुरान में निहित विरोधाभास ही है। अतः कुरान को ईश्वरकृत पुस्तक नहीं माना जा

17. वही, सूरा 3, बायत 181, पृष्ठ 213
18. वही, सूरा 16, आयत 1, पृष्ठ 484
19. वही, सूरा 16, आयत 65, पृष्ठ 492
20. वही, सूरा 2, आयत 34, पृष्ठ 131
21. स्वामी दयानन्द, उपरोक्त, पृष्ठ 364
22. प० चमूपति, उपरोक्त, पृष्ठ 72

सकता क्योंकि इसमें अल्लाह को शैतान की अपेक्षा निस्तेज प्रदर्शित किया गया है।

कुरान मुहम्मद साहब को अल्लाह का दूत मानती है। वे इस्लाम के प्रवर्तक और मुसलमानों के पैगम्बर माने जाते हैं। कुरान मुहम्मद साहब से पूर्व अन्य पैगम्बरों का आना भी मानती है। मुसलमान मानते हैं कि पैगम्बरों के जीवन आचार-विचार की दृष्टि से सभी प्रकार के दोषों से मुक्त होते हैं। किन्तु कुरान में जिस प्रकार इन पैगम्बरों का जीवन चरित्र प्रदर्शित किया गया है, उससे प्रश्न उठता है कि क्या उन्हें ईश्वर का दूत माना जा सकता है तथा क्या उनका जीवन चरित्र आम व्यक्ति के सामने आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया जाना उचित है ?

कुरान में हजरत मूसा को एक महत्वपूर्ण पैगम्बर दिखाया गया है जिसके विषय में कहा गया है, "मूसा ने उसे एक घूँसा मारा और उसका काम तमाम कर दिया। इस पर मूसा ने कहा - यह शैतान की कृति है। निश्चय ही वह शत्रु और खुला हुआ गुमराह करने वाला है।" [23]

बाइबिल और कुरान हजरत लूत को एक पैगम्बर मानती हैं। बाइबिल में हजरत लूत के बारे में कहा गया है - "फिर हजरत लूत की दोनों लड़कियाँ अपने पिता से गर्भवती हुईं।" [24] कुरान में भी हजरत लूत के बारे में कहा गया है - "और लूत भी निश्चय ही उन्हीं लोगों में से था जो रसूल बना कर भेजे गये थे।" [25]

कुरान मुहम्मद साहब को अन्तिम पैगम्बर मानती है जिनमें पैगम्बरों की सभी श्रेष्ठतायें उच्चस्तर की विद्यमान थीं। मुसलमान आपको सर्वगुण सम्पन्न मानते हैं। अल्लाह का मुहम्मद साहब के लिये सन्देश है जो निम्नांकित आयतों से स्पष्ट होता है :-

"और (हे नबी !) याद करो जब तुम उस व्यक्ति से कह रहे थे जिस पर अल्लाह ने एहसान किया था और तुमने भी जिस पर एहसान किया - अपनी पत्नी को अपने पास रहने दे (उसे न छोड़), और अल्लाह से डर। और तुम अपने जी में यह बात छिपाये हुये थे जिसे अल्लाह खोलने वाला था (अर्थात् जैनब का प्रेम और यह भाव कि यदि जैद इसको छोड़ देगा तो मैं उससे विवाह कर लूँगा), तुम लोगों से डर रहे थे हालाँकि अल्लाह इसका ज्यादा हक रखता है कि तुम उससे डरो। फिर जब जैद को उससे कोई सरोकार न रहा, तो हमने तुझसे उस स्त्री का विवाह कर दिया ताकि ईमान वालों पर अपने मुँह बोले बेटों की पत्नियों के मामले में कोई तंगी न रहे, जब

23. कुरआन मजीद, सूरा 28, आयत 15, पृष्ठ 686
24. धर्मशास्त्र अर्थात् पुराना और नया धर्म नियम, उत्पत्ति अध्याय 19, आयत 36, पृष्ठ 25
25. कुरआन मजीद, सूरा 37, आयत 133, पृष्ठ 809

कि उनका उन स्त्रियों से कोई सरोकार न रह जाये। और अल्लाह का हुक्म पूरा होकर ही रहता है।"[26]

"हे नबी ! हमने तुम्हारे लिये तुम्हारी पत्नियाँ हलाल (अवर्जित) कर दी हैं जिनके मह तुमने दे दिये हैं, और तुम्हारी लौंडियाँ जो अल्लाह ने तुम्हें गनीमत के माल में दी हैं ताकि तुम्हारे ऊपर कोई तंगी न रहे।"[27]

कुरान में वर्णित इन पैगम्बरों के बारे में पं० चमूपति लिखते हैं - "हजरत मूसा ने हत्या की, हजरत लूत ने अपनी पुत्रियों से सन्तानोत्पति की, हजरत मुहम्मद ने नौ पत्नियों व कुछ बान्दियाँ स्वीकार कीं और जैद, जिसे एक बार दत्तक पुत्र बना चुके थे, की तलाक प्राप्त पत्नी से विवाह कर लिया। जलालैन के अनुसार सर्वसाधारण में लज्जित होने के भय से अपने प्रेम की इच्छा को गुप्त रखा। .... उससे यह प्रश्न भी पाठकों के मन में उठता है कि क्या इस प्रकार के व्यक्तिगत जीवन की कहानियाँ किसी ईश्वरीय सन्देश की पुस्तक का भाग होने के योग्य हैं ?"[28]

कुरान 'माले गनीमत' का सिद्धान्त प्रतिपादित करती है। जिसका तात्पर्य है लूट का वह सामान जो मुसलमान ग़ैर-मुसलमानों से युद्ध में प्राप्त करते हैं। कुरान इस लूट के माल को अल्लाह और उसके रसूल मुहम्मद साहब का मानती है।[29] इसका पाँचवा भाग अल्लाह और रसूल तथा उनके रिश्तेदार आदि को दिये जाने के पश्चात् शेष भाग को युद्ध में भाग लेने वाले मुसलमानों में बाँटे जाने का आदेश है।[30] साथ ही यह मुसलमानों को युद्ध में हाथ लगी स्त्रियों को रखैल बनाकर रखने की स्वीकृति प्रदान करती है।[31] कुरान का सिद्धान्त 'मातृवत् परदारेषु, परद्रवेषु लोष्टवत्' के उच्च भारतीय आदेश के सर्वथा विपरीत है। अतः जो पुस्तक लूट के माल के सिद्धान्त का प्रतिपादन करती हो तथा उसको अल्लाह और उसके रसूल का मानती हो, क्या ऐसी पुस्तक को ईश्वरीय ज्ञान माना जा सकता है ?

कुरान अरबी में उतरा और उसका आधार अरब के लोग ही थे। कुरान में कहा गया है - "और इसी तरह (हे नबी !) हमने तुम्हारी ओर अरबी कुरआन वहय किया है, ताकि तुम बस्तियों के केन्द्र को और उसके चारों ओर रहने वालों को

26. वही, सूरा 33, आयत 37, पृष्ठ 753
27. वही, सूरा 33, आयत 50, पृष्ठ 755
28. प० चमूपति, उपरोक्त, पृष्ठ 86-87
29. कुरआन मजीद, सूरा, आयत 1, पृष्ठ 349
30. वही, सूरा 8, आयत 41, पृष्ठ 354
31. वही, सूरा 23, आयत 6, पृष्ठ 603

सचेत करो और सचेत करो एक इकट्ठा होने के दिन से जिसमें कोई सन्देह नहीं।"[32] बस्तियों के केन्द्र से तात्पर्य 'मक्का' से है। कुरान की यह आयत इस बात का प्रतीक है कि मुहम्मद साहब को यह सेवा प्रदत्त की गई कि वे मक्का और उसके आस-पास इसकी शिक्षाओं का प्रचार करें। यह सार्वभौमिक और नित्य ज्ञान नहीं हो सकती क्योंकि यह अरबी जानने वाले केवल अरबों के लिये है, जैसा कि कुरान में कुरान में कहा गया है - "यदि हम अरबी से भिन्न भाषा में कुरान बनाते तो अवश्य (लोग) कहने लगते -'उसके तात्पर्य क्यों नहीं स्पष्ट किये। क्या ! अरब का आदमी और अरब की भाषा से भिन्न भाषा ?' यह विश्वासियों के लिये मार्गदर्शक और स्वास्थ्यप्रद है।"[33]

यदि कुरान का इल्हाम सम्पूर्ण मानव समाज के लिये होता तो उसकी भाषा ऐसी होनी चाहिये थी जिसे सारा विश्व समझ सकता। अरबी भाषा इल्हाम के समय भी तो सारे विश्व की भाषा नही थी। कुरान का उद्‌देश्य केवल अरब की जातियों का सुधार करना था। कुरान के अनुसार - "ताकि तू सचेत करे एक ऐसी जाति को जिसके पास तुझसे पहले कोई सचेत करने वाला नहीं आया कदाचित् वे मार्ग पा जायें।"[34] यह जाति अरब लोगों की है। मुहम्मद साहब के सामने ईसाई और यहूदियों की मान्यता थी कि वे पुस्तकों के मालिक है और पैगम्बरों के अनुयायी हैं। अरबवासी यह दावा नहीं कर सकते थे। मुहम्मद साहब के कारण उनकी यह इच्छा भी पूर्ण हो गई।

कुरान में सैमेटिक मतों का उल्लेख है, किन्तु इसमें वैदिक धर्म का नाम तक नहीं है। इसमें तौरत, जबूर और इन्जील का नाम है, किन्तु वेद का वर्णन तक नहीं है। इसमें इब्राहीम, इस्माइल, इश्हाक, याकूब, मूसा, ईसा आदि का तो वर्णन है, किन्तु आर्य ऋषियों का कहीं भी उल्लेख तक नहीं है। तो क्या यह माना जाये कि अल्लाह, उसके फरिश्ते जिब्राइल और दूत मुहम्मद को इनके बारे में कोई ज्ञान तक नहीं था। अतः सार्वभौमिकता और सार्वभौमिक ज्ञान के अभाव में इसे ईश्वरकृत कैसे माना जा सकता है ? कुरान नित्य ईश्वरीय ज्ञान नहीं अपितु इसे एक विशेष काल और विशेष जाति के लिये तैयार की गई स्मृति माना जा सकता है।

यह कहना गलत है कि कुरान में परिवर्तन नहीं हुये हैं। कुरान में समय-समय पर परिवर्तन होने के भी प्रमाण भी पाये जाते हैं। कुरान की सूराओं, आयतों और शब्दों की संख्या में भी प्रारम्भ से मतभेद और विरोधाभास है। नागपुर के प्रख्यात

32. वही, सूरा 42, आयत 7, पृष्ठ 875
33. वही, सूरा 41, आयत 44
34. वही, सूरा 32, आयत 3, पृष्ठ 733

इतिहासकार और मजहबी विद्वान अल्लामा हजेक तहपुरी ने कुरान की आयतों और पैगम्बरों की सर्वोच्चता के विरूद्ध कई टिप्पणियाँ की हैं।[35]

कुरान में अनेक विचित्र बातें हैं। इसमें पुनरावृत्ति दोष बहुत है। सूरा 9 अत तौबा की आयत 73 और सूरा 66 अत-तरहीम की आयत 9 एक ही हैं। अनेक आयतों में एक ही बात को वार-बार कहा गया है। रोडिग्सन के अनुसार कुरान की आयतें ईश्वरकृत नहीं है। स्वामी दयानन्द कुरान को ईश्वरकृत तो क्या किसी विद्वान व्यक्ति की पुस्तक भी नहीं मानते हैं। वे अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखते हैं- "मुझसे पूछो तो यह किताब ईश्वर, न किसी विद्वान की बनाई और न विद्या की हो सकती है। यह तो बहुत थोड़ा सा दोष प्रकट किया इसलिये कि लोग धोखे में पड़कर अपना जन्म व्यर्थ न गवायें। जो कुछ इसमें थोड़ा सा सत्य है वह वेदादि विद्या पुस्तकों के अनुकूल होने से जैसे मुझको ग्राह्य है, वैसे अन्य मजहब के हठ और पक्षपात रहित विद्वानों और बुद्धिमानों को ग्राह्य है। इसके बिना जो कुछ इसमें है वह सब अविद्या भ्रमजाल और मनुष्य के आत्मा को पशुवत बनाकर, शान्तिभंग कराकर, उपद्रव मचा मनुष्यों में विद्रोह फैला परस्पर दुखोन्नति करने वाला विषय है। और पुनरक्त दोष का तो कुरान जानो भण्डार ही है।"[36]

इसीलिये इंग्लैण्ड के प्रख्यात उदारवादी प्रधानमंत्री ग्लैडस्टोन ने उन्नींसवीं शताब्दी में बाल्कान राज्यों के ईसाइयों पर तुर्की के सुल्तान द्वारा मजहब के आधार पर किये जाने वाले अत्याचारों और सामूहिक कत्लेआम के कारण कहा था कि जब तक दुनियाँ में कुरान रहेगी, विश्व में शान्ति स्थापित होना असम्भव है।

कुरान द्वारा गैर-मुस्लिमों के विरूद्ध घृणा, द्वेष एवं ईर्ष्या फैलाने के कारण ही दक्षिण अफ्रीका में ईसाइयों की धर्म संस्था ने प्रस्ताव पारित किया कि इस्लाम दक्षिण अफ्रीका एवं पूरे विश्व के लिये एक खतरनाक एवं झूठा मजहब है।[37]

कुरान की अधिकांश बातें दर्शन, ज्ञान और बुद्धि से बाहर की है। उसकी शिक्षा सिर्फ अवैज्ञानिक ही नहीं है, अपितु बुराई भी उत्पन्न करती है।[38] डॉ० फोरमैन लिखते हैं - "जो आदमी कुरान को पढ़कर उस पर चलेंगें अवश्य निर्दयी और कामी बन जायेंगें।"[39]

35. अमर उजाला, आगरा, दि० 27.07.1994 में प्रकाशित
36. स्वामी दयानन्द, उपरोक्त, पृष्ठ 402
37. द स्टेट्समैन, 11.11.1994
38. डा० मिरचिल, आचार्य चतुरसेन शास्त्री द्वारा'भारत मे इस्लाम मे उदधृत, पृष्ठ 51

ईश्वर की वाणी अटल होती है तथा उसमें परिवर्तन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। किन्तु कुरान में स्पष्ट लिखा है कि उसके आदेशों में परिवर्तन होता रहा है। कुरान के अनुसार - "हम जो कोई आयत मन्सूख (निरस्त) कर देते है या भुलवा देते हैं तो उससे अच्छी या उस जैसी दूसरी (आयत) लाते हैं।" [40]

वास्तव में कुरान नित्यवाणी नहीं है। यह स्वयं को अरब के लोगों के लिये, जो उस समय इल्हाम से वंचित थे, उस समय की आचार संहिता बताती है और इस बात की सम्भावना भी प्रकट करती है कि उसे वापस भी ले लिया जा सकता है। अतः डॉ० तस्लीमा नसरीन का यह कहना पूर्ण उचित है कि कुरान अब अप्रासंगिक हो चुकी है तथा उस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। [41]

---

39. डा० फोरमैन, आचार्य चतुरसेन शास्त्री द्वारा'भारत मे इस्लाम में उदधृत, पृष्ठ 51
40. कुरआन मजीद, सूरा 2, आयत 106, पृष्ठ 143
41. डा० तस्लीमा नसरीन का पेरिस में दिया वक्तव्य, अमर उजाला, आगरा दि० 29.11.1994

इस्लाम का भविष्य

सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि कुरान का विधान क्या देशकाल की सीमाओं से मुक्त है, क्या वह सार्वभौम एवं शाश्वत् है, जैसा कि उसके विषय में दावा किया जाता है अथवा वह किसी विशेष अवधि एवं इतिहास के किसी सीमित कालखण्ड और उसकी विशेष परिस्थितियों में ही प्रासंगिक एवं उपादेय है।

अपने शोध की प्रक्रिया एवं अपने अध्ययनक्रम में कुरान के धर्मदर्शन की एक व्यापक रूपरेखा हमें इन शब्दों में मिलती है :-

"कुरान की घोषणा के अनुसार प्रत्येक युग (अथवा निर्धारित अवधि) के लिये एक ईश्वर-प्रेरित धर्म-ग्रन्थ होता है (कुरान : अध्याय 13 : आयत 38-39) तथा एक ईश्वरप्रेरित धर्म-प्रवर्तक (पैगम्बर या रसूल) होता है (अध्याय 10 : आयत 47 : अध्याय 13 : आयत 7 : अध्याय 16 : आयत 36 : अध्याय 57 : आयत 25)। प्रत्येक ईश्वरप्रेरित धर्म प्रवर्तक (रसूल) तथा उसके धर्मग्रन्थ के अनुयायियों के समुदाय (उम्मत) का जीवनकाल भी निर्धारित होता है अर्थात् प्रत्येक धर्म-प्रवर्तक तथा उसके धर्मग्रन्थ की शिक्षाएँ और धार्मिक आदेश एक निर्धारित अवधि अथवा युग के लिये अभीष्ट होते हैं और उसी अवधि अथवा युग में प्रभावी रहते हैं। कुरान अपने अनुयायियों को संबोधित करते हुये ईश्वर के इसी शाश्वत् नियम का स्मरण कराता है (अध्याय 10 : आयत 49 : अध्याय 34 : आयत 30 : अध्याय 32 : आयत 5 : अध्याय 22 : आयत 47 : अध्याय 7 : आयत 34)" [1]

कुरान की एक और घोषणा का उल्लेख हमें इन शब्दों में मिलता है -

"हे आदम की सन्तान (अर्थात् हे मनुष्यो)! निश्चय ही तुम्हारे पास मेरे संदेशवाहक (अर्थात् रसूल या पैगम्बर) (एक के बाद एक) आयेंगे और मेरी आयतें या निशानियाँ (अर्थात् मेरे रहस्य और आदेश) तुम्हारे सामने प्रकट करेंगे तो तुममें जो लोग सत्याचारी और ईश्वर के आज्ञाकारी बनकर अपना सुधार कर लेंगे वे भय और विषाद से मुक्त रहेंगे (कुरान : अध्याय 7 : आयत 35)। किन्तु जो ईश्वर-प्रेरित शिक्षक का तिरस्कार कर के ईश्वर के अवज्ञाकारी बन जायेंगे, वे उसके प्रकोप के भागी होंगे (अध्याय 13 : आयत 32 : अध्याय 28 : आयत 59 : अध्याय 35 : आयत

1. डॉ० इर्तिजा हुसैन, इस्लाम का उदय और लक्ष्य, पृष्ठ 78

25)। कुरान यह भी घोषणा करता है कि यह ईश्वर का शाश्वत् नियम है जिसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हो सकता (अध्याय 17 : आयत 77 : अध्याय 33 : आयत 62 : अध्याय 77 : आयत 16-18)" [2]

इससे पूर्व कि हम इस विषय पर किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की चेष्टा करें, आवश्यक है कि हम कुरान की कुछ आयतों को, जिनका उल्लेख इन उद्धरणों में किया गया है, ध्यानपूर्वक पढ़ लें :-

1). वलि कुल्लि उम्मतिन् रसूलु्........

प्रत्येक उम्मत (अर्थात् समुदाय) के लिये एक रसूल (अर्थात् ईश्वर-प्रेरित पैगम्बर अथवा ईशदूत) होता है। (कुरान : अध्याय 10 : आयत 47)

2). लि कुल्लि उम्मतिन् अजल ....।

प्रत्येक उम्मत के लिये एक (निर्धारित) अवधि है। जब उनकी अवधि (के पूरे होने की बेला) आ जाती है तो फिर वे एक घड़ी भी (अपनी निर्धारित अवधि से) आगे या पीछे नहीं हो सकते (अर्थात् वह अवधि अटल होती है और ईश्वर का विधान उसका पालन कठोरता से करता है।)

(कुरान : अध्याय 10 : आयत 49 तथा अध्याय 7 : आयत 34)

3). वलि कुल्लि अजलिन् किताब .....

प्रत्येक (अजल) अवधि के लिये एक किताब (अर्थात् ईश्वरप्रेरित पुस्तक) होती है। अल्लाह उसमें से जिस (चीज़) को चाहता है निरस्त कर देता है और जिस चीज़ को चाहता है शेष अथवा अक्षुण्ण रखता है।

(कुरान : अध्याय 13 : आयत 38)

4). ....व लन् तजिद लि सुन्नतिल्लाहि तब्दीला।

अल्लाह की सुन्नत अर्थात् कार्यप्रणाली अथवा नीति (क्या है यह) इस (अर्थात् इस्लाम) से पूर्व के लोगों (के प्रति अल्लाह के द्वारा किये गये व्यवहार) में (देखी जा सकती) है ओर तुम अल्लाह की कार्यप्रणाली में किसी प्रकार का परिवर्तन कदापि न पाओगे।

(कुरान : अध्याय 33 : आयत 62 तथा अध्याय 17 : आयत 77)

5). अलम् नह्लिकल् अव्वलीन सुम्म नुत्बिउहुमुल्आखिरीन कज़ालिक नफ़अलु बिल्मुज्रिमीन।

क्या हम ने तुम से पूर्ववर्ती (उम्मत के) लोगों को (उन के मिथ्याचार के

2. वही, पृष्ठ 82

दण्डस्वरूप) हलाक अर्थात् नष्ट नहीं कर दिया। फिर (पूर्ववर्ती ही समान) परवर्ती (उम्मत के) लोगों के प्रति भी इसी (कार्य प्रणाली अथवा नीति) का अनुसरण करेंगे (अर्थात् उन्हें भी उन के पूर्ववर्ती उम्मत के लोगों के समान हलाक अर्थात् नष्ट कर देंगे)। हम अपराधियों और पापाचारियों के साथ इसी प्रकार का व्यवहार किया करते हैं। (कुरान : अध्याय 77 : आयत 16-18)

6). या बनी आदम ....।

हे आदम की संतान (अर्थात हे मनुष्य मात्र) निश्चय ही जब मेरे रसूल (अर्थात् पैगम्बर बहुवचन में) तुम्हारे पास आयेंगे और तुम्हारे सामने मेरी आयतों का वाचन करेंगे, तो जो सत्याचारी बनेगा और अपना सुधार कर लेगा उसे न कोई भय होगा और न शोक। (कुरान : अध्याय 7 : आयत 35)

उपर्युक्त आयतों को ध्यानपूर्वक पढ़ने से अनेक निष्कर्ष निकलते हैं। यथा :-

1. कुरान के धर्म-दर्शन के अनुसार कोई रसूल, उम्मत अथवा धर्मग्रन्थ सदा सर्वदा के लिये नहीं है,बल्कि एक निर्धारित अवधि (अथवा काल खण्ड) के लिये है।
2. अल्लाह की कार्यप्रणाली, नीति अथवा नियम (सुन्नत) में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हो सकता। वह शाश्वत् है। उसका विधान पूर्ववर्ती और परवर्ती सभी उम्मतों के लिये समान हैं।
3. अल्लाह की यह कार्यप्रणाली और विधान क्या है ? इसका पता पूर्ववर्ती उम्मतों के इतिहास अर्थात् उनके उत्थान और पतन के घटनाक्रम तथा उनकी गति और नियति पर दृष्टिपात करने से चलता है।
4. इस्लाम अथवा कुरान अल्लाह के इस नियम का अपवाद नहीं हो सकता, क्योंकि अल्लाह का नियम कुरान के दावे के अनुसार अपरिवर्तनीय और अटल है। इस्लाम या कुरान के (इस शाश्वत नियम के) अपवाद होने का उल्लेख भी किसी आयत में नहीं है।
5. कुरान की घोषणा के अनुसार अल्लाह इस्लाम की पूर्ववर्त्ती उम्मतों को उनके पापाचरण के दण्डस्वरूप हलाक अथवा नष्ट करता रहा है और यही वह भविष्य में भी करेगा।
6. अन्तिम आयत (अध्याय 7 की 35वीं) में कुरान द्वारा आदम की संतान अर्थात् मनुष्यमात्र को (केवल अरबवासियों को नहीं) संबोधित करके रसूलों और पैगम्बरों के आने की बात निश्चयपूर्वक कही गयी हैं। भूत अथवा वर्तमान

कालिक क्रिया का प्रयोग न करके भविष्यकाल की क्रिया का प्रयोग किया गया है।

अब आप ठंडे दिल से तथा पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर सोचिये कि कुरान, उसकी शरीअत, उसकी उम्मत एवं उसके प्रवर्तक के अन्तिम होने का दावा नितान्त तर्कहीन और पूर्णरूपेण निराधार नहीं तो और क्या है ? तथा ऐसे दावे को पूर्वाग्रह अथवा दुराग्रह के अतिरिक्त और कौन सी संज्ञा दी जा सकती है ?

अस्तु, यह स्पष्ट हो जाता है कि न केवल बौद्धिक आधार पर वरन् स्वयं कुरान के धर्म-दर्शन के आधार पर, जो कुरान से उद्धृत की गयी उपर्युक्त आयतों से स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है, कुरान की शरीअत के अन्तिम होने का दावा नितान्त आधारहीन है। सामान्य बुद्धि भी कुरान के अनेक आदेशों और प्रावधानों के वर्तमान युग और वर्तमान परिस्थितियों में अप्रासंगिक होने की गवाही देने के लिये पर्याप्त हैं।

इस प्रकार के अप्रासंगिक आदेशों का अंधाधुंध समर्थन और वकालत करने की मनोवृत्ति ही उम्मत अथवा मिल्लत को रूढ़िवाद और मतान्धता की ओर ले जाती है और अपने क्रम में उसके पिछड़ेपन का मुख्य कारण बनती है। यदि गंभीरता से विचार करें तो विदित होगा कि उम्मत अथवा मिल्लत के पिछड़ेपन के कारण प्रथम दृष्टया कुछ भी हों और कितने ही हों, किन्तु उन सब कारणों के मूल में अन्ततोगत्वा एक ही कारण है अर्थात् उम्मत की यह तर्कहीन और मतान्धतापूर्ण धारणा अथवा अन्धविश्वास कि उसका धर्मग्रन्थ, उसका धर्मप्रवर्तक एवं उसकी शरीअत अन्तिम है। विचारणीय है कि अन्तिम कोई वस्तु उसी स्थिति में हो सकती है जब वह पूर्ण हो और उसमें सुधार अथवा परिवर्तन की कोई भी संभावना अथवा आवश्यकता न हो। अन्तिम होने की आस्था में उस के पूर्ण होने की धारणा अनिवार्यरूप से अन्तर्निहित होती है। किसी ऐसी आचार संहिता के विषय में जिसके अनेक आदेश प्रत्यक्षतः एवं निश्चित रूप से अप्रासंगिक हो चुके हों उसके पूर्ण और अन्तिम होने की धारणा अनिवार्य रूप से एक प्रगतिविरोधी मनोवृत्ति को जन्म देगी जो उम्मत या मिल्लत के अन्दर संकीर्णता, सांप्रदायिकता, आतंकवाद, विघटन और पिछड़ेपन का कारण बनेगी और उसके जीवन को नदी के प्रवाहित जल के समान शुद्ध, निर्मल और आरोग्यदायक न बनाकर किसी जलाशय के ठहरे हुये जल के समान मलिन और दुर्गन्धयुक्त कर देगी। निश्चय ही भाग्यशाली होंगे वे लोग जो ऐसे अन्धविश्वास से मुक्ति प्राप्तकर प्रगति एवं उत्कर्ष के पथ पर अग्रसर हों।